

गुजरात के गौरव

भाग १

के एम. एम.

रजनी साहित्य सदन

२६६, चावडी बाजार, दिल्ली

प्रमुख वितरक

नवयुग प्रकाशन दिल्ली

प्रकाशक
रजनी माहित्य मन्दन

मूल्य पाँच रुपया

मुद्रक
गुप्तना प्रिन्टिंग ऐन्टर्प्राइज द्वारा
मूलन प्रग प्रिन्टरी

चत्र सवत ११६६ विक्रमी ।

भोर की वेला में ।

प्राचीन भगु कच्छ (वर्तमान भरोच) में दिनचर्या आरम्भ हो चुकी थी परन्तु नए नगर के काट का द्वार अभी नहीं खोला था । नए नगर में प्रवेश के लिए उरमुख व्यक्ति प्राचीन नगर और काट के बीच आने वाली खाई को पार कर पहाड़ी पर खड़े द्वार खोलने की प्रतीक्षा में थे ।

इसलिए कि भगु कच्छ दो थे एक था प्राचीन लाट राजाघो का पुराना नगर और दूसरा त्रिभुवनपाल सौलकी द्वारा निर्मित गड्डी में बसा नया नगर । नए नगर-कोट और पुराने नगर के बीच नदी के माथे न एक गहरी और चौड़ी खाई निर्मित कर दी थी जो नवीन नगर को लगभग चारों ओर से घेरे हुए थी । इस खाई का मुख समुद्र की गहराई की ओर जहाँ दूर-दूर से आने वाले जहाज उगार डालते थे ।

इसी स्थान के एक ऊँचे टीले पर चार जन साधू खड़े थे । ऐसा लगता था मानो वह कहीं दूर से चल आ रहे हों । इनमें से एक साधू शप तीन से दूर टीले के डाल पर खड़ा हुआ था । साधू की भावु लगभग पच्चीस वर्ष थी । मुख की मुन्दरता आँखों का तेज और चमकत हुए भाव का गौरव असाधारण था । इस यौवन के प्रथम प्रहर में ऐसे मुन्दर पुरुष ने ऐसा प्रसन्न वराम्य भरा जीवन क्यों अपनाया—यह समस्या देखने वाले के लिए समझनी कठिन थी ।

साधू की आँखें विजाल तजस्वी और गहन थीं । उसने कुछ देर गगनचुम्बी गड के बुर्जों की ओर दृष्टा फिर नाव में बैठकर खाई पार करते हुए मनुष्यों का निहारा और फिर मुड़कर त्रिभुवनपाल सौलकी द्वारा निर्मित विशाल और भव्य महादेव सामनाथ के मन्दिर, शिखरों को देखने लगा ।

जब इन सबसे सन्तोष प्राप्त न हुआ तो वह नदी की धोर देखने लगा। जहाँ वह खड़ा था उससे नीचे गौरवशाली छ-कग्या नमना की गम्भीर पतित-पावन तरंगें बाल मूष की किरणों में घिरमती सदब भाव भरी धातुरता से मृगु के इस पवित्र धाम का आलिंगन कर रही थी।

कोई त्रिपालश होता तो उसे धनंत दर्पण रूपी इन तरंगों में भार्या बस के घनेकों उत्थान और पतन प्रतिबिम्बित होते दिखाई पड़ते। इन तरंगों ने धार्यों के नाम से भी धनिभिन्न इतिहासकाल में नागलोक के बोरो को स्नान कराया था। इन तरंगों ने हैहय खेष्ठ सहस्राब्द की प्रचंड भुजाभा शर्ष्य लिया था और हैहयों का यध का करके तुष्टि को प्राप्त परशु को स्वच्छ करके उनकी जामल्लेय की कालाग्नि सदृश्य मुल मुद्रा को धान्त किया था। गमस्त भारत की एकता का सूत्र में धाँपकर बानप्रस्थ धारण किए हुए भगवान कौटिल्य के पातक धोकर इन ही तरंगों ने उनकी आत्मा को शुद्ध किया था।

इन तरंगों ने मादव की जल ग्रीष्म भोजा की सुकुमार तारियों का अग-लालित्य और ग्रीक थोड्याभा का स्नायुबद्ध सौंदर्य देखा था। तिक-दर की यका हुई सेना का विद्रवात मुना था। दहा की दुजय साथ का देखा था और त्रिलोचनपाल के गजराजा का दशन कण से तथा महान सेना पति बाराप का बल देखकर आश्चर्य किया था। इन तरंगों ने लाट देन के स्वतन्त्रता-मूष का डूबते हुए देखा था पाटन के मूलराज सौलकी के पुत्र चामुण्ड की विजयी सना की गव मरी मुरही सुनी थी।

साधू का यह सब सोचने का अवकाश नहीं था नमदा की तरंगें उस बेवस मूष की सुनहरी किरणों से सोमती हुई दिखाई पड़ रही थीं।

वह सा बचल अपनी समस्या पर विचार कर रहा था।

त्रिभुवनपाल की लाट की गुजरात बनाने की राजनीति तथा वह कारण जो उस बरधत ही यहाँ ल घाया था।

धनायास ही उसकी दृष्टि उस जहाज पर जिसने सभी सभी लगर डाला था वही । जहाज से उतरते हुए एक यात्री को उसने दबा और मुख पर सन्तोष का भाव उमर आए । वह सनिक मुस्कराया ।

सम्भवत इसी यात्रा को देखकर उसी साधु का दूसरा साथी निकट घाता हुआ बोला 'भूरी जी मेहता का आँबड़ । इतना कहकर वह युवक साधु का मुख देखकर रुक गया ।

युवक साधु ने मोठे परन्तु उत्तवार का धार जल तीक्ष्ण स्वर में कहा विजयचन्द्र जा ! किसी का नाम सन स कहा साम है ?

विजयचन्द्र ने मेहता का आँबड़ जिन यात्रा को सम्बाधन लिया था—वह मजबूत काठी का युवक यादवा था । उसका कानों का कुन्तल और हाथों का कनक, समझ का—सम्बा भाला तथा पीछ चलन हुए सबक द्वारा लिया हुआ धनुष शीघ्र का साक्षी था । पीछ और भी कई सनिक उसका सामान लेकर आ रहे थे । आसन्न भयवा शिष्ट भाषा में कहें ता भ्रात्रभट न साथ एक काला ठिगना परन्तु मांटा बाह्य भी धन रहा था उसकी त्वचा पक्के काल संगमरमर जसी थी और कपाल पर धन का त्रिपुण्ड्र कान पत्थर के त्रिवर्तिन की स्मृति जागृत करता था । उसके सिर पर कनटोपी तथा कंधे पर कवच था ।

हर-हर भोलानाथ भान्तिर जोत जी मृगुकच्छ दस ही लिया ।

हसकर भ्रात्रभट न कहा महाराज अब तो हमें भ्रमण भ्रमण होना है । हा सन तो फिर मिलिएगा ।

'इसमें चिन्ता की क्या बात है ? विधि का सख होगा ता मित बिना छटकारा नहीं है ? यहाँ से ऊब गया तो सम्मान हो जाऊगा । बहूत हुआ । ईश्वर का कृपा हुई तो अब फिर सारठ नहीं जाना पड़ेगा ।

भ्रात्रभट मुस्कराया मणिभद्र जी अपनी बहन के यहाँ कितने दिन ठहरोगे ?

कितने दिन तक हर-हर भोलानाथ सोमनाथ भगवान की कृपा हो

तो जीवन भर। ब्राह्मण ने घातम-सतोष से कहा—बहन तो बहन ही है। हम एक दूसरे के बिना जीवित कैसे रह सकते हैं ?

घातमभट सोच रहा था कि स्वरूपवान भाई की बहन कसी होगी वह बोला परन्तु घापक बहनोई ?

घातमभट का दृष्टि साधुओं पर पड़ा। फलस्वरूप उसने अपना वाक्य अधूरा ही छोड़ दिया। साधु का मुख पलक मारत ही गम्भीर हो गया और वह घातमभट को इस प्रकार देखने लगा मानो पहचानता हो न हो। ऐसा ही अभिनय घातमभट ने भी किया। उस ब्राह्मण ने यह सब न देखते हुए अपनी तरफ में कहा मेरा बहनोई आहा भगवान भमा बरे। फिर साधु की ओर दृगती से सकेत करते कहा, यह कहाँ से अच्छे मधुन में आ मिले। उसके चेहरे पर हनी खल गई।

उसकी बात पर ध्यान न देकर घातमभट ने साधुओं की नमस्कार करते पूछा महाराज फाटव जब खुलगा ?

मुक्क माधु ने उत्तर देकर प्रश्न किया खुलने ही वाला है तुम कहाँ से आ रहे हो ?

वत्स्यनी ने आ रहा हूँ महाराज जयसिंह देव का भट्ट हूँ और भृगुवच्छ के दुर्गाल के लिए सत्तेज सेजर आया हूँ। महाराज कहीं तो विवरण कर आ रहे हैं ?

हम बटपद्र (बटोदा) से चले हुए हैं। इतना कहकर मुक्क मणिमद्र साधु को सम्बोधित कर बोला प्रियवर तुम्हारा आगमन कहाँ से हुआ है ?

प्रियवर ने हाथ आगमान की छार उठा दिए अरे हम आए हैं यही दूर से।

यह सुनकर सभी हँस पड़े।

घातमभट ने कहा सामनाथ पाटन से पधार रहे हैं मणिमद्र जी यही जान-गी जीव है।

यह सुनकर हसते हुए मणिमद्र ने तरफ़जान उच्चारण किया। 'यारा

संसार ही बस धानन्मय है समझें साधु महाराज । हम तो जहाँ जा पहुँचे
 यहीं पर है । अपने राम तो आनन्द में रहना खाना-पीना मायत्री का
 जाप करना जानते हैं । हमारे बला से चाहे सारी दुनियाँ मर्क मारती रहे ।
 हर हर महानेव ! पधारिए महाराज—जय सोमनाथ । इतना कहकर
 अपने भारी भरकम शरीर को ठेनते हुए मणिमद्र प्राचीन भगुच्छ की
 ओर मुड़े और असाधारण चाल से चल पड़े ।

कुछ क्षण तक धाम्रभट और युवक साधु मौन खड़े रहे । सम्भवतः
 दोनों एक ही बात सोच रहे थे कि परिचय लिया जाए अथवा नही ।
 परन्तु धाम्रभट ने प्रगट में यह वाक्य क' । जाप कहीं ठहरा ?
 दक्कन मूरि महाराज क' उपास्य में और तुम ?
 नगर सेठ के यहाँ । इसना कहकर धाम्रभट ने नमस्कार कर
 युवक साधु से बिना भी ।

२

वहाँ से थोड़ी दूर पर खड़े एक नागरिक से धाम्रभट ने पूछा—
 भाई दुर्गान गढ़ कब खोलेंगे ?
 'कहाँ से जाना हुआ है ?
 वामनस्वामी से । दुर्गान महाराज गढ़ में ही हाथ न ?
 नहीं अब तो वह प्राचीन नगर में रहते हैं ।
 कहीं ?
 साम्बा बहस्पति के बाड़े में ।
 कितनी दूर है ?
 उस रास्ते से चल जाओ । दायें हाथ थोक पड़ेगा वहाँ पूछ लना,
 कोई भी बता देगा ।
 और नगर सेठ कहीं रहते हैं ?

‘वह धरा दूर रहते हैं—पट्टनी बीच में। मैं वहीं जा रहा हूँ।’
उस नागरिक ने कहा।

‘तृपा करके मेरे आदमियों को यहाँ तक पहुँचा देना—हमीर।’
आक्रमण ने अपने आदमी को सम्बोधित किया तू इनके साथ घसा जा,
और सेठ तेजपाल को मेरे भाने की मूचना दे। मैं दुग्पाल से मिसनर
भाता हूँ।

आज्ञा पाकर उसके अनुचर नागरिक के साथ चले गए। राजा मात्र
के लिए एकान्त पाकर आक्रमण के मन की अभिमाया भुल पर प्रगट
हुई। उसने जाते हुए अपने अनुचरों को निहारा।

बचपन में ही उसका जीवन रसमय था। सीमावर्ती राजा की
भाति उस में धाय का साह-ध्वार मिला था। शिक्षा मिली थी और अब
वह पाँच वर्षों से सम्मानित घोड़ा की प्रतिष्ठा से युद्ध में भी भाग
लेने लगा था—परन्तु उसका रसिक स्वभाव शान्ति का ध्यान लेने के
लिए आतुर था। बल्मीक करती हुई नमदा की सहुरें गगनचम्बी मन्दिर
के शिखर प्रभात के धानन्द में डूबा हुआ नगर और प्रियतमा।
तेजपाल नेठ की पुत्री उसकी भावी पत्नी थी—उस प्रियतमा से साक्षात्
की आगा ने मन में कामल भावनाओं का ज्वार भर दिया। परन्तु
कठम्य महाराज के आदेश और पिता की आज्ञा ने भावनाओं का ज्वार
राक दिया। एक असमय निद्राम सहर वह शयन की ओर बढ़ा।

उत्तर तजस्वी मुख—आधुपणी से सज्जन शरीर तथा प्रभावशाली
व्यक्तित्व से प्रभावित हुआ सोनने वाले व्यापारी उसे पीछे मुड़ मुड़
कर देता रहे थे परन्तु उन पर दृष्टि न आकर आक्रमण साम्रा
ज्यहस्ति का बाड़ा पूछता हुआ भाग बढ़ा।

रिवाज के अनुसार उसे शहरगाह पर ठहरना चाहिए था अपना
आत्मी भ्रजकर दुग्पाल को अपने आगमन की मूचना देनी चाहिए थी,
और सब पावकी में बटकर नगर प्रवेश करना चाहिए था। जमा करना
उसकी तथा उसके पिता की प्रतिष्ठा के अनुकूल था। परन्तु आक्रमण

स्वभाव से सरस और हृदय से उमगी जीव था। टीमटाम उसे पसन्द नहीं थी। चलबत्ता उसके स्वभाव का परिणाम यह हुआ कि चलते चलते वह इस अपरिचित नगर का माग भूल गया।

इस समय वह एक ब्राह्मण मुहल्ले में था। साधारण घरों की बस्ती थी। एक घर से बेगोन्वार का स्वर सुनाई दे रहा था। यहीं कही था साम्बा बहस्पति का बाड़ा। भामभट को आश्चर्य हुआ क्या इसी बस्ती में लाट का दुजय थोड़ा भृशकण्ठ का दुगपाम महाराज त्रिभुवन पाम का परममित्र किन्तु उसके प्रतापी मन्त्री पिता का शत्रु रहता है। वह निरस्वार से तनिक मुस्कराया वहाँ उसके पिता का पाटन का महल रणवती और सम्मात के भव्य प्रासाद और कहीं इस सत्ताधीन का भोपड़ा? घासपास के भावास खल हुए थे परन्तु कोई व्यक्ति दिखाई न पड़ा। केवल भावामों के द्वारों पर बधी हुई गायें नीरस भाँसों से भागन्तुज को निहार रही थीं। वह सोच रहा था दुगनाल का ठिकाना ढूँढा जाए तो किससे ?

घष्टाना से प्रतीत होता था कि पाम ही महादेव का मन्दिर है। वहाँ कोई होगा यह सोचकर वह उसी ओर बना।

जस ही वह मन्दिर की ओर बढ़ा ठिठककर खड़ा रह गया—उसकी दृष्टि मन्दिर के द्वार से उसी ओर जाती हुई एक स्त्री पर पड़ी। आश्चर्य से उसकी आँखें खुली रह गईं। उसे वह स्त्री नहीं देवांगना प्रतीत हुई। प्रत्येक भगिमा में आकषण था प्रत्येक भग में लानिरय था पावों की प्रगुठे से निकलती हुई कमल की बंदी सदृश्य पर की उगलियों से लेकर साय के फन सदृश्य केसा की मध्यता तक अपूर्व और भ्रमभूत सौन्दर्य था। उस स्त्री की आँखों में मेनका जसा मद था और ऋषिकर्षों का मन सुमाने शाली माहकता थी। युवक के हृदय को इस सिद्ध सौन्दर्य ने एक बार मूर्छित कर दिया।

वह उपा की भाँति उज्ज्वलता का प्रसार करती हुई निरुद्ध भाई। भामभट की आँखें मुग्ध हो गईं। केवल एक कदम दूर वह रुकी आँखों

‘वह जरा दूर रहते हैं—पट्टनी चौक में। मैं वहीं जा रहा हूँ।
उस नागरिक ने कहा।

‘कृपा करके मेरे आदमियों को वहाँ तक पहुँचा देना—हमीर !
आम्रमत ने अपने आदमी को सम्बोधित किया तब इनके साथ चला जा
और सेठ तेजपाल को मेरे आने की सूचना दे। मैं दुर्गपाल से मिलकर
आता हूँ।

आज्ञा पाकर उसके अनुचर नागरिक के साथ चले गए। क्षण मात्र
के लिए एकान्त पाकर आम्रमत के मन की अभिलाषा मुख पर प्रगट
हुई। उसने जाते हुए अपने अनुचरों को निहाया।

बचपन से ही उसका जीवन रसमय था। सौभाग्यशाली बालक की
भाँति उसे माँ बाप का साङ्ग-म्यार मिला था शिक्षा मिली थी और जब
वह पाँच वर्षों से सम्मानित योद्धा की प्रतिष्ठा से युद्ध में भी भाग
लेने लगा था—परन्तु उसका रसिक स्वभाव शान्ति का आनन्द लेने के
लिए आतुर था। कलोल करती हुई नमदा की महर्षि गगनचम्बी मन्दिर
के गिस्तर प्रभाव के आनन्द में डूबा हुआ नगर और प्रियतमा।

जपाल सेठ की पुत्री उसकी भावी पत्नी थी—उस प्रियतमा से साक्षात्
आशा ने मन में कोमल भावनाओं का ज्वार भर दिया। परन्तु
आशा ने मन में कोमल भावनाओं का ज्वार भर दिया। परन्तु
व्य महाराज के आदेश और पिता की आज्ञा ने भावनाओं का ज्वार
दिया। एक असमय निश्वास लेकर वह गाँव की ओर बढ़ा।

उसके तेजस्वी मुख—आभूषणों से सज्जित धरीर तथा प्रभावशाली
तत्त्व से प्रभावित दूकान खोलने वाले व्यापारी उसे पीछे मुड़-मुड़
कर रहे थे परन्तु उन पर दुष्टि न डालकर आम्रमत साम्ना
का बाड़ा पूछता हुआ आगे बढ़ा।

राज के अनुसार उस बन्दरगाह पर ठहरना चाहिए था अपना
मजकूर दुर्गपाल को अपने आगमन की सूचना देनी चाहिए थी
पालकी में बैठकर नगर प्रवेश करना चाहिए था। ऐसा करना
था उसके पिता की प्रतिष्ठा से अनुकूल था। परन्तु आम्रमत

स्वभाव से सरल और हृदय से उमगी जीव था। टीमटाम उसे पसन्द नहीं थी। चलबत्ता उसके स्वभाव का परिणाम यह हुआ कि चलते चलते वह इस अपरिचित नगर का माग भूस गया।

इस समय वह एक बाह्यण मुहल्ल में था। साधारण घरों की बस्ती थी। एक घर से बेनेञ्चार का स्वर सुनाई दे रहा था। यही कहीं या साम्बा बहस्पति का बाढा। भामभट को आश्चय हुआ क्या इसी बस्ती में जाट का दुजय योद्धा भृगुकञ्ठ का दुगपाल महाराज त्रिभुवन पाल का परममित्र किंतु उसका प्रतापी मन्त्री पिता का घबू रहता है। वह तिरस्कार से तनिक मुस्कराया कहीं उसने पिता का पाटन का महल कणवती और खम्मात के भग्ग्य प्रासाद और कहीं इस सत्तापीन का भोपड़ा ? आसपास के आवास खुले हुए थे परन्तु कोई व्यक्ति दिखाई न पड़ा। केवल आवासों के द्वारों पर बधी हुई गायें नीरस आँखों से आगन्तुक को निहार रही थीं। वह सोच रहा था दुगपाल का ठिकाना पूछा जाए तो किससे ?

घण्टानाद से प्रतीत होता था कि पास ही महादेव का मन्दिर है। वहा कोई होगा यह सोचकर वह उसी ओर बढ़ा।

जैसे ही वह मन्दिर की ओर बढ़ा ठिठककर खड़ा रह गया—उसकी दृष्टि मन्दिर के द्वार से उसी ओर आती हुई एक स्त्री पर पड़ी। आश्चय से उसकी आँखें खुली रह गईं। उसे वह स्त्री नहीं देवांगना प्रतीत हुई। प्रत्येक भगिमा में आकषण था प्रत्येक भग में लालित्य था पार्वी की भ्रगूटे से निकलती हुई कमल की डडी सदृश्य पर की उगलियों से लेकर साप के फल सदृश्य बेशो की भग्ग्यता तक अपूर्व और अद्भुत सौन्दर्य था। उस स्त्री की आँखों में मेनका जैसा मद था और ऋषिदरो का मन सभाने वाली मोहकता थी। मुक्क क हृदय को इस शिष्ट सौन्दर्य ने एक बार मूर्छित कर दिया।

वह उपा की भाँति उल्लसता का प्रसार करती हुई निकट आई। भामभट की आँखें भुग्ग्य हो गईं। केवल एक कदम दूर वह रही आँखों

में मलमल हुए आरव्य सहित उसने पूछा, किससे काम है ?

युवक क कानों में गीध्व संगीत गुँजा । उसने शिथिलता धनुमन् की धीरे एक हाथ पीछे करके दीवार का सहारा लिया ।

युवती युवक की घबराहट देखकर मुस्कराई । युवक का धवेत हृदय उसका हास्य के प्रभाव से जाश्रुत हुमा में साम्बा महस्पति का ।

हाँ ! वस इतना कहकर युवती पास वाले भकान में जाकर अदृश्य हो गई ।

तब धामभट को ऐसा लगा जैसे पृथ्वी पर प्रलयकास का प्रघंकार सतर भाया हो । बन्द होते हुए द्वार में घटव्य होती हुई सुन्दरी मानो उसका हृदय साथ लेती गई ।

शरीर की सुष बुध न रही । वह कहाँ है किस लिए यहाँ खड़ा है—किस काम के लिए वह भ्रुकृच्छ्र भाया था—वह सब भूल गया । उस ऐसा धनुमन् हुमा कि उसका हृदय उसका जीवन धीरे उसकी समस्त आगामों सब उस दरवाजे के पीछे जाकर छुप गई हैं ।

किस पूछते हो भाई ? एक आवाज सुनकर वह चौंका । पास ही के घर से एक विद्यार्थी हाथ में आचमनी पात्र लिए हुए निकला । उसे ऐसा लगा कि वह कुछ पूछ रहा है ।

ऐं । बड़ी कठिनता से अपने मस्तिष्क को स्थिर करके उसने विद्यार्थी की ओर देखा ।

ऐं क्या किसीसे मिलना है ?

यही प्रश्न पहले भी पूछा गया था उस स्वर की मीठी स्मृति से विमोह होकर धामभट ने कहा—दुःखपास से ।

‘मरे दुर्गपाल महाराज से मिलना है वह तो उस तरफ रहते हैं ।

तो क्या यह साम्बा महस्पति का भाड़ा नहीं है ?’

यह पुराना वाक्य है । महाराज तो नए बाड़े में रहते हैं । भाइए माग बताता हूँ ।

परन्तु मन तो बन्द द्वार में घटका था । पाँव नहीं उठे । संकेत से

उस द्वार को दिखाकर पूछा—यह घर किसका है ?

यह तो पाठशाळा है क्यों ?

कुछ नहीं बसे ही पूछ लिया था ।

३

भामनमत आत्म विस्मृत सा विद्यार्थी के पीछ पीछ चल गया । थोड़ी दूर चलने के बाद साम्बा बृहस्पति का नवीन बंटा आ गया ।

वहाँ घर छोटे ही थे चलबस्ता नए थे वेदपाठ के उच्चारण के स्थान पर भामनमत ने वहाँ घोड़ों के हिनहिनाने की ध्वनि सुनी । वहाँ के घरा के आंगन में जुगाली करती गायें नहीं थी उनका स्थान पर यहाँ राजकमचारियों की चहल-पहल थी ।

भाप उस रास्ते से आकर जाइएगा वहाँ महाराज मिलेंगे । इतना कहकर विद्यार्थी लौट गया ।

परन्तु भागे चलने का उत्साह उसमें नहीं था । एकबारगी वह फिर चौंका जब एक सैनिक ने आकर उससे पूछा—भट्ट जी किमीसे मिलना है ?

मुझे मुझे दुर्गपाल महाशय से मिलना है ।

अन्दर आइए । नम्रवाणी में भट्ट ने कहा ।

उस द्वार के अन्दर एक लिंगा-मुता चबूतरा था और उस पर बैठ हुए कितने ही आदमी आर्त्तालाप में निमग्न थे । कुछ सैनिक सुभट भी थे ।

यह सैनिक (भट्ट) भामनमत सहित एक प्रोढ़ सैनिक के निकट पहुँचा और पूछा रत्नमल जी महाराज क्या कर रहे हैं ?

सामनाथ पाटन से एक ब्राह्मण आया है उससे बातें कर रहे हैं ।

सोमनाथ पाटन का नाम सुनकर भ्रात्रभट में चेतना जगी । पल मात्र में उसके निश्चेतन हृदय में चेतना घा गई ।

रुद्रमल ने पूछा 'यह भटजी कौन हैं ? साथ ही उसने भ्रात्रभट को नमस्कार किया ।

मुझे दुर्गपाल महाराज से मिलना है ।

कहाँ से पधारे हैं ?

'बंयली से । महाराज की आज्ञानुसार ।

महाराज आ गए क्या ?

हाँ महाराज मीनसदेवी—सब आ पहुँचे हैं ।

आपका 'गम' नाम ?

भ्रात्रभट ! दुर्गपाल महाराज को कृपया धुबित करें कि उदा मेहता का पुत्र भ्रात्रभट महाराज का सदेश लेकर आया है ।

उदा मेहता मंत्री महाराज ! क्षणमात्र के लिए रुद्रमल ने शका से भ्रात्रभट को निहारा । परन्तु दूसरे क्षण ही उसकी शका विषवास में परिणित हो गई । भ्रात्रभट का रूढ़ भामूपण सस्कारी और भाव्यक व्यक्तित्व उसके कथन की सत्यता का प्रमाण था । मान प्रदर्शित करते हुए वह बोला 'पधारिए पधारिए ! इस प्रकार अकेले ही क्यों कब आना हुआ ?

मैं सीधा बदरगाह से आ रहा हूँ । साथ के आदमियों की यहाँ कुछ उपयोगिता न थी इसलिए उन्हें नगर सेठ के यहाँ भेज दिया है ।

आइए विराजिए ! मैं अभी स्वयम् महाराज को आपके आगमन की सूचना देता हूँ । एक पल का भी विमम्ब न होगा ।

भ्रात्रभट पास ही खड़े गए तकिए के सहारे बैठ गया और रुद्रमल धीघ्रता से अन्दर चला गया ।

इससे पूर्व कि वह फिर उसी सुन्दरी की स्मृति में खो जाए रुद्रमल लौट आया और बोला 'पधारिए भट जी !'

राजकीय जीवन ! एक अग्रिम निश्वास छोड़कर भ्रात्रभट उठा

भीर मन को सावधान होने की सूचना दी। मशुकच्छ के इस दुर्गपाल के शौर्य की उसने बड़े-बड़े योद्धाओं के मुख से सुनी थी। उसका कुशल राजनीति के विषय में उसने अपने पिता जैसे राजनीतिज्ञ से सावधान रहने का आदेश पाया था। सम्पूर्ण देश में प्रसिद्ध महामाय मुजाल जैसे महापुरुष भी इस दुर्गपाल की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते थे और त्रिभुवन को पग में करन वाला स्वयम् जयसिंह देव महाराज भी इसका नाम लेते समय किञ्चित् मयभीत हो जाते थे।

उस मनुष्य के पास यह अनुभवहीन युवक आया था। ऐसे काम के लिए जिसे करते जाने की बात से वहाँ के बड़े-बड़े महारथी भी कांप उठे थे। उसने अपने क्षेत्र को रवाने का यत्न किया और सकल भी हुआ। वह महामात्य उग्र मेहता का पुत्र था—कूटनीतिज्ञों से भेंट और समागम उसकी नियमित चर्या थी।

जिस क्षण में उसने प्रवण किया वही खूब प्रकाश था और इससे पूर्व की वह उस प्रकाश में सामने ही भूने पर बैठ व्यक्ति की भली भाँति देख सके वह व्यक्ति भूने से उतरकर प्राग बढ़ा और आग्रमत के स्नेह से दोनों हाथ पकड़कर भक्त्यु पूर्ण वाणी में कहा मरे उग्र मेहता का आबदा ?

इस वाक्य का कहने वाले का चेहरा वह भली भाँति देख भी न पाया था कि उससे पूर्व ही उड़की दृष्टि लक्ष्य के पिछने द्वार की ओर जा पड़ी। वही परिचित एही-नेवन एही देखकर उसने मन पर छा जाने वाली उस आभात सुन्दरी को पहचान लिया। परन्तु दूसरे ही क्षण उसने अपने आपकी सम्भालने हुए अपने स्वागत करने वाले की ओर ध्यान दिया।

कपे पर छूटी हुई मुक्त गिद्धा से सुशोभित मुख खूब लम्बा और भरा हुआ बदन छोटी-छोटी मूँछें गुरु महाराज की सी नुकीली नाक चमकते हुए चबस नेत्र पल मात्र में आग्रमत ने उस व्यक्ति की

महाराज को भजा ।

यह तो मुझे मालूम है । खेंगार बड़ा विनोदी है । परन्तु महाराज ने सायले से धानस्पसी तक तो जीत ही लिया है—भव कार की क्या जरूरत है ?

महाराज ने प्रतिज्ञा की है कि इस महीने के अंत तक या तो जूनागढ़ नहीं या फिर पाटन नहीं ।

काव मुस्कराया, महता मिले थे ?

हां उन्होंने भी बहलवाया है कि श्रीमान् ने पन्द्रह वष पहले जा बचन महाराज को दिया था उसका पालन करें ।

क्या ?

यही कि अगर महाराज घाणा दें तो आप जाकर खेंगार की नीचा दिलायें ।

वस मोर्चे का क्या हान है ?

जिम दिन मैं चला हूँ उसी दिन खेंगार ने छपा मारा था । हमारे पांच सौ आदमी मारे गए । परशुराम जी बाल-बाल बच ।

यह बात है अच्छा और कुछ कुछ सेना साथ भगाई है ?

नहीं भुजास महता ने कहा है कि आप अकेले ही आरें—सेना की आवश्यकता नहीं है और लीलादेवी ।

ऐं ? काव चौंका ।

‘लीलादेवी ने भी सदिश भजा है ।

क्या ?

कि यदि आप नहीं आण तो वह स्वयम् भृशकच्छ आयेंगी ?

किसलिए ?

यह तो मैं नहीं कह सकता । जब मैं उनसे सम्मुख पहुँचा तो वह बहुत ही चिन्तातुर थी ।

लीलादेवी साट के सोलहियों की पुष्प यन्त्र की साट को गुजरात

में भित्ताने की राजनविक आवश्यकता के हेतु स्वयं काक ने लीला का विवाह जयसिंह देव महाराज के साथ कराया था।

‘सगता है मेरे प्रति भाव कुछ बढ़ गया है ?

भाव कभी कम नहीं था। यह कहकर आग्रभट न काक को सम्मानपूर्ण दृष्टि से देखा।

तत्काल को धार उसी तीक्ष्ण दृष्टि से काक ने आग्रभट को देखा तुम्हारा सामान कहाँ है ?

‘मने अपने आदिमियों को नगर के सड़क यहाँ भज दिया है।

अच्छा ठीक बात है। तुम तो उसके जमाई होने बात हो न ? अच्छा जाओ मैं जान की तयारी करता हूँ। रत्नमल आग्रभट महता के लिए पालकी भगाओ। यह आदेश देकर काक ने आग्रभट से शिदा ली।

मन में एक ही प्रश्न था ‘क्या इस आदेश में उन्ना मेहता की आलाची है ?

इसी गम्भीर सोच विचार में व्यस्त अग्रभट का दुःखाल घीमे घीमे चलता हुआ अन्दर गया।

४

मजरी से मिलने मणिमदर अन्दर पहुँचे।

मजरी से मणिमदर का नाता यह था कि वह उनक गुरु की शौहिनी था। एक बार वह किसी कारण से जूनागढ़ घाई की तब इस शत एव सरस जीवन में एक छलबली सी मच गई थी। विवाहिता स्त्री पर दृष्टि न डालना धर्म का एक उचित सिद्धान्त है और गुरु की पुत्री की पुत्री शिष्य के लिए भगवती के समान था—यह शास्त्र बधन है। परन्तु मन से कौन जीते। मजरी को देखकर इन विप्रवर के हृदय में विचित्र

भावनाओं का संचार हुआ । जीवन रसमय लगने लगा भोग एवं मोक्ष^१ से मन भर गया । सोते जागते हर समय गुरु-दीहित्री के दर्शनों की इच्छा मन में रहने लगी ।

तब वह जैसे भाई थी वैसे ही अपने पति के साथ लौट गई । जिस प्रकार मेघा से आच्छादित आकाश के तिमिर में से ध्रुव तारा चमके उस प्रकार मणिभद्र के भांग और भूखग्रस्त जीवन में वह चमकती ही रही लोग न हो सकी ।

वह निशि जिन भूगुच्छ जाने क लिए तड़पते थे । नींद में बस भूगुच्छ के ही स्वप्न घाते थे । परन्तु बाधा यह थी कि जजमान सब जूनागढ़ में ही थे और और कभी जूनागढ़ के प्रतिरिक्त कहीं और न गए थे न रहे थे—इसलिए विदेश के नाम से उन्हें भय लगता था । दिन मास और वर्ष—फिर वष बीत गए । मजरी क मुख द्यन प्राप्त करक मोक्ष प्राप्त करे या जूनागढ़ रह्य भोज का विलास भोगें ? इन दो लक्ष्य के बीच फसी आह्वान की मुमुक्षु आत्मा लक्ष्यो के विलास में ही आनन्दमय हो गई ।

इस प्रकार पन्द्रह वष बीते ।

पन्द्रह वष बाद जूनागढ़ के खेंगार की रानी ने मणिभद्र को भूगुच्छ जाने की आज्ञा दी । जिस प्रकार ध्रुव को सौतेली माँ के कटु शूल मुनकर ईश्वर प्राप्ति का मार्ग दिखाई दिया था उसी प्रकार यह प्राप्ति पाकर उसे भी मोक्ष का भाग प्राप्त हो गया । उनके गोल-मटोल शरीर को शोभा न दे एसी शीघ्रता से रानी की आज्ञा धिर माघ पर बसाकर उन्होंने जूनागढ़ छोड़कर भूगुच्छ की यात्रा की ।

घर के भीतरी खण्ड में गज साग वर्षीय कन्या एक शिशु का पालना तीक्ष्णर उसे झुसा रही थी । मणिभद्र ने पहले उसे देखा न था परन्तु फेर भी यह पहचानने में असुविधा हुई । कसौ ने फूलका रूप धारण किया । कन्या की आकृति उनके हृदय में अकित गुरु-दीहित्री के चित्र जमी थी—वही नाक वही आँखें—अन्तर था तनिक रंग का । मजरी खूब गोरी

धी धीर बन्धा तनिक सावली । हृषीकिरेक से मणिमद्र ने सम्बोधित किया बेगी तरी माँ कहाँ है ?

कोन ? लट्का चौकी ।

मैं मैं हूँ तेरा मामा । मणिमद्र हुँमा धीर अपने स्वरूप से भयभीत बन्धा का उठाकर हुँमा से लगा लिया ।

घर भाई जाग जाएगा ।

‘अच्छा तो यह तरा भाई है । मणिमद्र न बन्धा का छोड़कर पालन में से बाछक को उठा लिया ।

बड़यो रे राजा बेग । इसका क्या नाम है बेग ?

‘इसका नाम है बसाई । इस तबे जैसे इयाम बण मामा से भयभीत सी बन्धा घन घन पोछे हटती हुई बोली ।

‘बया ?

‘बसाई ।

इस विचित्र नाम को मस्तिष्क में बसाने का प्रयत्न करता हुमा मणिमद्र धीरे से बोला ‘बी—बी—बा—स—रि ।

इस नाम को धारण करने वाले शिशु में बहून जितना धीरज न था । आभी बाँलें खानकर उसने इन नए मामा को निहारत और उसमें पूव परिचय का कोई चिन्ह न पाकर ऊँची आवाज में रो पडा ।

बातावरण में आनन्द भरकर उमुक्त हास्य से धरन ही हाथ की मोथा बना मणिमद्र बोचन लगा—उल्लू—ए—भाई रे—

वार्तालाप क भाग्य बड़न से पूव ही अन्तर से आवाज आई—महाभेता क्या हुमा ?

मणिमद्र भूमा और पन्द्रह वर्ष पश्चात् मजरी को देखा । बहून ?

मजरी पन्स क समान ही तेजस्वी एवं मुन्दर थी । पन्द्रह वर्षों क प्रताप से उसकी रेशाएँ मर भाई थीं उसक मुख का सौन्दर्य पूर्णिमा क अन्द्रमा क समान सम्पूर्ण हो चुका था और उसके गव नरे ननों से अमृत की वर्षा हो रही थी ।

यह मणिमद्री को देखकर विस्मित हो गई किन्तु उसने घूमने पर वह उसे पहचान गई ।

कौन ? भाई मणिमद्रीजी ?

हाँ मैं ही मैं ही, बहन मैं ही । इतना कहकर अन्दी से मणिमद्री ने बच्चे को मजरी के हाथों में दे दिया ।

बठो भाई ।' मजरी पाट बिछाने लगी किन्तु मणिमद्रीजी तो मान के मूक न थे ।

बहन रहने भी दे । हम तो यह बटे ।' और मणिमद्रीजी पाँव पर पाँव चढ़ाकर बैठ गए ।

'भामो बेटा मेरे पास ।

शालिका तो अब भी मजरी की छाड़ी के पीछे छिपी आश्चर्य में भरकर इस नवामन्तुक भामा को देख रही थी ।

वह तो नहीं भायेगा भभी तुम्हें पहचानता जो नहीं है । सब लोग भण्डे तो हैं ?

'कुछन कसी ?' हर भोलाभाथ ! गुनागड़ पर तो ममराज की छाया पड़ रही है बहन । मणिमद्री ने दुःखित होकर गर्दन हिलाते हुए कहा सैंगार महाराज को भारी ओर से घेर रखा है । बस जो भोलाभाथ करे वही मही ।

तो फिर यहीं बस आते न ।

मन तो प्रतिदिन यही कहता था परन्तु क्या करूँ ? जजमानवृत्ति ही जो ठहरी और युद्ध के कारण तेरहवों ओर आद का भी कोई पार नहीं । सो यह भट धी धी जा गए —

क्या मणिमद्रीजी ! बैठ कर ली बहन से ?' काक ने पूछा ।

'हाँ । कहकर मणिमद्री ने कनटोपी उतार कर नीचे रख दी ।

मजरी मुझे सुरत जाना होगा ।'

कहाँ ?'

'बैधमी ।'

‘क्यों ?

काक ने चुनचाप महाराज का आज़्ञात्र बड़ा किया । मजरी ने उसे पड़ा और सोया किया । मूय की नांति मणिमद्र काक से मजरा और मजरी से काक की आर दखने लगा और बड़ी धीध्रता से प्रन्न किया ।

आप बचना बा रहे हैं ?

सकिक कठोर होकर काक ने इस छिठोर बाह्या का और दया । दूजरोँ का बाउ में बाउ मिलान की मणिमद्र की आदत उस अच्छी न लगी ।

‘क्यों ? स्वर में उपेना थी ।

‘तब तो बस हो चुका ?

‘क्या हा चुका ?

मैं भा बुनान के लिए हा आया हूँ मजराज । मणिमद्र ने कहा । एकाएक उस कुछ ध्यान आया और वह नय से चारों ओर दखन लगा ।

‘यहाँ कोई नहीं मुनेगा किमने मेजा है तुम्हें ?

‘राजकृषी ने । घाम से वह बोला ।

राजक । चक्रित होकर काक बोनते-बोपत रुक गया । क्या क्या ?

‘उन्होंने आपका जूनाङ्ग बुनाया है ।

पदप कर काक पीछे हटा—‘हे ?

‘हाँ सब कुछ मुनाठा है ।

काक ने आँखों-ही आँखों में स्वीकृति दी ।

मुझे देवी ने चुनचाप बुलवा मेजा । जर करने के पचाव म ब्रह्म-नात्र का मोठा हाउ हुए भी महन में गया जब पहुँचा ता महाराज और देवा किसी बात पर भगव रहे थे । महाराज की आँखें लान हो रही थी और दबी की आँखें सजन थी । हर नातानाप । मैं तो ऐसा धवराया कि बस । और फिर भग भी तो नहीं पी थी ।

मन्ठा फिर ? काक ने अघारता से कहा ।

महाराज जोधित होकर चले गये और सब परिचारिका मुझे घादर ले गई। मैं तो धरधर जाँप रहा था। हर भोलानाथ ! मुझसे देवी ने पूछा—तुम्हारा ही नाम मणिभद्र शुक्ल है न ? मैंने उत्तर दिया—हाँ। जगन्नाथ भावाय के शिष्य हो न ? देवी ने प्रश्न किया। हाँ देवी। मैंने उत्तर दिया। उनकी नातिन के पति से परिचित हो ? उन्होंने पूछा। मुझे हसी आ गई। हर भोलानाथ ! मैं मला अपने बहनोई को न पहचानूँ।

फिर ? काक ने बात आगे बढ़ाने का मकेस किया।

मैंने हाँ कही। देवी ने कहा—महाराज—मुझे और महाराज ! महाराज ! क्यों है न आश्चर्य की बात। वह बोली—तुम चुरचाप उनके पास जा सकोगे ? मैं तो भाई पबरा गया। हर भोलानाथ ! जूनागढ़ का ब्राह्मण भयुक्कच्छ कैसे जाय ? सबल जी ! इतना सा काम करदो। यदि मैं सारथ की रानी रही तो जम भन तुम्हारा उपकार न भूलूँगी। इतना कहते कहते देवी की भाँखों से धाँपू भरने लगे। हर भोलानाथ ! मुझे रुलाई आ गई। मैंने कहा—मेरे प्राण तक धरिष्ठ हूँ। हर भोलानाथ ! इतना कह भोले ब्राह्मण ने अरुनी भाँखों के भाँसू पोंछने का उपक्रम करके काक की ओर देखा। काक की भाँखें स्थिर थी। भाँख की पलक ही से उसने मणिभद्र की बात पूरी करने को कहा। मंजरी की भाँखें भी गीली हो गई। गला साफ कर मणिभद्र ने फिर कहना प्रारम्भ किया।

देवी ने कहा—शुक्ल जी ! शीघ्र ही प्रयास होकर भयुक्कच्छ जाओ। वहाँ जाकर काकभट से मिलकर एकांत में कहना।

क्या ?

काकभट जी ! देवी ने कहसबाया है। तुमने भुझे अपनी कहत बनाया था। एक समय तुमने मेरी ओर अनेक बार मेरे 'रा' की भी साध रखी थी। आज तुम्हारे सिवा मेरा ओर कोई सहारा नहीं है मतएव जहाँ भी हो शीघ्र मेरे पास चले आओ। इसके बाद देवी ने

मेरे साथ एक सामंजस्य कर लिया। वह मुझे प्रभास तक छोड़ गया और फिर मैं यहाँ तक आया।

मंजरी ने काक की ओर देखा। काक विचार-मग्न था। दोनों में से कोई कुछ बोला नहीं। मणिमद सन्नत गया कि वहाँ से अब उसका जाना ही उचित है। अतः वह उठ खड़ा हुआ।

‘और कुछ?’ काक ने पूछा।

‘नहीं—’

‘क्या?’

‘अन्त में देवी ने कहा था— मैं पाटन से द्रोह नहीं करना चाहती।’

‘मैं दूँगी ॥ किस प्रकार भेंट कर सकता हूँ?’

‘प्रभास के निकट चोखाड़ है न जानते हो?’

‘हाँ।’

‘वहाँ मोती महीर नामक व्यक्ति रहता है। उनसे कहना कि मैं मणिमद तुम्हारे का आदमी हूँ वह सब प्रबल ठीक कर देगा।’

‘मच्छी बात है तुम जाकर स्नान-संध्या से निपट लो।’

इतना कहकर काक ने मणिमद को बिदा किया।

५

मणिमद के जाने के बाद मंजरी ने गिर की पुत्री की गोश में देकर उसे बाहर भेज दिया और स्वयं काक के पास आकर उसके बोलने की राह देखती हुई गयी हो गई।

‘मंजरी! लगता है दाल में कुछ कामा भ्रमण है।’

‘मुझे भी ऐसा ही लगता है।’

‘नहीं तो एक ही साथ तीनों की काक की याद नहीं आती।’

‘ठीकसही कौन?’

लीला देवी ।

मजरी हस पड़ी । उसने विनोद में काक के सामने घाँखें गचा कर कहा— अच्छा उन्होंने भी बुलावा भेजा है ?

काक भी हँसा—‘हाँ भ्रात्रमट संदेश साया है । तुम्हें लीला देवी से ईर्ष्या होती है क्या !’

‘तुम्हें ? ईर्ष्या करना है तो लीला देवी करे कि उसे काक न मिला । मला मैं क्यों ईर्ष्या करूँ । गव से मजरी ने कहा ।

काक ने घोठों पर उगली रखते हुए कहा— इस तरह पागलों की सी बात न कर । कोई सुन लेगा । इन्होंने भी मुझे इसी समय बुलाया है । इसमें कोई रहस्य अवश्य है । काक ने गम्भीर होकर कहा ।

क्या हो सकता है । कुछ सोचा ?

यही तो समझ नहीं आ रहा है । दूसरी बातें तो कुछ-कुछ समझ में आती हैं ।

वह क्या ?

जयसिंहदेव महाराज को जूनागढ़ जीतना है इसलिए काक की आवश्यकता आ पड़ी और उदा महता को भूयुक्त चाहिए इसलिए मुझे यहाँ से हटाना है ।

उदा— चौंककर मजरी ने पूछा । पहले उग्रा द्वारा दिये गए दुस्त्रों की स्मृति से उसके माथे में बल पड़ गए ।

हाँ तभी उसने लड़के भ्रात्रमट के साथ यह घाता पत्र भेजा है । मेरे स्थान पर वही दुर्गपाल बनेगा ।

हूँ !’ मजरी के चेहरे का रंग सफेद पड़न लगा और उसकी वाणी काँपने लगी ।

चिन्ता की कोई बात नहीं । ये सबका तो बेचारा अच्छा है— खुटकी में पिस जाय एमा ! भूयुक्त में उससे कुछ होना-जाना नहीं है ।

‘और वहाँ तुमको—

मुझे क्या हो सकता है ? गर्व से काव हँस दिया । मेरी उपयोगिता सभी जानते हैं । धीरे धीरे सीला देवी त्रिभुवनपाल महाराज के होन कोई भरा घाल बाँना भी नहीं कर सकता । फिर एतने धर्मों में क्या मैं निराल हो गया हूँ ? अकेले के हाथों न कितनों के छत्रों के छुटा दिये ये वह नया भूल गई ? बहकर काक ने मजरी के गाल पर टकोर की । मजरी ने उसका हाथ लेकर दबा दिया कुछ देर तक दोनों नहीं बोले केवल दोनों के हृदय में आपस में संवाद चलता रहा ।

धीरे मैं तीसरा बुलावा—?

यही सबसे अधिक पेश में डालता है । राणक देवी को मेरी सहायता की क्या आवश्यकता आ पड़ी ? यही बात समझ में नहीं आती । मेरी स्थिति तनिक बेजग हो जायगी ।

लेकिन उससे भेंट बिना कोई चारा नहीं है क्या ?

भेंट अवश्य करूँगा । फिर जो होगा देखा जायेगा । भव तू मेरे प्रस्थान की तयारी कर । मैं अब जाने ठीक कर लूँ ।

मजरी ने स्नेह से काक के हाथ पर हाथ रख लिया और उसकी ओर देखने लगी ।

क्यों क्या मेरा जाना भला नहीं लगता ? डरती है ?

बिल्कुल नहीं मजरी ने कहा । मेरे कैलाश जैसे दुःख और कालाग्नि के समान दुःसह पति को हो ही क्या सकता है ? किसमें इतना साहस है कि वह मजरी की ओर उगली भी उठा सके ? भ्रमन होकर जाग्रो में तो यही मानती रहती हूँ कि तुम दण्डनायक बनो ।

इस जीवन में तो दण्डनायक बन नहीं सकता ।

यह कैसे जाना ?

मुझ से जयदेव महाराज डरते हैं और पाटन के मंत्रीगण भी धवराते हैं ।

मरछा देखना । इस बार मजरी ने कहा । एक स्त्री ने तुम्हें साट

के सिंहासन पर भाऊ होने के लिए निमंत्रित किया था। तुमने उसे प्रतीकार कर मुझे पसन्द कर लिया। तो मुझे तुमकी दण्डनायक तो बनाना ही चाहिए। मजरी की धाँसे एक साथ गर्व और प्रशंसा से चमक उठीं।

और न बन पाया तो ? बाक ने पूछा।

‘तो समझ लेना कि पाटन की नारी में सेज नहीं रहा।’

किंतु मेरे प्रण का क्या होगा ?

मेरे प्रण की तो मैंने कभी से पूर्ति कर रखी है। तुम मेरे लिए दण्डनायक हो और सजा रहोगे।

बाक ने हस कर मजरी का हाथ दबा दिया।

अच्छा जब मैं देवमद सूरिजी के उपाश्रम में हो पाता हूँ। वहाँ कुछ-न-कुछ पता लगेगा ही।

उसने पगड़ी पहनी और तलवार धोब कर बाहर आया। नमस्कार करते मुमटो को जय-जय कहता हुआ वह पाठे पर बढ़ा और दो बार चुड़चुड़ाता व साथ देवमद सूरिजी के उपाश्रम की ओर मुड़ गया।

६

जब साम्बा बहुस्पति के बाड़े से पालकी में बैठकर नगरसेठ के घर की ओर प्रस्थान किया उस समय भी आश्रमद के मस्तिष्क के सामने वही अपरिचित सुन्दरी ही थी।

दुग्पाल उसे भले लगे। उनके सोरठ प्रस्थान करने पर स्वयं भृगुकच्छ का दुग्पाल बन कर वह निश्चिन्त होकर रह सकेगा, इसमें उसे कोई संदेह न रह गया था पिता का उसे बार-बार शावधान करना निरपेक्ष लगा भृगुकच्छ की सत्ता को अपने हाथ में करना यहाँ

उन्हें इतना कठिन लग रहा था यह उसकी समझ में नहीं आया ।

अभी तो उस मुन्तरी को खोज निकालना ही उसका एकमात्र उद्देश्य था । बाजार से निकलत हुए उसने चारों ओर देखा किन्तु उस शरीर-विप्राय की दूसरी स्त्री उसे न दिखा पड़ा । वैसे अप्रतिम सौन्दर्य की खोज निकालना इस गाँव में सहज तो होगा । किन्तु कठिन भी कम नहीं होगा । वह एकएक महत्त्वान्वी पुंस्य जो हो गया था नगरसठ की पुत्री - साथ उसका सम्बन्ध ना हा चुका था किन्तु भयुकच्छ से अकड़ो तरह परिचित कोई विवासपात्र मनुज उसके साथ न होने के कारण यह काम अभी कठिन दिखाई पड़ा ।

आँखें बन्दकर फिर तकिए पर टिका वह उन रमणी के अगनाविष का अपनी आँवा के सम्मुख लाने की चेष्टा करने लगा । होठों में कड़ा आक्षेपक भावपूर्ण नाक की किसी मन्मरी बनावट आँखों में कड़ी हृदय भेदक मोहिनो । आधी पीछ पड़ती स्त्रियों की अमूर्त रेखाएँ पाँव तक की रेखाओं में निखरी मन्यता इन सब विशेषताओं का उसने आश्चर्य विलासा की दृष्टि से विनयपूर्वक किया । वह विस्मित सा हो गया ।

असल में कभी किसी ने उसकी इच्छाओं का अनुसरण न किया था वा माँता था वही वस्तु तुल्य उसे मिनती थी । उग महेंद्र का सम्पत्ति और सत्ता दिन-दिन इस प्रकार बढ़ रही थी कि किस का क्या मजाल जो पाटण में उस काई भी ना कर सक । यह तो विजित देश की छोटे नगर की राजधानी थी और वह स्वयं था उसका दुर्गपाल और क्या चाहिए ?

वह स्त्री विवाहिता अवस्थ थी तो हा ! उनका बिना वह जीवित नहीं रह सकता इसलिए उस खोजना तो पड़ेगा ही । वध और स्याद से ब्राह्मणी लग रही थी । जिस धन्यायी के भाग्य से इस अम्परा का निर्माण हुआ होगा ? जो भी हो कौन ऐसा है जो दान और मोक्ष को देख न ललचा उठे ? ब्राह्मणों के प्रति उसका तिरस्कार थावक थोड़े के पुत्र के योग्य ही था । इन सब विचारों में मग्न होते हुए भी

घाट का व्यापार उसकी दृष्टि से बच न पाया । मृगुकुष्ठ में घर छोटे और भाग सकरे थे । मन्दिर-यष्ट और जीर्णविस्था में थे । उनमें न पाटण के मन्दिरों का ठाठ था न मोढ़ेरा के मन्दिरों की सी मध्यता । फिर भी शुनरास के सभी नगरों से साठ की इस राजधानी में एक विशेषता दिखाई पड़ी । ऐसा लगता था कि सम्पूर्ण नगर बस छोटी छोटी दूकानों का ही बना हुआ है ।

हर चोच में व्यापारियों की हो बस्ती अधिक थी । मुनीम काल में बसम ससि कंधे पर पैरों की पत्तों लिए इधर उधर लौड़ घुप कर रहे थे और मास से भरी गाड़ियाँ की घुमला चली ही जा रही थी । इस प्रकार का जीवन कुछ अंगों में समाप्त में भी था किन्तु इस नगर की रैल पैल के सामने तो समाप्त उगाड़ प्रतीत हुआ । इसी कारण साम्रमट की पालकी उठान वाले वेग से न बस पा रहे थे वही-वही तो उन्हें रुक जाना पड़ता था । इससे साम्रमट की विचार प्रणाली बार बार टूट पड़ती थी और उसका जी तिसमिला उठता था ।

साम्रमट की इस नगर में कई बार्ते बड़ी विचित्र लगीं । उसके जसा महत्वगामी व्यक्ति पालकी में बैठकर चला जा रहा था किन्तु किसी को उसकी ओर ध्यान देने का भी अवकाश नहीं था नमस्कार करने की बात तो घनग रही । नागरिक इतने विनयहीन थे कि अपने काम को छोड़कर किसी दूसरी वस्तु की ओर ध्यान तक नहीं दे सकते थे ।

वह सोचने लगा कि समाप्त में रुपया इतना है कि समाप्ता नहीं फिर भी उससे तिगुने बड़े इस बंदरगाह में क्यों कुछ गिवाई नहीं पड़ता ? वहाँ उसके पिता की दुकान का बमब और कहीं मृगुकुष्ठ के पट्टणी चौक की दुकानें ! उसका पिता की बात अब उसकी समझ में आई । उसके पिता ने समाप्त बन्दर पर अधिकार करके अतुलित सम्पत्ति एकत्रित की थी और अब उसे हम नए देश पर अधिकार करने के लिए भेजा था । साम्रमट मन ही मन हंस दिया वह भी अपने पिता के समान समष्ट और सत्तावान बनेगा ।

हवाई किले बनाता हुआ आक्रमण तेजपाल नगर सेठ के यहाँ जा पहुँचा। सेठ बाहर गये हुए थे अतएव उनका पुत्र रेवापाल उसका स्वागत करने के लिए खड़ा हुआ था।

रेवापाल लगभग बीस वर्ष का था—सुन्दर ठिगना सज्जत। उसके मुख पर भरे हुए घावों के चिह्न थे। उसके हाथ बता रहे थे कि उनमें क्षत्र क्षमाने की असीम शक्ति है। उनकी आँखें निश्चल और उसका मुख गम्भीर था। उसे देखते ही सभी का उत्साह ठण्डा पड़ जाता था।

आक्रमण के पालकी से उतरने पर रेवापाल ने उसका स्वागत किया।

पचारिए अंबड सठ ! पिता जी अभी अभी बाहर गये ह। उसकी आँखा में न स्नेह था न आनन्द उनकी बाणी में हृय की लहरें भी न थीं। ऐसा लग रहा था मानों और कोई चारा न होने के कारण ही उसको यह करना पड़ रहा।

आक्रमण तो इस होने वाला सारे का व्यवहार देखकर ही ठण्डा पड़ गया।

मेरे सन्निध आ गए ? उसने बड़े मन्दीब से हसकर पूछा।

‘हाँ। गम्भीर हाकर रेवापाल ने उत्तर दिया।

‘माय कुशल तो ह !

हाँ कहकर एक क्षण भी अधिक कह बिना वह आगे हो गया आक्रमण उसके पीछ-पीछे चलने लगा। वह इस गाम्भीर और निगड विरस्कार का कारण इसलिए नहीं समझ पाया कि वह रेवापाल के स्वभाव से पूर्णत परिचित न था।

रेवापाल लाट की नष्ट हुई सत्ता और स्वतन्त्रता का अन्त था उनके नष्ट होते ही वह जीते जी मुर्दा-सा हो गया था।

रेवापाल की गम्भीर प्रकृति को समझने के लिए साट के इतिहास के कई-एक पिछले पन्थ खोसने हान ।

साट का अन्तिम प्रतापी राजा बारप था । साट के दुर्भाग्य से पाटण को गद्दी पर उससे भी अधिक प्रतापी सोलंकी मूलराज बठा । बारप ने मूलराज को पराजित किया और मूलराज ने बारप को मार दी, किन्तु परिणाम कुछ नहीं निकला । बारप के बाद मूलराज के पुत्र चामुड ने भुगुञ्छ लिया और साट में अनहिलवाड़ पाटन की सत्ता स्थापित करना आरम्भ किया । चामुड के बाद भीमदेव ने साट की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया किन्तु बणदेव के समय में पाटन ने साट को अपने में सम्मिलित करने का विचार किया ।

युवावस्था में मुजाल ने साट पर चढ़ाई की थी और वहाँ के पद्मनाभ महाराज का भी मार डाला था । परन्तु इससे पाटन को कुछ भी लाभ न हुआ । पद्मनाभ महाराज का पुत्र युद्ध में लड़ रहा फिर भी सेनापति ध्रुवसेन ने मही से कावेरी तक साट की सत्ता बनाए रखी । अनेक बार भुगुञ्छ लिया और फिर खो दिया हारे और हराया ।

इसी काल में दो जना में प्रगाढ़ मित्रता थी । ये तो दोनों बच्चे किन्तु रूप और गुण में समान थे । दोनों युद्धकला में कुशल थे । एक था निधन ब्राह्मण और दूसरा था धनवान नगर सठ का पुत्र । ब्राह्मण पाटन के दण्डनायक त्रिभुवनपाल की सेना में अर्ध हो गया बरिष्क ध्रुवसेन की सेना में हो बना रहा । एक था काक दूसरा था रेवापाल ।

काक अधिक चतुर था । उस विश्वास था कि ध्रुवसेन कुछ भी करलें फिर भी पाटन की सत्ता के आग उसकी एक न चलेगी । पद्मनाभ महाराज की पुत्री मणालकुमार को ध्रुवसेन सदा अपने साथ रखता था । वह साट की अस्त होती हुई सत्ता और स्वतन्त्रता की मूर्ति मानी

जाती थी इसलिए प्रतिदिन घटती हुई सेना उसका मुख देखकर अपना साहम न खोती थी। फिर भी विजय की उसे कोई आशा नहीं थी। इस कठिनाई में नाक की एक बान मूँछों। यन्त्रिभुवनपाल सोलहवीं मणालकुंवर से विवाह कर लेते हैं तो वे स्वयं साट व स्वतन्त्र राजा बन जायेंगे साट की महत्ता को घाव नहीं घाएगी ध्रुवसेन की प्रतिष्ठा बनी रहेगी और पाटण की बड़वाहट भी जाती रहेगी किन्तु यह मांग तो बल था। त्रिभुवनपाल स एकी दूनरा व्याह करता ही नहीं चाहते थे और यदि वे स्वीकार भी कर सतें तो उनकी पत्नी काश्मीरा दबी उन्हें ऐसा कमी न करने देती। यन्त्रि वह भी हो जाता तो त्रिभुवनपाल में इतनी शक्ति न थी कि वह साट की स्वतन्त्रता के झूठे का उठाए रख सकें। अगर वह ऐसा करने का प्रयत्न भी करता तो मु जान महेजा कमी उसे सफल नहीं होने देते। वास्तविकता जानने के लिए नाक ने पाटण जाने का काम अपने सिर लिया।

वहाँ उसे विश्वास हो गया कि एक-न एक त्रि साट की गुजरात की सत्ता माननी ही होगी तभी उसके शत्रु मस्तिष्क में यह बात समा गई कि साट जितना शीघ्र गुजरात में सम्मिलित हो जाय उतना अच्छा। वह अपनी संज्ञा वृद्धि के द्वारा ध्रुवसेन की सत्ता का नष्ट करने का प्रयत्न करने लगा।

साट के तीन चौपाई नागरिक ने पाटण की सत्ता स्वीकार कर ली थी। ध्रुवसेन की सत्ता पाटण की सत्ता के दर्शन के बराबर थी और वह भी त्रि दिन घटती जा रही थी। साट का सम्प्रतिशान्ति व्यापारी बग मुँह से ऊँचकर उदय होते हुए मूँच के ताप में आनन्द कर रहा था। ध्रुवसेन ने परिधम करने में कुछ भी उठा न रखा। अपनी मध्य दाढ़ी के कुछ बासा का दातों के बीच में दबाकर वह ध्रुव की भाँति घटस घटा रहा। उसकी छाटी-सी सेना न भृगुकण्ठ और अपनी राज्य सक्षमी के समान राजकाया मणालकुंवर पर अपना अधिकार बनाए ही रखता।

एक पुराने घर के चबूतरे पर फहराती स्वतंत्र लाट की ध्वजा के नीचे इस हठभावे देश का अन्तिम सत्ताधीन एक पर्यर पर बैठा हुआ था। उसकी सफेद दाढ़ी के अस्त-व्यस्त बेश मरते हुए सिंह की अस्त-व्यस्त अग्रिम की भाँति उसने बूढ़ मुल की अव्ययता बढ़ा रहे थे। उसकी आँखें सास और उनके सिन्धुटे हुए भाल पर निराशा की रेखाएँ थीं किन्तु दोनों ही में विश्वास एकाग्रता थी।

शरीर पर स्थान-स्थान पर पट्टियाँ बधी हुई थीं किन्तु फिर भी वह एक हाथ में एक बड़ा भाला लिये हुए था। समय समय पर उसके होठों से लाट का जयघोष—जय गंगाभाष—निकल पड़ती थी। उसके चारों ओर बीतेक घोड़ा सटकर खड़े हुए थे। उनके शरीरों पर भी पट्टियाँ थीं। उनको आँखों में भी मरते हुए सिंह का अवलत तेज था। सभी भूख, प्यास और विद्याभ क अभाव में सूखकर क्षीण हो गए थे किन्तु फिर भी उनके अग-अग से अद्विग शीघ्र चलकता था।

अस्त्र, रहित काक तेजपाल को लेकर एक घोड़ा के पीछे-पीछे वहाँ पहुँचा। चारों ओर हमशान से भी अधिक सन्नाटा था। केवल भरे हुए घोड़ों के मुँहों को चाटते खानों की भयावह भूक दूर से सुनाई दे रही थी। जब उसने इस मयानक स्थान पर लाट की नष्ट होती राज लक्ष्मी के अन्तिम रक्षक को यमराज की ललकार कर खड़े होते देखा तो उसके हृदय की आघात लगा। भ्रूवसेन से उसने अस्त्र विद्या सीखी थी और देवापाल के साथ खाना खिलना—सभी छोड़ दिया था। वहाँ खड़े हुए देश की स्वतंत्रता के सिंघ अपना जीवन अर्पण करने वाले सभी घोड़ों से वह परिचित था। वह स्वयं विजयी विदेशी सेना का नायक और विदेशी राजा का विश्वासपात्र था। वह स्वदेश के हित में मगा हुआ था या उसके साथ कपट कर रहा था? एक बारगी भी उसका भाषा चकरा गया क्योंकि उसने आँखें मूँद लीं। पुनः भर के

निए उसे काकू ने छुड़ा गई। फिर उसकी दृष्टि ऊपर फरफराती गंगा
नाथ की छाया पर पड़ी। शिवयोगीश्वर के परिवार का मूक बह
कहता। उसी गंगानाथ मगराज की इच्छा। दूधरही गंगा वह स्वस्थ
होकर आगे बढ़ा और ध्रुवसेन के निज आकर सांगीत प्रणाम करते
हुए कहा 'गुरुदेव प्रणाम'। काकू ने त्रिज योद्धा से सम्म विद्या सीखी
थी उसे उसके अग्रजों नाम में सम्बोधित किया। यह वसेन ने बिना कुछ
आते गंग से घाते पाँव पीठ खींचकर काकू की चरण पद्म काने से रोक
लिया। उसने स्पर्श करने से वह दूँधित हो जाया वह भावना यह वसेन
ने छिनाई नहीं। काकू सम्मान से झुक एक ओर तनिक हटकर खड़ा
हो गया।

'काकू ! बाड़ी देर क बाग उवाय और निरन्तर बोलत रहने के
कारण बड़ हुग गते स बड़ योद्धा ने कहा— किस काम आए हो हमारी
निबन्धना देखने ?'

गुरुदेव तब और सम्मानपूर्वक स्वर में काकू ने कहा। 'महापुत्र
आन न कभी निबन्धन से और न कभी हो सकते हैं। मैं तो बस एक
प्रायना करने आया हूँ।

प्रायना ? रेवागन बीच ही में बीच उठा। उसका गान बड़ गए
थे। उसकी घ से विनिष्ट मनुष्य की आँखों के समान चमक रहा थी।
'हमें दास बनाने आया है ?'

'नहीं माई' धनमान पीकर स्नेह मिश्रित स्वर में काकू ने कहा।
मैं तो नाट क घमर योद्धाओं के दशन कर कृपा होन आया हूँ और
प्रायना करने आया हूँ कि सब यह नठ छोड़ दो। जो प्रायन किया वह
न वो कोई कर सकता था और न कोई करेगा किन्तु जिस नाट और
मृगतनुवर ने लिए यह सब किया सब उन्हीं की बनाई के लिए
हूँ तब दो।

मच्छा हट त्याग में और वह भी तेरे कहने से ? ध्रुवसेन ने
तिरस्कार में हँसकर कठोर स्वर में पूछा— तेरे कहने से ? अदभ्य है

कि तुम्हें मुझ ज़िन्दगी का साहस कैसे हुआ। मुझे मालूम है तू कौन है ? तू है विदेशी पट्टणियों का शीत सेवक ! देश की लगन अपने भगवत्प्राप्ति की लाज और भाव्यों का स्नेह—कुछ भी तो तुम्हें बिकते न रोक सका। खुद बिक गया और भुगुक्छ को भी बेच दिया, अब मुझे क्या करने आया है ?

काक इन कठोर अभियोगों को आश्चर्य-जनक धीरे से सुनाता रहा और पहले उसी मन्नता से बोला—गुरुदेव आप जो कहें वही ठीक किन्तु मेरी भी तो कुछ सुनिये। जब मैं पट्टणी सेना में सम्मिलित हुआ उस समय साठ की शक्ति और सत्ता थी कितनी ? आप समझते थे कि दोनों हैं किन्तु मुझे विश्वास था कि दोनों भुगुत्पणा के समान हैं।

देश-द्रोह करने से भुगुत्पणा के पीछे प्राण दे देता हूँ अधिक प्रिय है। रेवापास अधीरता से बोल उठा।

रेवाभाई तुम पट्टणियों से परिचित नहीं हो। मैं यदि पट्टणियों की ओर न होता तो भुगुक्छ भूमिगत हो जाता तुम कमी के पिस होते और साठ की सत्ता और गौरव को सुरक्षित रखने का जो अवसर में उपस्थित कर सका हूँ वह कमी न आता। काक ने कठोर होकर कहा।

‘यह सत्ता और गौरव ? काक ने अन्तिम वाक्य को सुन चारों ओर हाथ सँवत करत हुए वृक्षों ने कहा।

हाँ यही सत्ता और यही गौरव आज छ महीने हो गए आप इसे टिके रह सके आप स्वयं नहीं जानते ? गंधार से अनाज किसने भिजवाया मालूम है ? कामरेज से आदमी भिजवाने का संदेश किसने भेजा इसकी भी कुछ खबर है ?

‘किसने ?’ रेवापास ने तिरस्कार से पूछा।

मैंने काक ने गव से उत्तर दिया।

किस लिए ?

किस लिए ? काक सज्ज भाव से वाला आप मुझ अनु समझत हं यह आपका भ्रम है । गुरुन्व ! लाट पाटन के हाथ ही जायगा यह निश्चित है तब एक निःसहाय बन्ने क समान क्या ? सम्मान क प्राप क्यों नहीं और यह आप हो कर सज्ज है । इसलिए मैंने आपको टिकाय रखा है और इस समय भी यही प्रायना करन आया हूँ ।

कार्ड कुछ नहीं बामा । काक डोंग मार रहा है या सय कह रहा है कोई न समझ पाया । काक आप बोला—आप मंगलकुवर का लाट क सिंहासन पर बिठाना चाहते हं न ? मैं मा यही चाहता हूँ । आपको लाट की सत्ता सनी है न ? मरी भी यही हात्कि इच्छा है । आपको नगुकच्छ का भण्णा बारों गियाओं में पहराना है न ? मरी कामता भी यही है । इसीलिए मैं आपको पास आया हूँ । काक उत्साहित होकर वग में दोमता चला जा रहा था । उसकी आँखें चमक रही थीं ।

किस प्रकार ?

‘जयसिंहेव महाराज ममानकुवर स विवाह करन क लिए तयार हैं, आपको दुगपाल निमुक्त किया है और लाट की सत्ता देवा नाई की सौन देन का आपना-पत्र यह रहा । आप इस स्वीकार कर लें ता त्रिभुवनगान और न पट्टगी सत्ता सहित सब प्रातःकाल कूब कर दूंगा । कहकर काक ने पाटन का आपना-पत्र सामने रख दिया ।

धुवसन और उसक साथी शक्ति हान लग ।

इसलिए क्या हम पाटन को दानता स्वाकार कर लेंगे ? शक्ति होकर देवापाल न क्या । मरी पिता का विन्गियों क अनुग्रह का दास बनाना अब मुझ भी बनाना है ? यह कभा न हागा ! दन्ता स देवानान बोला ।

देवा नाई काक बोला यह व्यय शक्ति होने का समय नहीं । गुरुन्व ! काक बिनती क स्वर में धुवसन स कहने लगा आप बृद्ध और अनुमयी हं । मुझे दस प्रोही शक्ति और समझन स लाट का कुछ भला नहीं होगा ।

बिना कुछ बड़े धूमसे न ने मिर हिलाया । काक फिर कहने लगा 'आप मट्टी भर तो हैं ही, चाहुं तो बल प्रातः काल जंबूतर से मूँ माना कि आप स्वयं तो भीम पितामह के समान स्वच्छा से मृत्यु का आवाहन कर प्राण दे देंगे किन्तु इसका परिणाम क्या होगा यह भी सोचा है ? लाट का प्राचीन गौरव ध्वस्त हो जायेगा मणालकुंवर निःसहय हो जायेंगी लाट के सोलहिया का चिह्न तक छेप न रहेगा । काक तनिक रुक गया बीच में बोलने को उत्तर देनापान को जमाने टोका 'देवाभाई जब तक मैं ज्ञान समाप्त न कर लू तब तक घात रहो । विचार करो ! जितना तुम सोचते हो उतना पापी या द्रोही नहीं हूँ । गुप्तैव आप मेरे पिता के समान हैं देवाभाई मग छोटा भाई है भगुच्छ मैं मैने जन्म लिया और बार-बार वही जन्म लू यही कामना भी है । विचार लो कीजिए आपकी ऐसी परिस्थिति में मैं कैसे पाटन से ये घातें छा सका ? यदि देश द्राही होता तो ऐसा क्यों करता ? मैं आपकी पराजय नहीं चाहता । मणालकुंवर का हित यदि मैं न चाहता तो उन्हें गजरात की स्वामिनी बनाने का विचार ही क्यों करता ? मैं तो लाट को गजरात की सबध प्ल मणि देखना चाहता हूँ ।

सभी स्तब्ध होकर सड़े थे कीई नहीं बोल पाया । एक दीप निःश्वास लेकर धूमसे न अपना पट्टीवाला हाथ कपार पर रख लिया ।

व निए गरुध ! सेनापति महाराज ! बोलिए ! आपके धर्मों पर ही इस समय लाट का गौरव निर्भर रहता है ।

धूमसे न धीरे-से अपना मिर ऊपर उठाया माइपो ! इस बात का सम्बन्ध केवल हमसे ही नहीं है । पाटन की चाकरी में तो अभी करूंगा नहीं उससे पहले मला घाटकर मर जाऊंगा । किन्तु मेरे स्वामी की पुत्री का क्या हाल होगा ? उससे पूछे बिना मैं कुछ नहीं कह सकता । यदि उसने भा बह दिया तो फिर बल माये पर कसटिया जाना ही होगा । इतना कह वह उठ खड़ा हुआ ।

शुरूमें तो क्या मृणांतकुर से अभी पूछेंगे ? काक ने पूछा ।

मे तो नहीं पूछूंगा । देवापाल तुम काक की देवी के पास से जाओ ।

‘परन्तु यदि वह पूछें कि आपका क्या विचार है तो ? देवापाल ने पूछा ।

थोड़ी देर रुककर मुँह थोड़ा ने सिर ऊँचा किया और कहा—
बह देना कि काक की बात ठीक मालूम होती है ।

काक का हृष्य रूप से उद्यन पड़ा, और साट के थोड़ा निराश होकर एक दूसरे की ओर देखने लगे ।

६

देवापाल के पीछे जाते समय काक के मन में कई प्रकार की शक़ाएँ उत्पन्न हुईं । एक थोड़ा की समझना एक बात है, किन्तु बीस वर्ष की स्त्री के हठ पर विजय पा लेना कि-कुन दूमरी बात है । वह यह भी जान चुका था कि हम मुँह में जितने घटिया साहस से घ वसन कहा हुआ था, सोलही कुबेर का साहस भी उन्त कम न था ।

जबूर की समझना-सी सूनी गलियों को पार करते काक के मन में बीते युग की स्मृति जाग उठी । पद्मनाभ महाराज के समय में जब वह और देवापाल साथ-साथ पान्गाला जाते थे तबका जमोत्सव मनाया गया था उसका उस स्मरण हुआ । इसके बाद भी एक-दो बार उसे दसा था तब वह पाँचक वर्ष की मुढ़िया सा न-ही थातिका थी । भव वह कैसी हाथी ? कने-कये दुष और कसी-रंगी मयकर परि स्थितियों का उसने सामना किया होगा ? और अभी पान्द का जो मुकुट लेकर वह उसे देने जा रहा है क्या उसे वह स्वीकार कर सकेगी ?

काक ने रेवापाल की ओर देखा होंठ पीसता हुआ वह धागे घस
हा था। उसने सुना था—बानों का अपराध है—कि लाट की
स्वतंत्रता के लिए वह जितना परिश्रम करता था उससे कहीं अधिक
बड़ी कठिनाई का सामना कृषी को प्रसन्न करने के लिए करता
था। उसकी सेवा में जितना परमाय था उसना ही स्वाय भी था।
किंतु यह तो लोग द्वारा कही हुई बातें हैं।
थोड़ी देर पश्चात् व एक खड्ग में परिणित हो चुके प्रासाद के

निपट भाए। वही एक मनिक पहरा दे रहा था।

जय गगनाय भोला! रेवापाल बोला।

जय गगनाय बापू! मनिक ने उत्तर दिया क्या भ्राजा है?

दबी क्या कर रही है?

बठी होगी।

जा और सूचित कर कि रेवापाल और पाटन के मटराज या
देवी से भेंट करना चाहते हैं। रेवापाल के शब्द-शब्द में अगर ये
काक ने बिना कुछ सोच सब सहन कर लिया। थोड़ी ही देर

गत भोला लौटा आया।

बापू बनिए देवी बुसाती हैं।

मले-कुचले दालान और निपट अंधेरी जगह में से होकर भोला
से और रेवापाल को पीछे की ओर के एक कमरे में ले गया। एक
ठंडोल पर बाली छोड़नी छोटे मुणालकुंवर बंठी हुई थी। दो छिद्रा
में से आते नाम मात्र प्रकाश में काक ने मोलकिया की राज्य-लक्ष्मी को
देखा। वह छोटी और कोमल दीख पड़ती थी। भ्राम्य से ही कोई
उसे सोलह वर्ष की बड़े। उसके पतल और सुन्दर हाठ बड़ी बठोरता
से एक दूसरे से सटे हुए थे और उसकी आँखों में गहन एवं निश्चल
तेज प्रकाश रहा था। छोटी किंतु झुकी हुई नाक और उसकी मोहक
किंतु हठीली ठोड़ी से उसके प्रभाव की कुछ कृत्रिम कल्पना की जा
सकती थी। उसने दोनों पाँव धरती पर रखकर एक दम हिडोला रोक

लिया और उन दोनों की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखा ।

‘यही है काक भट ? उसने पूछा । उसकी बाणी में विचित्र घाति और निश्चयात्मकता थी । रेवापाल ने मदन हिलाकर हाँ कहा ।

‘माइए कसे माए ? उसकी बाणी में किंचित मात्र भी भावावेश न था ।

देवी रेवापाल बोला । काक भट पट्टणी दहनायक का संदेश लाए हैं ।

‘कैसा संदेश ?’

यदि गुरुदेव समझीना कर में तो पाटन का राजा आपसे विवाह करने और गुरुदेव को दुर्गमाल नियुक्त करने के लिए तयार है । रेवापाल ने तिरस्कार भरे स्वर में काक का संदेश कह सुनाया ।

‘मन्त्रा !’ मृणाल ने इस प्रकार कहा मानो बात किसी और के सम्बन्ध में हो रही हो—गुरुदेव का क्या विचार है ?

कहते हैं कि उन्हें यह बात ठीक जबरी है फिर जैसी आप भापा दें । आपकी आज्ञा हो तो हम तो कल ही कसरिया पहनकर निकल पढ़ने के लिए तयार हैं ।

कुभरी एकोएक काक की ओर मुड़ी और इस प्रकार बोली मानो वह निष्पाण हो—

‘आप ही हैं काकभट ? वही जिनके विषय में कहा जाता है कि साट उन्होंने विजय की ?’

हाँ देवी ! काक ने नमस्कार किया ।

‘आप मुझे पाटन की रानी बनाना चाहते हैं ?’

‘जी !’

‘कारण ?’

मेरे हम मुझमें साट का सुख और गौरव सनिहित है ।

और यदि मैं अस्वीकार कर दू तो ? कुभरी ने प्रश्न किया ।

‘तो जन अनुसर हार जायगा मेरे सवा विजयी रहने वाले गुरुदेव

पराजित होने और पचनाम महाराज की पौत्री बटवती कियेगी। काक ने भी कुछ बठोर होकर उत्तर दिया। जाने क्यों इस बालिका का उद्देश्य उसकी समझ में नहीं आया।

तुम्हारी क्या राय है ? कुन्नी ने रेवापाल से पूछा।

जसी आपकी आज्ञा हो ? शोध से भरे रेवापाल ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

तुम्हें यह योजना ठीक लगती है ?

‘लाट विदेशी के हाथ में जा रहा है इसमें मुझ तो कुछ भी ठीक नहीं दिखाई पड़ता।

मृणाल कुछ समय तक चुप रही।

रेवापाल गुरदेव चौपाल में है ?

हाँ

जामो घुला जामो।

जो आज्ञा। कहकर रेवापाल चला गया। काक इस छोटी-सी बालिका का दबदबा और सयत व्यवहार देखकर चकित हो गया। मीनलदेवी ने भी ऐसी निःचयात्मक युद्धि और इतनी एकाग्रता न देखी थी। जैसे ही रेवापाल गया वैसे वह काक की ओर मड़ी उसके हाँठ और भी बठोर हो गए।

तुम मुझसे क्या करवाना चाहते हो यह भी मालूम है ?

‘हाँ !

‘नहीं। तलवार से हमला करने वाले अमुमबी यादवा के-से आत्म विश्वास से युद्धी ने कहा। प्रातःकाल अपने दादा का मुकुट पहन और हाथ में तलवार लेकर मत्स्य का आसिगन करने मैं तुम पर टूट पड़ गी। मेरा सिर बट जायगा और मैं जमर हो जाऊँगी। मेरे शीय से पच्ची गूज उठगी और भविष्य में लोग मुझे अम्बिका के समान पूजनीय मानेंगे। उसने स्वर में कम्पन न था और न था उसकी आँखा में आँसु धारण रोज, जो बेवस उसकी अस्वाभाविक निश्चयात्मकता और उदासीन

पान्ति । काक के आश्चय की सीमा न रही ।

तू चाहता है मैं ऐसा अवसर खो दू ?

हाँ

क्यों ?

गुजरात की राजमाता बनने के लिए ।

तुम्हारे राजा की कितनी रानी है ?

तीन ।

और मैं चौथी ? इनमें पटरानी कौन है ?

मीनसदेवी ने बचन लिया है कि आप ही पटरानी बनेंगी ।

काक मेरी इच्छा तो स्वयंवर रीति से विवाह करने की है ।

जयसिंहदेव सोलंकी से बढ़ कर योग्य वर कहाँ मिलेगा ? काक ने प्रश्न किया ।

जो गुजरात पर विजय प्राप्त करे वहीं ।

ऐसा किससे हो सकता है ?

बताऊ ? उसने नीचे झुक होठ दबाकर भीभी त्रिगु स्वल्प आवाज में कहा । काक को क्रौंफ़क्री छूट गयी । यह लड़की तो अनुमयी स्त्री की चतुराई से बात कर रही थी ।

एक व्यक्ति जिसकी मैंने बहुत ख्याति सुनी है । उसने मुजाल को मात दी खँगार के छक्के छुड़ा दिये अकेले नववधू को पकड़ा उठा की स्त्री को से आया और आज त्रिभुवन की अपने मट्टी में शिथे हुये हैं । उसकी देखने के लिय मैं इतने वर्षों से तड़प रही थी । बालो उससे तो यह हो सकेगा ?

काक काँप उठा । कितना भयंकर प्रश्न था ? कितना आवेग ? क्षणभर के लिए यह विलुप्त अस्थिर सा हो गया ।

‘बोलो यह सब पराक्रम सब है या झूठ ?’

किंतु मैं—मैं—

हाँ तुम गुजरात से सकते हो ।

\\

क्या कहती हो ? उमादिनी जसी बात है ?

‘नहीं । बताओ, अभी तुम्हारे पास साट की कितनी सेना है ? पाँच छ हजार ?’

हाँ ।

त्रिभुवनपाल को बात की-बात में जीता जा सकता है । कल प्रातः काल ही तुम्हारी सेना भुवुकुष्ठ पर अधिकार कर सकती है । परसा मही से तापी तक साट तयार हो जाएगा । किंतु पद्मनाभ महाराज का सिंहासन सूना है । हम दोनों उस पर बैठेंगे । फिर गुजरात कौन बड़ी बात है ? उसने शांत होकर प्रश्न किया । उसके लिए तो मानो यह मात्र लेन-देन का प्रश्न था ।

पाँव के निम्न साँप निसाई देने पर जो अवस्था होती है वही अवस्था वाक की हो गई । यह गहन विचार क्षणिक यह निमग्न योजना कसी दृढ़ता और जितना साहस और वह भी इस बातिका में !

कुछ क्षण तक वाक को कोई उत्तर न मूझा ।

देवी शोभ भरी भावाज में वाक बोला— आप मुझसे चाहती क्या हैं ?

धरती पर सर्वश्रेष्ठ वस्तु राज्यपद है वही देना चाहती हूँ ।

नहीं मित्र द्रोह करूँ स्वामी द्रोह करूँ परी द्रोह करूँ और वण श्रेष्ठ हाऊ ? मुझसे यह न होगा । वाक धीरे-से बोला ।

तुमसे तो केवल एक द्रोह ही हो सकता है । मुझे नहीं मालूम था कि तुम कायर हो । विरस्कार पूरक वह बोली । प्रथम बार उसकी वाणी में निराशा झलकी ।

ऐसा ही समझो जो कि मुझे मैं उतना साहस नहीं है । हाँ जयसिंह दब से ब्याह करो तो मैं तुम्हें ससार की महारानी बना दूँगा पद्मनाभ महाराज की पुत्री की भाँजा दसों सिंहासनों में भाग्य होगी । और क्या चाहिए ?

‘यह सब तो बातें हैं । मुझे पाटन की महारानी बनने में कोई

सप्य नहीं दिखाई देता ।

दूसरा रास्ता तो बेबस मृत्यु का है ।

तुम्हारा भी नहीं सलवाता? कुमारी ने प्रश्न किया ।

मरना संकल्प मैंने मरता लिया । जितना जर पाया हूँ किया अधिक मैं कुछ नहीं कर सकता ।

तब मैं भी दूसरा माग ग्रहण नहीं कर सकती मुझे तुम्हारी बिता क्या हो । शांति स मणाल ने कहा ।

बी' काज ने उत्तर दिया लीजिए, गुरुदेव पधार गये ।

इतना कहने के साथ ही घ वसेन और रेवापाल घा गये । सभी बिठातुर मुख से कुमारी की ओर देखते रहे । उसने एक एक कर तीनों की ओर देखा और फिर शांति से कहा—

गुरुदेव ! जयसिंहदेव से विवाह करने के लिए मैं तयार हूँ ।

रेवापाल चकित हो गया । काक ने मुख की साँस ली ।

माप क्या करेंगे ?

मैं ? घ वसन बोला मैं बाल म'याप से लूँगा । रेवापाल को दुग पाल नियुक्त करना पड़ेगा । घ वसन ने काक से कहा ।

जी । काक बोला ।

रेवापाल कभी विधेयिका की दासता स्वीकार नहीं करेगा । दाँत पीसत हुए रेवापाल बोला ।

तो आप यथ स्वीकार करते ह ? काक ने अंतिम प्रश्न किया ।

हाँ । घ वसेन ने कहा । कुमारी शांति स और रेवापाल प्रोच से देखते रहे ।

फिर यह हुआ कि घ वसेन न मन्यास लिया कुमारी जयसिंहदेव व्याहिता होकर सीसादेवी हो गई और रेवापाल के लिए मझार में बिल्कून रस न रहा ।

इस बात का धार थप चोत थप ।

काक दीप्ति ही देवमद्रसूरि के उपाश्रय में जा पहुँचा।

कई वय पहले देवमद्रसूरि ने भृगुकच्छ में अपने धनुर्मति किये थे। दुःख स्वास्थ्य के कारण भय शत्रुओं में भी अधिक दूर विहार नहीं करते थे। आवश्यकता पड़ने पर वस यहाँ पहुँचते थे।

इन सूरि की स्यासि देश बिगने में कभी हुई थी। जब स—सबत् ११५५ में—उन्होंने कथारत्नकोप लिखा। तब ही इनकी विद्वता की इतनी याद बढ गई थी कि धारो धोर से जन साधु धीर पंडित इनके बचना मूर्तों का आस्वादन करने के लिए भृगुकच्छ लिख हुए चले आते थे।

वे जिसने अप्रतिम विज्ञान थे उतने ही हृदय के विमल भी थे। भूनदया के वे भक्त थे। उनकी प्रवृत्ति का एक मात्र लक्ष्य था मानव समाज का उद्धार। जन धीर धर्मेन मर्तों के वात् प्रतिवाद धयवा राज पुरुषों के पक्षधर्तों में उन्हें कोई रस नहीं था। उनके उपाश्रय में साधु धीर ब्राह्मण दोनों का स्वागत होता था। उनके उपदेश मसारी धीर विगनी दोनों के काम के हात थे। बहु भय साधुओं के समान राज नीति में दिलबस्ती नहीं लेते थे।

धरीर अहं स्व होने क कारण धात्रकन वह भूकच्छ में थे। त्रिभुवनपाल की उदात्ता ने निमित्त हुए उनके उपाश्रय में लोगो का आवागमन भय दिनों की अपेक्षा अधिक था।

जिस कमरे में देवमद्र था उसी में काक गया। दुग्पाल ब्राह्मण होते हुए भी अक्षर धर बसा आठा था। इस समय उसे यही देख कर लोगो की आश्चर्य नहीं हुआ।

एक कमरे में देवमद्र जो अपने अस्वस्थ शरीर को हाथ पर टेक कर बठ हुए थे। पास ही में नगर के एक दो यावक बंठे हुए थे। धारी दूर तक एक व्यक्ति सूरिभी के विरुद्ध नए लिख हुए पादवनाथ धरित की प्रतिसिधि कर रहा था।

उनका मुख क्षीण और माधुर्यपूर्ण दृष्टि में निस्तेज था।
 परन्तु उनकी भाषा में मिठास थी। बाद विवाद में भी उनकी दृष्टि
 कठोर नहीं होती थी। उनकी हँसी अल्प किन्तु मीठी होती थी और
 विद्वता या विजय का अभिमान तो मनमें था नहीं। उनका शरीर ठिगना
 था। कई बार तो बोलते-बोलते रुक जाना पड़ता था और साँस लेने में
 भी कठोर परिश्रम करना पड़ना था।

जिस समय काक उस कमरे की छीड़ियाँ चढ़ रहा था उस समय
 देवमद सूरि गिरा। शास्त्र के अनुभवों व्यापक की भाँति उसका हिला
 कर वह रहे थे—

महिता और राज्यपद इन दोनों में विरोधाभास है। राज्याधिकारी
 या तो हिमक होता है या हिंसा से रक्षा करने का साधन होता है।
 फिर महिमा के उपानयन के लिए अधिकारी का क्या उपयोग हो सकता
 है? सूरि ने सामने बैठ हुए साधु से प्रश्न किया और काक को देखकर
 उसकी ओर धामुच हुए 'यह हमारे दुर्गमल है। यदि हम महिमा का
 ही प्रचार करें तो फिर इनका हमारी रक्षा करने का प्रश्न ही नहीं
 पड़ना। फिर हँस कर सूरि जी ने बात पलटी महाराज! इन सूरि
 जी से परिचित हो?

काक ने देवमद से साधु की ओर दृष्टि करी उस उसका मुख
 परिचित-सा लगा किन्तु बहुत ध्यान से देखते पर भी ठीक से पहचान
 न सका। इस साधु का शरीर विन्यास देवमद के शरीर विन्यास से
 एक दम विपरीत था। बड़ युवक और तेजस्वी था, उसकी भाषा में
 निराला आक्रामक था और उसने हास्य में बहिष्म था। उसका शरीर
 क्षीण होते हुए भी निर्भीक नहीं था।

इस युवक साधु का कहीं और जिस अवस्था में देखा था यह काक
 को स्मरण नहीं हो सका। मन-ही-मन स्मरण करने की भ्रष्टा करते
 हुए वह नमस्कार कर बैठ गया।

यह महाराज कौन है? काक ने पूछा।

जब काक हेमचन्द्र के साथ कमरे की सीढ़ियाँ उतर रहा था तभी उसे लगा कि दोनों ही एक दूसरे को अविश्वास की दृष्टि से देख रहे हैं। शिष्टाधारी सनिक चतुराई से बात कर रहा था त्यागी साधु नम्रता से उत्तर दे रहा था। दोनों के मुख भाव विहीन थे फिर भी दोनों एक दूसरे को चाह लेने के प्रयत्न में लग हुए थे।

काक ने बहुत सिर मारा मुख परिचित था स्वर की मणिमा भी कुछ-कुछ परिचित जान पड़ी परन्तु इस साधु को किस स्थान पर दला था वह याद नहीं आया।

सूरि भी काक के साथ सविधान होकर व्यवहार कर रहा था उस के मुख पर भोलापन इतना स्पष्ट था कि काक की शका लगभग जाती रही।

आपने और सूरिजी में क्या विवाद चल रहा था ?

कोई विशेष नहीं। सूरिजी का दुःख विचार है कि राज्यकाय में अहिंसा का कोई स्थान नहीं।

हो भी कस सकता है ? राज्यकाय ईर्ष्या सत्ता की इच्छा और कपट से ही चलता है। वहाँ अहिंसा कब सम्भव है ?

वास्तव में यह आपकी भूल है। नवयुवक साधु ने तेज भरे स्वर में कहा।

कैसे ?

‘जब राज्य काय में धर्म का शासन होगा तभी इन पापाचारों का दमन होगा।

मुझे तो लगता है कि ऐसी स्थिति में धर्मराज स्वयं बदल जायेंगे।

‘तो वह धर्मराज ही क्या ?

‘पाटन में चन्द्रावती से एक यती आए थे। आपने सम्भवतः उनकी बात सुनी थी ?’

‘इस हजार महारमाओं का तेज पाने पर एक भीतरामी का जन्म होया है। साधु ने कहा।

‘भीतराय सा’ सुनकर काक के मस्तिष्क में कई-एक तार झनझना उठे। एकाएक एक प्रसंग याद आया—एक न-हैं बच्चे का सुन्दर मुख उसका दृष्टि के सम्मुख आया। वह मन हो-मन हँस दिया। अन्त में उसने इस साधु को पहचान ही लिया।

‘दिखा जायगा।’ मन हो-मन कह काक ने अपना दाँव खेना—

‘सूरिजी ! बहुत बप हुए हमारी एफ-दूमरे से भेंट हुई थी। याद है न ?

हेमचन्द्र बमशा उसके मुख पर तनिक लोभ झलक आया।

‘हमारी ?’

हाँ काक हँसा। ‘आपको जग महेता ने दीया नितवाई थी। याद है ? तब भान छोटे थे और मैं एक मामूली सनिक था। आपके दादा के कहने से मैं पिछली रात को आपको उठा लाने के लिए आया था—याद आया ?

आश्चर्यचकित होकर हेमचन्द्र ने कपाल पर हाथ फेरा। पन्द्रह बप पढ़ने का प्रसंग नि सन्देह उन्हें अच्छी तरह याद था—आज एक बार फिर मौखों के सम्मुख खड़ा हो गया। साधु ने गर से काक की ओर देखा। यह परिवर्तन देखकर काक हस दिया।

‘सूरिजी ! आपने मुझसे क्या कहा था याद है ? मैं तो भीतराय बनूँगा। आपका सकल धिड़ हूँगा ? काक ने तनिक विनोद में पूछा।

भटराज ! भीतराय बनने की बात करना सरल है किन्तु धन जाना सरल नहीं है।

‘जग महेता कैसे है ?’ काक ने निजान्त निर्दोष और स्नेह मरे स्वर में पूछा।

बहुत समय हुआ उनसे भेंट किए। हेमचन्द्र ने भी वैसे ही निर्दोष स्वर में कहा।

‘आज प्रातःकाल आगमन आया है। उससे तो आपकी भेंट हुई होगी ? हसकर काक ने पूछा।

‘वह यहाँ मिलने नहीं आए। भेंट हो तो कहिएगा मुझसे आकर मिलें।

अच्छी बात है। अब तो वह भृगुकच्छ का दुग्पाल बनने वाला है।

एसा ? वह तो बेचारा अल्हड़ आदमी है।

फिर भी उदा महेता का पुत्र है। मोर के झों को भी क्या परखने की आवश्यकता होती है ?

‘अच्छा यह है कि भृगुकच्छ में शान्ति है नहीं तो विचारे के लिए बड़ा भारी पड़ता।

काक ने देखा कि इस बात में कुछ सार है अतः उसने कहा—
सूरिजी ! मेरी नीति पर चलेगा तो सब ठीक होगा।

नहीं तो ?

‘नहीं तो अब सात को वग में रखना कठिन होगा। आप उसे सलाह दीजियेगा—आपका तो अच्छा परिचय है न ? कहकर काक ने बात बदल दी।

‘अब मैं जाऊंगा। आज्ञा ?

‘धर्मलाम्ब जिन भगवान् आपकी विजय दें। बुद्ध साधु की गंभीरता से हेमचन्द्र ने कहा। काक मन-ही-मन हसा।

हेमचन्द्र दूसरी ओर चला गया। काक जाकर अपने घोड़े पर बैठ गया।

घोड़ी दूर जाकर काक ने अपने भट को अपने निकट चलने के लिए कहा।

सोमेश्वर भट !

‘जी।

‘उस नयमुक्क साधु को देख रहे हो।

‘जी हाँ ।

‘यह बहुत विडान् और भीतरागी है । उदा महेता के परम मित्र भी है । कुछ समय तक ये यहीं ‘विहार’ करेंगे । प्रतिदिन इनकी सेवा में उपस्थित रहना—सामधानी से । काक ने धीरे से कहा । सोमभट घतुर था । काक का दण्ड चातुर्य उसके लिए जाना पहिचाना था । उसने एक बार पीछे दृष्टि बालकर हेमचन्द्र को देखा और उसका मुख अच्छी तरह हृदय में जमा लिया ।

१२

भाम्भट के मन को चैन नहीं था । वह खचल हो उठा और उस सुन्दरी को खोजने के लिए व्याकुल हो उठा । भगुरच्छ का अधिकार सेनपाल सेठ की पुत्री पर और भावी पत्नी यह सब सोच विचार उसने लिए व्यर्थहीन हो गया ।

भाम्भट ने समय तो सीला ही नहीं था राजन्तरवार के शिष्टाचार भी वह पूरे-पूरे न सीख सका था । उसने अपने गण को बुलाया ।

‘हमीरभट ।

बापू ।’

तू पहले भगुरच्छ भा चुका है न ?

हाँ ।

एक अत्यन्त आवश्यक काम है । चारों ओर देखते हुए भाम्भट ने कहा ।

‘क्या ?

साम्बा बहुस्पति का प्राचीन बाबा तो देखा है ?

हाँ । वही न जहाँ दुर्गपास महाराज पहले निवास करते थे ?

‘हाँ यही । यहाँ मैंने एक स्त्री देखी थी ।

हाँ । हमीर ने मुझों ही में मुस्कगते हुए कहा ।

उसका नाम और निवास-स्थान का पता मुझे चाहिए ।

किंतु यहाँ तो तीन सौ स्त्रियाँ रहती हैं ।

तुम उन तीनों में से सुगन्त पहचान जाओगे ।

किस प्रकार ?

सुवती है सुन्दर है— । अन्नभट रुक गया ।

बापू ! सभी सुवतियाँ सुन्दर लगती हैं और सभी सुन्दर स्त्रियाँ सुवती ! ऐसे कसे काम चलेगा ?

मूर्ख ! वह तो अम्बरा के समान है । मन्वी और सगमरमर के समान अदम्य है । जहाँ महादेव का मन्दिर है न वहीं कहीं रहती है ।’

‘बापू मुझ गरीब की मानोगे ?

‘क्या ? अधीर होकर अन्नभट ने पूछा ।

हम अभी तो आग हैं और उस पर मन्वा की ने आवश्यक काम से भजा है । इस पचासत में पढ़ना तो मरेगा ।

अन्नभट ने हमीर की ओर आँखें तरेरकर देखा, तुम सलाह देने का व्यसन जब से लगा ?

हमीर चुप रहा । उसने नतमस्तक होकर हाथ जोड़ लिए, जो आज्ञा ।

मुझे सच्चा तक उसका नाम स्थान उसके पति का नाम, पिता का नाम आदि पूरा विवरण चाहिए ।

हो सके तो परिचय भी करवा आऊँ ! सनिक कटाक्ष से हमीर ने कहा ।

‘इसका तो मुझे विश्वास है । हंसकर अन्नभट बोला । हाँ देख कोई जान न पाए ।

‘जान भी छँ तो क्या ? ये साटिए नर भी क्या सकेंगे ?

वह तो भला क्या नर सक्ते हैं ।’ गव से अन्नभट ने कहा ।

‘कितन तेजपान सेठ जान जायें सी भण्डा नहीं सगेगा । अच्छा ! तो समझ गये हो न ?

‘परन्तु घान ता एमे बिह बताने ह कि काम बन हो नहीं सक्ता ।

पागल ! वसी दूसरी स्त्री तो मैंने देखी ही नहीं । भाई बोलो ।

घान हर बार ऐसा ही कहत है ।

इस बार तो तू भी मान जायगा । कसा बण है उमका ? भानी मोगरे की कची हो । बीनते बीनते धात्रघट के मुह में पानी आ गया ।

किस जाति की है ?

‘ब्राह्मण । उस बाड़े में बग और जाति मिन सक्ती है ? जा जब देर मत कर ।’

‘काम होत ही जाता ह । हमीर ने कहा और तलवार बांधकर बाहर निकल पड़ा ।

हमीर अपने स्वामी की विचोखताएँ जानता था । एमे अनक प्रसर्गों में उबन भाई की सहायता की थी और अनक बिगनिया से उसने उसकी रक्षा भी की थी । वह समझ गया था कि इस समय उसके स्वामी हठ पर चढ़े हुए हैं और ना कहने से कोई लाभ नहीं होगा । वह विचार करता हुआ वह बाहर निकला । नाम ठाम का पता लगाना कुछ कठिन नहीं था किन्तु उसे लगा य सब बहुत सावधानी से भी कुछ करने पर भी कुछ हाथ न लगेगा ।

चतुर होन के साथ ही हमीर अभिनानी भी था । संसार का स्वामी पाटण पाटण का स्वामी जयसिंहदेव और उग महेता जयसिंहदेव के एक प्रकार से स्वामी हो थे — वह हमीर के सिद्धांत थे । स्वयं उग महेता का विवासपात्र सुभट और उनके प्रिय पुत्र का घनिष्ठ मित्र होने के कारण वह सम्पूर्ण संसार की तिरस्कार की दृष्टि से देखता था । उसने नाट के साथ हुए कई मुद्दों में भाग लिया था और नाट पर विजय प्राप्त कर सने के पश्चात् भी वह एक-दो बघ पट्टणी सेना में रहा था । इसी कारण से नाट के निवासियों को वह बड़ी तिरस्कार

की दृष्टि से देखता था ।

सीधे साम्ना बहुस्पति के बाढे में जाना उसे ठीक नहीं लगा अतएव उसने अपने एक पुराने मित्र को खोज निकालने का निश्चय किया ।

उसके मित्र नेरा तोतला को पट्टणी सेना में कोई न जानता हो, ऐसी बात नहीं । वह गप्पी था और पराक्रम का मूल्य जानता था । आराम और आनन्द को छोड़ और उसे कुछ भी अच्छा नहीं लगता था । भोजन और हास्य विनोद के बिना तो उसका जीना असम्भव था । जहाँ रहता वहीं गांव भर के व्यक्तियों से विशेषकर स्त्रियां से परिचय करना कभी न शुकता था । सब जिस जिस स्थान पर पट्टणी सेना पड़ाव डालती थी वहाँ एक-दो स्त्रियों से विवाह करके घर बसाना भी यह कभी न शुकता था ।

हमीर समझ गया था कि इस महारथी की सहायता के बिना कुछ भी होना सम्भव नहीं है । अतः उसने खोकी पर जाकर नेरा तोतला का ता पूछा । त्रिभुवनपाल सोलकी का पता लगने में कठिनाई पड़ सकती है किन्तु नेरा तोतला का भोंरडा डूढ़ने में कभी परिश्रम नहीं उठाना डता था । तैलियों के मुहल्ले के नुक्कड़ पर एक सब परिणीता के घर में वह रहता था हमीर उस और मुडा ।

घर छोटा और भला था । एक और कोरू चक्कर काट रहा था । और दूसरी ओर एक तेनन बँठी गम्दी पीली रेवड़ियाँ बेच रही थी । 'दे पय में हर प्रकार की सही-गली वस्तुएँ दृष्टिगोचर हो रही थी ।

हमीर ने जाकर द्वार की साँकल खड़खड़ाई परन्तु कोई उत्तर न मिला । आवाज भी दी किन्तु किसी ने द्वार नहीं खोला । अन्त में उस ने निक्कट की दूकान पर बँठी हुई तेनन से पूछा ।

नेरा भाई यही रहते हैं ?

'हाँ ।

'तो उत्तर क्यों नहीं देता ?

लुगई को निकाल कर प्रातःकास से अन्दर ही बैठे हैं ।

‘तो मध क्या करू ?

पीछे से जा देखो बाड़े का द्वार खुला होगा ।

किधर से जाऊँ ?’

‘इस धोर होकर निकल जाओ ।

हमीर धीघ्रता से उस धोर गया । पबोसिन के बड़े धनुसार पिछला द्वार खुला हुआ था । उसे धकेल कर हमीर बाड़े में गया और वहाँ से घर में घुसा ।

उसकी पदचबनि सुन कर निकट ही के कमरे से आवाज आई ।

‘वा वा प स’—एसा लगा मानो कोई मुह में कुछ भरकर बोल रहा है । हमीर ने स्वर पहचान लिया ।

‘अरे ए सोतला ! आई किधर है ? हमीर अन्न करता हुआ अन्दर घुसा ।

कौ ओ कौ ओ बड़ी बठिननाई से गले के नीचे कुछ उतारते हुए सोतल का स्वर आया ।

अकेला बठा ब्रया कर रहा है रे ? आवाज देते देते मेरा तो गला ही बड गया । हमीर ने अन्दर पहुँच कर कहा ।

अन्दर का दृश्य बड़ों-बड़ों की चकित कर देने वाला था ।

मेरा को विधाता ने मनुष्य तो गढ़ा ही न था । हाथी बनाते समय वह भूल से आदमी के रूप का बन गया था । वह सम्बा था और कलनावीत विपुनाकार था उसका शरीर । उसकी नाक नुकीली तथा झुकी हुई थी उसके नेत्र शीतल के समान विंगाल थे । तान इतनी गोलाकार थी कि मोटी शायर भी उसके सामने पानी भरे । उसके हाथ और पाँव मोटे और गोल थे । उसकी देखकर अष्ट निपुण कारीगर द्वारा मनुष्य शरीर की सम्बाई के माप के बनाए गणपति का स्मरण हो आता था ।

यह और पुरुष उकड़ू बठ थे और बड़ी बठिननाई से वह सामने पड़ी पाली में पड़े सड़ू उठा उठाकर मुह में रखते चले जा रहे थे । यह

प्रयोग इतनी सीधता और सफाई से हो रहा था कि कम वह मुह में पड़ते और कम गले के नीचे उतरते यह निश्चय करना सरल नहीं था। यह उतावला और इस तरह हाँप रहा था मानो घमनी चल रही हो।

उसने आँखें फाड़ कर हमारे की ओर देखा और उसे पहचाना। एकाएक उसकी आँखें बन्द हो गईं। उसके चिन्तातुर मुख पर हास्य फैल गया। उसने पटती हुई घमनी की तरह एक निश्वास सेते हुए कहा—

की की न ह मी र।

‘हाँ मैं।

हा—हा—हा नेरा बोला—हो—अ अच्छा हुआ कि तुम पहले आ गए। मैं तो समझा कि मरी वह बहुत है। मारने के लिए मैं यह कसछी उठाने वाला ही था।

अरे बठ जा ! यो वह न सुगाई के आने से पहले तारे लड्डू उठा जाने का विचार कर रहा था।

हो—हो—हो ! नेरा के हास्य से घर गूँज उठा तो क्या बहू ? दो दिन तक उसने मुझे भूखों मारा और आज प्रातः काल नोपित होकर पीहर चली गई तो मैंने यह किया। हमीर तुझे घाए कितने दिन हो गए ? से एक लड्डू तो खा खा। वह नेरा ने बचे हुए ग्यारह लड्डूओं में से एक हमीर को दे दिया।

मुझे नहीं खाना है तू भूखा है तू ही खा ले। हमीर ने उदारता दिखाई। बिना और आग्रह के नेरा ने वह लड्डू अपने मुह में रख लिया।

मे आज प्रातःकाल ही आया हूँ। मित्र तुमसे एक काम है।

खा खा खा लेने दे। नेरा हवलाता नहीं था केवल अटकता भर था और वह भी प्रथम शब्द पर। एक बार उसकी जीभ बस पड़ती तो फिर उसे खोजना बहुत कठिन होता था।

अच्छा, खा ले।

नेरा ने मोदकों को सीधातिथीघ्न गति से मुह या गले में रोके बिना पेट में पहुँचाना धारम्भ किया। ग्यारह के ग्यारह लड्डू, समाप्त कर हाथ धो हमीर के निकट आ उसने न व क्यों दोस्त कहकर हमीर की जवा पर हाथ मारा। मित्रता का प्रमाण नेरा ने इतने बठोर ढंग से लिया कि हमीर को क्रोध आ गया किन्तु स्वाय होने के कारण कुछ कह न सका।

देख मुझे एक स्त्री की खोज करनी है।

‘क्या क्या ब्याहना है ? मरी सुगाई की एक बहन—

नहीं—नहीं। सुन तो सही। एक स्त्री का पता चाहिए।

तू तू ऐसी बात मत कर भाई।

‘क्यों ?

मैं मैंने तो व्रत ले लिया है।

मरे क्या व्रत ?

‘पराई स्त्रियों से बात न करने का। नेरा बोला।

मरे पागल ! मुझे स्त्री की बात नहीं करनी है सिर्फ दिव्यानी है। देख हम सभी भट बन गए, बस तू यू ही रह गया।

तु तु गुम्हीं सबने मुझे इस तरह रखा है। मैं युद्ध में होता तो भी तुम जाकर धुगली करते कि मैं पीछे रह गया हूँ और भाग गया हूँ।

धब भी इच्छा है।

‘कि कि कि किस प्रकार ?

‘एक स्त्री का पता बता दे तो आभ्रमन् निश्चय ही तुम्हें भट बना दें।

‘या आभ्रमन् ?

मूख ! उवाच पुनः और भृगुकच्छ के दुग्धाम्ब।

है ! मुह फाट कर नेरा ने पूछा काक का क्या हुआ।

वह तो बचली जा रहे हैं। क्यों उनसे थकता है ?

पट्टणी मन चाही कर सकती है। सम्य पाटन के नियम यहाँ कैसे लागू हो सकते हैं ?

हमीर और नेरा दोनों टेढ़े-मेढ़े रास्तों से होकर निविघ्न साम्बा महस्पाति के पुराने बाड़े में स्थित अविमुक्तेश्वर मन्दिर के सामने घा पहुँचे। प्रातःकाल आश्रमभट के घाने के समय यहाँ जसी नीरवना थी वसी इस समय न थी। वह मन्दिर प्राचीन पूजनीय और माननीय था फलस्वरूप लोगो को हलचल थी और उसके पीछे के कुएँ पर कई स्त्रियाँ पानी भर रही थीं।

हमीर और नेरा दोनों ने देवानथ में आकर दशन किए और फिर उसने पीछे के खनूतरे पर पानी भरने वालियों को देखने के लिए बैठ गए। बकार बैठकर आती जाती स्त्रियों को बस देखते ही रहना इन दोनों में से एक की भी प्रकृति से मेल नहीं खाता था। फिर लम्बी और अप्सरा के समान तो कोई स्त्री था ही नहीं रही थी। भत वह बड़े बड़े उकता गए। उनको अधीरता ने एक नया रूप धारण किया।

नेरा पासथी मारकर बैठ गया और चारों ओर भयकर कटाक्षों की वर्षा करने लगा हर जाने जाने वाली के साथ ठठौली करने और हसने लगा। उसका जीवन निम्न वर्ग के लोगों में ही व्यतीत हुआ था। भत उनसे सीखी रीतियों की वह यहाँ भी परीक्षा करने लगा।

अन्त में हमीर ने भी आते-जाते पर टीका करना आरम्भ कर दिया टीका करते ठट्टा करना भी आरम्भ कर दिया ठट्टा आरम्भ होते ही नेरा अपना नियन्त्रण खो बैठा। वह जोर-जोर से पानी भरती हुई स्त्रियों के लक्षणों का विश्लेषण कर लगा।

इन दो अपरिचित पुरुषों को इस प्रकार व्यवहार करते देखकर कुएँ पर पानी भरने वाली स्त्रियों में खबराहट फैल गई कुछ ने पानी भरा और कुछ बिना भरे ही यहाँ से चलने लगीं।

ये ये तो सब बली— नेरा बोला।

जाने दे । उबता कर हमीर ने उत्तर दिया ।

कि कि किन्तु तेरी अप्सरा तो भाई नहीं ।

कौन जाने कब भायगी भाएगी भी अथवा नहीं ।

‘भा ई ई ई । ठुमक— बहकर मेरा ने एक युवती की ओर देखकर झौंस मोच दी । वह युवती गब से ठुमककर रुक गई और क्रोध से पीछे धूमो ।

क्या—हुमा ?’ मेरा बोला ।

वह युवती बबराई ओर बैसे ही क्रोध में पीछ धूमो । सामने शिव स्तुति करके मंदिर से निकलते हुए मणिमद्र महाराज मिल गए । वह दुर्गपाल के एक भात्रित की पत्नी थी । वत मणिमद्र को देखकर उसमें साहस आया वह खड़ी हो गई । थोड़ी दूर पर लौटती हुई एक दो स्त्रियाँ भी खड़ी हो गई ।

‘भाई ! ऊपर दो हरामखोर बठ हुए हैं उन्हें यहाँ से निकाल बाहर करो । व हमारे साथ ठट्टा कर रहे हैं ।

अच्छा ? मणिमद्र ने कहा ।

हां । देखो तो किसी को पानी भरने ही नहीं देते । दूर खड़ी हुई स्त्रियों में से एक ने निकट आकर कहा ।

उन्हो में अभी निकालता हूँ । कहकर मणिमद्र धीरे धीरे बबूतरे पर होकर पीछे की ओर गया । ए भाई ! कौन हो तुम लोग ? यहाँ किस काम से बठे हो ?

हमीर ने मणिमद्र को पहचान लिया और छोछ स्वर में पूछा—
‘ए महाराज तू कहीं से टपका ?

कौन बाँधत भाई का गण यहाँ कसे बठा है ? और इन सबकी हँसी क्यों उड़ा रहा है ?

अपने स्वामी के सामने हमीर मणिमद्र का सम्मान करता था किन्तु इस समय वह आपे से बाहर हो गया ।

‘ए भूदेव ! तू अपना काम कर न हमारे बीच में क्या पड़वा

‘उत्तर दे, किसने हाथ उठाया ?’

मन्दर धाते हुए रेवापाल का कठोर स्वर धाया—‘मैंने !’

वेधारा मेरा काँपकर दो पय पीछ हट गया। आत्मभट धकित हो गया। प्रातः काल वह रेवापाल को समझ नहीं पाया था और इस समय उसके मुह से ये शब्द सुनकर उसकी क्रोधी प्रकृति को आघात-सा लगा। इस घात और कम धोलने धासे पुरुष के रूक्षपन से उसे लौभ होता था।

‘तुमने ?’

मेरा रेवापाल को देखकर मुह बाएँ दूर खिसकने लगा।

हाँ।

‘क्यों ?’

आपके सनिक ने एक ब्राह्मण का अपमान किया था। कहकर रेवापाल जाने को उद्यत हुआ। आत्मभट के अन्तर में ज्वाला भभक उठी। उदा महेता का पुत्र भृगुकच्छ का भावी दुष्पात और अपमान मर कर देने के कारण उसने सनिक की यह दगा ! वह वग से रेवापाल के पास गया और मार्ग रोककर उसके सामने खड़ा हो गया।

रेवापाल ने दान्ति से कुछ समय तक कठोर दृष्टि से उसकी ओर देखा और फिर तिरस्कार से कहा—‘आत्मभट जी ! मुझमें भिक्षु से कोई साम नहीं होगा। आत्मभट समझ न पाया कि क्या कहे। एना गलूम होता था मानो निष्कण काश के कारण उसके मुह में भ्रम मर आयेंगे।’

‘जानते हो तुमने मेरे मेरे नीकर की टांग काट दी। कुछ समय पश्चात् वह बोला।

‘पांव ? रेवापाल ने कठोर और अपमान मरे स्वर में कहा पट्टणी उच्छ खल बनेंग सो सिर भी काटना चड़ेगा। रेवापाल के होठ और भी कठोर हो गए।

आत्मभट ने चारों ओर रक्त विपाशित दृष्टि से देखा। उसे ध्यान

धाया कि उसके हाथ में हथियार भी नहीं है। ताट के नगरसेठ के पुत्र के साथ सम्मेलन कर व्यवहार करने को उसके पिता की चलावना स्मरण भाई, वह कुछ ठहा पड़ा।

मदारी रेवापाल ने बात पूरी की। आप मेरे पिता के प्रतिपि हैं मेरा मार्ग छोड़ दीजिए।

आक्रमण को कुछ भी न सूझ पड़ा। घन्ट में वह बोला 'मैं ताट का दुग्पाल हूँ। मैं तुम्हारी चमकियों से डरूंगा नहीं।

पाटण के दुग्पाल की चमकी में मूखू गा नहीं। चमकती हुई मोर्चों से रेवाराम ने कहा और तिरस्कार से भाग बढ़ गया। भाग बढ़ कर जैसे ही वह भूमा बसे ही उस और आक्रमण, दोनों को एक साथ ही चुपचाप खड़ा सुनता हुआ काक दिखाई पड़ा। उसका मुख गम्भीर था।

'रेवामाई !' उसने बढ़ी मिठास से पूछा, 'क्या हुआ ?

मदरान !' आक्रमण छोड़ता से बोला। उसमें साहस का संचार हुआ।

मृगकृच्छ्र धाते ही मेरा—मेरे पाटण का अपमान हुआ है। मेरे हमीर का पाँव काट डाला।

रेवामाई ने।

हाँ। यह अपमान मैं कैसे सहन कर लूँ ? उसतकर लौटते हुए जोय स आक्रमण ने कहा। काक ने दृष्टि फेरकर रेवाराम को देखा।

'पूछो अपने भुट्ठे की स्त्रियों से और अपने मणिमन्त्र से ! तिरस्कार स रेवापाल बोला।

काक की भाँसों दमक उठीं। आक्रमण कीका पड़ गया। उस नेरा की बात याद भाई। अवश्य उस स्त्री की सोज करते हुए ही हमीर को यह शिक्षा मिली है। तुरन्त उसने इस सबको ढँक देने का निश्चय किया। पूछा है ?

बनायास ही काक की दृष्टि नेरा तोरने पर पड़ी। उसने कठोरता

से पूछा, तू यहाँ क्या कर रहा है ?

नेरा काँप उठा । वह दुःखपास से भली भाँति परिचित था । उसने हाथ जोड़ लिए 'बा बा पू म म—

मटराज ! भ्रात्रभट ने कहा हमीर को उठाकर यही लाया है । काक ने रेवापाल की ओर देखा ।

'यह भी वहीं था । उसने उत्तर दिया ।

एक छलांग मारकर काक नेरा के निक्कट गया और उसका कान पकड़कर भसल दिया ।

नेरा ! काक ने पूछा 'क्या हुआ था ?

'बा पू ' उसने निःसहाय सी दृष्टि से भ्रात्रभट की ओर देखा । किन्तु उधर से कुछ होता न देखकर पुनः काक की ओर न देखा । काक की झालों में अगार मटक रहे थे ।

'म म महाराज ! नेरा बोला हमीरभट ने ए एक ब्राह्मण को ठो ठो ठोकर मारी और रे रेवाभाई ने उसकी दाँग काट दी ।

'ठोकर क्यों मारी ?

ब्राह्मण ने हमीर को गाली दी ।

काक ने बठोर होकर रेवापाल की ओर देखा ।

'रेवाभाई ! क्या सच्ची बात है ?

'हमीर पानी भरने वालियों के साथ ठट्ठा कर रहा था ।

भ्रात्रभट का हृदय काँप उठा ।

और तू भी ? काक ने नेरा से प्रश्न किया ।

नहीं—नहीं—नहीं—था ।

'नूरा ! काक की बाणों में मरी रोदता से भ्रात्रभट भी सहम गया जो फिर मेरे हाथ पड़ा सो यह सिर धड़ पर नहीं रहने का । सोमेश्वर है !

जी ! कहकर बाहर लड़ा हुआ गुमट मन्दर आया ।

'इस बदजात को सात मार बाहर निकाल दो ।

‘ओ माया ! वह सोमेश्वरजी भाँखों से ही मेरा कोमाजा दी । मेरा धीरे-धीरे बाहर चला गया ।

‘भट्टराज !’ धीरे से भ्रात्रभट्ट काव से कहा इस बिभारे को—
 ‘काक भ्रात्रभट्ट की घोर घृणा भ्रात्रभट्ट मालम है यह कौन है ?
 यह पाटन का मीच से-नीच सनिक है ।

‘किन्तु मेरे हथीर को यही लाया था ।

‘नहीं साता तो क्या कोई अनर्थ नहीं हो जाता । रेवाभाई ने तो दाँग काटी मैं होता तो सिर काट देता ।

भ्रात्रभट्ट कुछ भी न बोल सका । काक कुछ नरम पड़ा भाई !
 इस देश में तुम विदेशी हो । यहाँ के लोगो में ऐसी दुर्भावना न कलनी देनी चाहिये ।

रेवापाल ने तिरस्कार से एक बार काक की घोर देखा घोर घर में चला गया । काक भ्रात्रभट्ट को लेकर ऊपर गया ।

भ्रात्रभट्ट ! प्रस्थान करने से पहले एक सलाह दू ?

‘हाँ ! लज्जित होकर भ्रात्रभट्ट बोला ।

साठ भीर युगरात भिन्न हैं यह बात यहाँ के लोगों के हृदय से निकाल देनी है । नहीं तो

‘नहीं तो ?

‘नहीं तो ! मुझे मालूम नहीं कि झुवसेन के अनुयायी केवल अक्सर की प्रतीक्षा में बठ हुए हैं ।

‘क्या वह रहे हैं भाप ? हसकर भ्रात्रभट्ट बोला ।

‘काक के मुख पर कूटनीतिज्ञ जसी गम्भीरता छा गई ।

‘भाबड भाई ऐसी बातों में हसामे तो किसी दिन पाटन को रोना पड़ेगा । तुमने भाते ही रेवाभाई का अपमान किया । यह एक गलत काम है । जानते हो यह कौन है ?

‘हाँ ।

‘नहीं तुम नहीं जानते । जानते होते तो इतनी छोटी-सी बात पर उससे

मिठ न पड़ते । घाँघरमट ! यह जितना सीधा है उतना निर्जीव मही है । साट को राजसत्ता अवश्य जयसिंहदेव महाराज के हाथ में है, किन्तु उसकी आत्मा और उसका उत्साह दोनों रेवापाल में निहित हैं । वह साट के गौरव का अवतार माना जाता है । इसका अपमान होने पर सम्पूर्ण देश गरज उठगा ।

इसका अर्थ यह हुआ कि यह पाटन का शत्रु है ?

चाहो तो यही माम लो । किन्तु उसे छोड़ने जाओगे तो साट खो बैठेगे । इससे बिगाड़ना मत । नहीं तो इतने वर्षों का सब किया-कराया धूल में मिल जायगा । काक ने कहा अब मैं जाऊंगा । तुम्हें और नगरसेठ को भरे महा भोजन करना है इसलिए नगरसेठ के आते ही चले आना ।

१५

काक ने अपनी स्वाभाविक विसमयता से अनुभवहीन घाँघरमट का सटकपन और अपनी ओर रेवापाल का तिरस्कार देख लिया था । उसके मृगुकण्ठ छोड़ देने पर पीछे क्या क्या होगा उसकी एक हल्की माँकी छोटी प्रस्थान से पूर्व ही दिखाई दे गई उसने दूरदर्शी मस्तिष्क में एक चिन्ता घर कर गयी ।

इस चिन्ता में एक भयकर चित्र उसकी चेतना में चित्रित कर दिया और उसे देखकर वह काँप गया । वह मजरी को यहाँ भवेली छोड़कर आ रहा था । वह मर जाय या साट में विशोह भाँधी आ जाय तो उसका क्या होगा ? उदा महेता के हाथों बङ्गुए अनुभवों का आस्वादन उसके सम्मुख आ गया । बेचारी को पुन वैसे ही सहन करना पड़े तो कौन इसकी सहायता करेगा ?

)

भ्रात्रमट की या पट्टणी भटराज भाषव की सौपना सम्भव नहीं था और साट में ऐसा कोई भी म था कि विपत्ति के समय उसकी पत्ति को आश्रय दे सकें ।

क्षण भर के लिए काक की आँखा के सामने अंधेरा छा गया । यहाँ तक उसने न जाने किनने आदशों का पालन किया था और उन्हें प्राप्त करने के लिए घनेकों कठिनाइयाँ भेँची थीं । इस समय तो इन सबके फल भीठे हो लग रहे थे । उसकी प्रियतमा सुख से जीवन-व्यापन कह रही थी उसका नाट देग परतत्र होने पर भी गौरवशाली था उसका स्वामी अमर्षिहृदेव की आज्ञा के साथ हा-साय उनकी ह्याति भी चारों सिंहासनों में फल गई थी ।

परन्तु यह सब इस समय अवास्तविक लगने लगा । सौरठ जाकर यदि वही वह बंदी बना लिया जाय या प्राण से हाथ धो बैठ तो मजबूरी तो दुली और निराधार हो ही जायगी साथ ही साट में दग बलगा अनीति विजेता की क्रूरता और पराजित के दुःख पुन उमड़ पड़ेंगे और फूलझरणी के जलने के बाद जैसे उसकी राक्ष मात्र धूल में मिचती है वही दशा उसकी अपनी कीर्ति की हो सकती है । ऐसे परिणाम की समस्त सामग्री इस समय तैयार थी । जयदेव को उससे दृढ़ था उन्हा इस समय राजा का विश्वासपात्र बनकर वर का बदला लेने के अवसर की ताक में था विनाश के छार पर पहुँची राणकदेवी उसे हारते हुए का सहायक बनने का निमन्त्रण दे रही थी यहाँ से वह जा रहा था और साट की समस्त समस्याएँ भ्रात्रमट जैसे अनिमित्त अनुभवदीन मख व्यक्ति के हाथों में छोड़नी पड़ रही थी ।

पल भर के लिए उनके साहसी हृत्त में निराशा भर गई और अमर्षिहृदेव की आज्ञा का अनुसर करने की बात मन में आई । दूधरे ही क्षण वह समझ गया कि मृगुकन्ठ से जाने के अतिरिक्त अन्य कोई चारा ही नहीं है ।

यह सी पड़ा और पुन नगरसठ की हवेसी के भीतर चला गया ।

‘रेवामाई ऊपर हैं ?’ उसने एक सेविका स्त्री से पूछा ।

‘हाँ । थोड़ी ही देर हुई कमरे में गये हैं ।

घबपन में उसने घोर रेवापाल ने सम्पूर्ण घर में रौं मारा था इसलिए वह तुरन्त रेवापाल के कमरे की ओर चला गया । रेवापाल का कमरा सबसे दूर घर के छोर पर था ।

उसने सीढ़ी चढ़ते चढ़ते आवाज दी रेवामाई ! कोई उत्तर नहीं आया । काक लपककर कमरे में गया तो दखा कि वहाँ वह नहीं था । उसने गदन लम्बी कर द्वार क बाहर देखा तो भी कोई दिखाई न पडा । उसने फिर आवाज दी किन्तु कोई उत्तर नहीं आया ।

काक विस्मय में पड़ गया । रेवापाल घर के लोगो में बहुत बँठता बोलता नहीं था । द्वार से बाहर भी निकला नहीं था । फिर भी उसका दुपट्टा और उसकी पगड़ी कमरे में नहीं थे ।

काक पीछ की खुली हुई खिड़की की ओर गया और चकित हो उठा । पीछ की ओर उतरने के लिए एक सीढ़ी रखी हुई थी । वह सुकृता छिपता खिड़की के निकट गया और बाहर देखा ।

इस पीछ के छोटे-से बाड़े में कुछ वक्ष थे और गींगाना के रूप में उसका उपयोग होता था । काक ने ध्यान से सुना—एक दो व्यक्ति चुपचाप वार्तालाप करत हुए सुनाई दिए । रेवापाल की आवाज भी सुनाई दी । यदि वह भ्रुकुच्छ में न होता शायदा वहाँ का दुग्पाल न होता तो भागे बढ़कर यह निश्चय कर लेता कि रेवापाल किससे बातें कर रहा है । इस समय भागे बढ़ने से लाभ न हागा यह वह जानता था । इतना तो स्पष्ट था कि किसी सबत कारण के बिना रेवापाल जैसा मनुष्य इस प्रकार पीछ के गाय से जाकर बात नहीं करेगा । ऐसा लगता था कि रेवापाल ने कोई दाय खेमना प्रारम्भ किया है । पाटण की सत्ता नष्ट करने के सिवा और कोई दाय रेवापाल खले एसी सम्भावना तो थी ही नहीं । इतने में पीछे से पगध्वनि सुनाई दी । काक सावधान हो गया और द्वार की ओर बढ़ा । द्वार तक पहुँचने पर

एक स्त्री मिली ।

‘बनो मायी !

रेवापाल की पत्नी बेनां चमकी कीन बाक ! तू—अरे तुम यहाँ ?

हाँ मैं ही ! काक हसकर बाना यह घर कहीं छूट सकता है !

बेनां पत्तली घोर सम्बो थी । रेवापाल की दुष्क पर ससार की नौका गर बठकर वह बेचारी सहनशील घोर एक्निष्ठ बन गई थी । जितना भ्रमानुषी रेवापाल था उतनी ही वह भी थी । समने प्रम और मान्तर राम रग इच्छा-तृप्ता माँ समा कुछ स्वेच्छा से भूला लिए । पति की सेवा भर के लिए वह खोबित थी । जिनों तक रेवापाल उससे नहीं बोलता था और न बहो बोलने का प्रयत्न करती थी । यदि भयों तक रेवापाल न सो पाता तो वह बिना पलक झपकए पलग के पाए के पास बठी रहती थी । कई बार रेवापाल उपवास करता तो बेनां भी प्रम-जम का त्याग कर देती । जब से जबूसर गिरा तब से रेवापाल ने काक से मिलना जूना बन् कर दिया था और तब से बेनां ने भी काक से बोलना बन् कर लिया था । इस समय बेनां चमक उठी और उसने न बानन का वत भग हा गया ।

कैसे घाना हुआ ?”

हाय रे दुर्भाग्य ! सोचा भी न था कि ऐसे प्रदन का भी क्षणी उत्तर देना पड़ेगा ! खर, इनलिए भाया है कि ‘मुझे माई से और तुमसे भेंट करनी थी ।

मुमसे ? कदण हँसी हमकर बेनां बोली ।

हाँ ! भच्छा हुआ भेंट हो गई । तुम्हारी बहन को तुम्हारे हाथों सौपना है ।

मेरे हाथों ? भला मैं क्या कर सकती हूँ ? और तुम ।

मैं सोरठ जा रहा हूँ । इसीलिए मजरी की माई भावज को

छोपना है ।

बेटों ने गदन हिसाई— मैं कुछ नहीं जानती । तुम जानो और तुम्हारे भाई जानें ।'

किंतु भाई हैं कहाँ ? इसीलिए तो मैं भाया हूँ । अभी वह कहाँ मिलेंगे ?

तुम सब आघोले ?

कल । आज संघ्या को मिल सकेंगे ?

'संघ्या को तो दफन करने जाएंगे ।

गणनाथ महादेव पर ध्रुवसेन सेनापति के दफन करने जाते हैं न ? यही ठीक है । कहना संघ्या को उनसे वही मिलूंगा । मैंने जो कहा वह कहोगी न ?

यदि वे पूछेंगे तो ? नहीं तो नहीं ।

चाक इस स्त्री की रमागवति पर विचार करने लगा और चुपचाप प्रणाम कर विदा हुआ । भाते वाली विपत्ति के तारा की भस्मष्ट भकार उसके कानों से निरन्तर टकटाने लगी ।

१६

बहुत ध्वन ही गया आश्रमट । न जाने कसे कसे आनन्द उठाने की इच्छा लेकर वह मगुकच्छ भाया था किन्तु यहाँ से पाँव धरते ही मोहर छाया अपमान उठायी और हृदय भी कोई अपरिचित दर गई । अब तक की आयु में इतने दुःखा की इसनी लम्बी परम्परा का अनुभव उसने नहीं किया था ।

इतने में मगरसेठ था गए ।

'महा हा, मेरे खमात के मन्त्री के चिरंजीव !' तेजपान सेठ ने

कटाक्ष मरी घावाज में कहा मरे तो भाग्य खुल गए। उन्होंने भ्रात्रभट का भालिगन किया मुझे तो प्रातःकाल ही से भग रहा था कि भाज मेरे भाग्य चलने वाले हैं। कहो उग महेश की कृपा तो है न ?

भ्रात्रभट की समझ में यह व्यक्ति भी नहीं आया। उसने दाद मिथी उसे दे। परन्तु उसकी वाणी में स्पष्ट कटाक्ष था। वह गम्भीर बात कर रहा है या ठट्ठा कर रहा है यह भी उसके मुख से समझा नहीं जा सकता था। वह एक कानी घाल के कोने से बराबर भ्रात्रभट को देख रहा था।

अरे ए घकर ! जैसे बिट्कर उन्होंने अपने दास को पुकारा भटली की कुछ भ्रात्रभटकी ? भरमुखे गाँव के दासों में एक कोड़ी की भी तो समझ नहीं होती। जाने कसे अवकाश के समय में बनाये गए थे ! कहिए भट जी चित्त ठा प्रसन ? खेद है हमारे वहाँ तो पाटण जैसे भानन्द नहीं है।

मुझे तो आपका भुगुञ्छ बहुत माया।

अजी पाटण की बराबरी वहाँ ? काज भट जी तो भाज चले। इनके भी पाँव में बबरी लगी है। नगर सेठ ने कहा।

हाँ उन्हें महाराज न बुलाया है।

'क्यों नहीं ? तेजपान न पुन अस्पष्ट से स्वर में कहा एस व्यक्ति महाराज के निकट हाँ तो वहाँ हों ? महाराज की कीर्ति भी तो कितनी है। ससार में मनुष्य से लेकर पशु तक उन्हीं का कीर्ति-गात किया करते हैं।

भ्रात्रभट देखता रहा। फिर कहा हाँ।

चलो अब स्नान कर लो। दुग्पाल के यहाँ भाज बहुत समय सगगा। मैंने तो प्रातःकाल ही स्नान कर लिया था। शीघ्रता करो नहीं बेघारे ब्राह्मण के घर का भन्न ठण्ठा हो जायेगा।

इस तीक्ष्ण वाली का प्रसाद आस्वादन का भीषकता सा भ्रात्रभट महा धीकर संघार हुआ और नगरसेठ के साथ पालकी में बैठ कर

‘तो इसमें आशा किस बात की ? रेवा ! तेरे अन्तर की शान्ति प्राप्त हो यही आशना तो मैं निश्चय किया करता हूँ ।

गुरुदेव ! आप मुझे समझ नहीं । आप चाहते हैं वही शान्ति मैं नहीं चाहता ।

‘तो ?

पट्टणी आपस आयेँ तभी मुझे शान्ति प्राप्त हो सकेगी ।

अब तक तू यह भूला नहीं ? रेवा ! कितनी बार कहूँ ? भणाल कुबेर का पाटन से गठबन्धन हुआ तभी से पाटन हमारा स्वामी हो गया । अब इतने वर्षों पश्चात् हो भी क्या सकता है ?

गुरुदेव ! आप भी इस प्रकार निराश हो जायेंगे तो—।’

भाई जहाँ तक आशा की एक भी किरण बचकती रही मैं अहिन रहा । किंतु अब आशा रखना विशिष्टता है ।

आवेश के बग से रेवापाल ने भाँखें मीच लीं । उसके होंठ तनकर कठोर हो गए ।

गुरुदेव ! आपने संसार त्याग दिया इसीलिए विशिष्टता लगती है किन्तु आज जैसा अवसर पुनः मौटकर नहीं आने का ।

अवसर है—मुझ तो ऐसा विश्वास होता ।

न हो अवसर न भी हो तो अब मैं चक गया हूँ मुझसे अब वह सब सहन नहीं होता देखा नहीं जाता । अब तो ऐसा लगता है कि या तो मैं मिरा जऊँ या पट्टणियाँ को मिटा दूँ । आँखा से आँसू पोंछते हुए रेवापाल ने कहा ।

क्यों बात क्या है ? तनिक आसुरता से प्रह्वानन्द ने पूछा ।

गुरुदेव ! ज़िगर दृष्टि जावो है साट की मान घोर सुख की नष्ट होते हुए देखता हूँ । आज भी एक बात हो गई । भविष्येश्वर के देवत के सामने दो पट्टणिमों को मैंने स्त्रिया की हँसी उड़ाते हुए देखा । एक सैनिक के हाथों एक पवित्र आह्वान को अपमानित हाते देखा । ऐसा आज हो हुआ हो यह बात नहीं प्रतिदिन कुछ-न-कुछ होता ही

रहा है। मयमता की भी सीमा होती है। निश्चित ही नरक भी इससे अधिक भयंकर नहीं होगा।

‘काह क्या करता रहा है?’

‘काह क्या कर सकता है? वह तो एक चित्तोन्मत्त है। वह मग्न-मग्न है उसकी चपली है किन्तु उसकी पीठ फिरत ही अनेक भ्रष्टाचार क्षण सप जात है। और फिर वह भी कम जा रहा है।’

‘कहाँ?’

‘बपना। उसके महाराज की छात्रा है। और नाच की सत्ता जिसके हाथ सौंसा जायगा यह भी सम्भवतः भाप नहीं जानत होंगी?’

‘नहीं।’

‘एक मन्त्री का पुत्र है। न उसमें बुद्धि है न व्यवहार-कुशलता और न शीघ्र। उसका भाषान रूने से ता कट भरता है अधिक भयंकर है इसीलिए मैं कहना था कि भवसर बहुत अच्छा है।’

‘वह ठहरा नहीं है?’

‘भरे नहीं। विशाखा तो उससे बहन का पाणि-ग्रहण करना चाहत है।’

‘मन्त्र?’

‘हां। परन्तु मेरा क्या बनगा तो अधिक महत्ता जसा प्राप्ता है वसा बचकर नहीं जाने पायेगा। शुद्ध। साधिए। भोजनाना न हमें जितना अच्छा भवसर प्रदान किया है। त्रिभुवनपास नहीं काह नहीं पट्टी सदा नाम-मात्र की है, और काबिल और माधव जसों के हाथ में रहा साट का सत्ता। शुद्ध। आनकी एक द्वार से भाट फिर हमारे हाथ में था जायगा। आनुरता से ब्रह्मानन्द का धोर दसत हुए रेवापान जोना शुद्ध। साधिए तो सम्मान महाराज की साट भाव कृचनी रौनी जा रही है। निराधार साट को भाप सहस्रपदा प्रान न करेंगे तो कौन करेगा?’

‘बस। मैं तो सन्यास से लिया है, इसलिए मरी बाउ ता छाह

ही दो । ओर तुम जो चाँची खड़ा करना चाहता है उसमें मुझे सम्मदारी नहीं दिवाई पड़ती । ब्रह्मानन्द ने गदन हिमाते हुए कहा ।

तो क्या बठा रहूँ ? गुरुदेव ! एक हजार योद्धा उत्पर हैं पन्द्रह दिन में पाच हजार पदाति भृगुकच्छ आ पहुँचेंगे । तनिक धीमी आवाज में रेवापाल ने रहस्योद्घाटन किया ।

क्या कर रहा है ?

यू तो पन्द्रह दिन से मुझे योद्धा बहुत सूचना दी । जसे ही आज साम्रमट आया मैंने सम्मद लिया कि इस अवसर पर सूचना नहीं चाहिए । मने चारों ओर आदमी भेज दिए हैं । अष्टमस्तुतीया के पहले ही भृगुकच्छ से मोड़वो तक का प्रदेश हमारे अधिकार में आ जायगा । धीमी किन्तु उत्साह भरी आवाज में रेवापाल बोला ।

तूने तो सब कुछ आरम्भ भी कर दिया है । -

'हां । किन्तु आपकी आज्ञा के बिना आपने नहीं बढ सकूँगा ।

वेदा ! तू जो करे उसमें तूझे विजय प्राप्त हो यही मरी कामना है ।'

देव ! इस समय तो यही भागीर्वाह बीजिए कि या तो विजय प्राप्त करूँ या देह त्याग करूँ ।

रेवापाल ! ऐसी एकनिष्ठा वाले को विजय ही प्राप्त होती है ।

रेवापाल एकाग्र दृष्टि से देख रहा था ।

देव ! एक याचना है ।

बोल ।

आप जोगिया वस्त्र त्याग दीजिए ।

ब्रह्मानन्द चमक कर पीछे हट गए ।

क्या ?

देव ! धृष्टसेन सेनापति के बिना समूचे साट का शीघ्र निरपेक्ष है । किसके नाम पर हम छाती ठोक कर खड़े होंगे ? किसके वचन हमें मृत्यु का आतिथन करने के लिए उत्साहित करेंगे ?

रेवा ! आपने ही तो कहा था कि अपने ही हाथों गँवाए हुए साट

में आपक लिए कोई स्थान नहीं है। तो महाराज ! ग्रहण कीजिए अपनी स्थान और फिर से साट को हस्तगत कीजिए। एक बार फिर निकल पड़िए, एक बार फिर अपने अनुप की टंकार से साट गुंजा दीजिए।

देव ! तेरे वचन मेरे मन को छतचा प्रवश्य रहे हैं।

'तो कहिए—मायेंव ? असयत्तीया को जोगिया त्याग करेंगे ?'

'नहीं।

देव ! आपने सुल नहीं।

कुछ समय तक ब्रह्मानन्द चुन रहे।

'देवा ! एक वचन देता हूँ।

'क्या ?

'तुम्हें यदि मेरी आवश्यकता जान पड़े, मेरे न रहने से ही यदि तरा प्रयास घुल में मिल रहा हो तो सन्देश भेज देना। जोगिया त्याग कर सदा धाऊँगा। यह तो ठीक है ? तनिक हँसकर ध्रुवसेन बोला।

देवापाल ने झुक कर ब्रह्मानन्द के चरणों पर अपनी माया टोक दिया। किसी धम्म रीति से वह अपनी वृत्तता प्रकट नहीं कर सका। गुरु ने शिष्य के भावे पर हाथ रखा। कुछ समय तक दोनों मौन रहे।

देव ! एक कृपा कीजिएगा ?' देवापाल ने प्रश्न किया।

'कह बेटा।

अपना परविजय देंगे ?

'अवश्य ! तुम्हारे पिता और कौन योद्धा उसका उपयोग कर सकता है ?

देव ! हँसी-हँसी में ही इस अनुप को परविजय नाम दिया था याद है ? अभी इसकी टंकार होगी वहाँ विजय निश्चित है।

बेटा ! वह उस घटारी पर रखा है, से ने। और जब मेरी भाव स्पष्ट हो तो इसकी वमान का फुन्ना निस्सकाश मेरे पास भिजवा देना। पद्मनाभ महाराज की पटरानी ने उसे बाँधा था। देवापाल

उठा और नीचे की अटारी में रखा धनुष खींचकर निकाला दुपट्टे से भ्रष्ट कर साफ किया और फिर भूमि पर रख कर कुछ देर तक उसकी ओर देखता रहा। वह पहले जसी ही दशा में था।

सचमुच यह धनुष ही है।

बेटा ! गमानाथ महादेव की कृपा है। जा अब विजय लाभ कर।

रेवापाल ने पुनः दण्डवत् प्रणाम किया, ब्रह्म नन् सरस्वती ने मौन रहकर ही आशीर्वाद दिया। दोनों चुपचाप किन्तु भारी हृदय से विदा हुए। दोनों को लग रहा था कि आज विधि उनके जीवन का नया पृष्ठ खोल रही है।

१८

रेवापाल भापड़ी से बाहर निकला तो उस समय संध्या हो चली थी। डलते हुए सूरज का प्रकाश और भीने धंधेरे आकाश में सवरण करते तारागण रेवा के तेज की गाम्भीर्य का पुट दे रहे थे। भक्त जसी तल्लीनता से वह नमस्ते के शान्त सट को देख रहा था विचारमग्नता वरुणा में धीरे धीरे वह छत पर गया।

आज उसके हृदय का भार हलका हो गया था। निराशा है कुम्ह लामे हुए उसके हृदय में आशा का नूतन उल्लास जाग उठा था। वर्षों की दूरी हुई आकांक्षाएँ आज पूर्ण होती दीख रही थी। जाट की स्वतंत्रता के लिए एक मयकर युद्ध करना ही उसके जीवन का उद्देश्य था वह उद्देश्य आज पूर्ति के सिखर की ओर अग्रसर हुआ था।

जम्हूसर मिरने के पश्चात् भी इस लक्ष्य को प्राप्त करने की आशा उसने क्षण-भंग के लिए भी न त्यागी थी। जाट की गृहदशा में कभी

उसे विश्वास था भ्रम उसे पट्टणिया की साट में बाहर निकाल दना कभी भी असम्भव नहीं लगा । बड़ी-बड़ा कठिनाइया में घोर बड़े-बड़े कष्ट उठाकर पाम-पोषकर बड़ी की हुई यह भाषा आज सिद्धि निवट थी ।

मन में इस भाषा की सजोये हुए भी व्यवहार-कुशलता वह नहीं भूला था । सम्पूर्ण नाट पर उनकी दृष्टि थी चारों ओर के उपद्रवी और घमन्तुष्ट योद्धाओं से उसका सम्बन्ध था और उसका एकनिष्ठा और दशमक्ति के कारण साट में उसका इतना सम्मान था कि भ्रमसेन के सम्पास ग्रहण कर लने के परचात् लोगों की आँखा में बनी वह था ।

नमदा की तरंगों की ओर वह देख रहा था । मन ही-मन उसने इस जागरित योगमाया की भव्य धपल किया और आशीर्वा की याचना की । उस लगा कि उन तरंगों से प्रगट होती हुई माता के कान्पनिक कर उस आशीर्वा द रह हैं ।

भद्र सुप्तावस्था में वह पचाविजय व प्रवण धनुषाण्ड पर हाथ रख कर सड़ा रहा । एका-एक किसी ने उसक कंधे पर हाथ रखा । कमक कर वह पूरा और अनायास हा हाथ तखवार की मूठ पर चला गया । सामन मुस्कराता हुआ दुग्गल सड़ा था ।

त्रौष से रेवानाम ने होंठ काट लिए । उसक दुर्माप्य का दूत उसक सम्मुख सड़ा था । इस समय भी वह उसे निश्चिन्त हाकर विचार न करने दे रहा था । सम्भव है वह जिसा बुरे मकल से उसक पीछे धारा हा ।

रेवामाई ? भन्त में मेट हो ही गई । काक बाना ।

कम जाया ? दाँत पीसकर त्रौष से सरसरायी आवाज में रेवा पास में प्रान्त दिया ।

प्राठवान मेंने बना भाभी से कहा था कि इसी समय मैं तुमसे मेट करने आऊँगा, सगता है उन्होंने तुमसे नहीं कहा ? काक न निर्दोष स्वर में कहा । रेवापाल अपने पुरान मित्र से परिचित था मत उसका

ही बाता में यह आ जाय ऐसा न था। कुछ देर तक वह धीरे-
काल कर देखता रहा।

किस काम आया है ? अधीर होकर रेवापाल ने प्रश्न किया।
मे कल घबली जाने वाला हूँ।
तो इससे मुझे क्या सरोकार ?
एक याचना करने आया हूँ।
किसी को दान देने की शक्ति मुझमें नहीं है। यदि हो भी तो
मुझे नहीं दूंगा। रेवापाल तिरस्कार पूर्वक बोला।

फिर भी याचना में तुम्हीं से करूंगा और तुम्हारे सिवा कोई
दान दे भी न सकेगा। काक ने नम्रता से कहा।
'दान माँग अपन पाटण के स्वामी से। हठ पूर्वक गदन हिलाते हुए
रेवापाल ने कहा।

जो दान बालमित्र दे सकता है वह ससार का स्वामी भी नहीं
दे सकता।

मे तेरा मित्र नहीं और न मुझे तेरी मित्रता ही चाहिए। यह
कर रेवापाल चलने लगा।

'किन्तु मुझे तुम्हारी मित्रता की आवश्यकता है। सुन तो लो कि
मे क्या माँगता हूँ ? फिर भले ही ना कह देना। मुझे एक स्त्री को
तुम्हारे सरदारण में छोड़ना है। रेवाभाई ! क्या तुमसे इतना सा भी न
हो सकेगा ? शांत रह इस कर विनोद ने काक ने पूछा।

काक की बात सुन कर रेवापाल एकदम रुक कर उसकी ओर घूम
गया। उसकी कठोर दृष्टि में नरमी आई। काक ने देखा कि रेवापाल
पिघला है।

'भाई ! मुझे अपनी भृशरुच्छ की या पाटणकी छनिक भी चिन्ता नहीं
है। उनका जो होना होगा होगा उनका जो कुछ तुम्हें करना हो करना।
काक ने रेवापाल के हाथ का धनुष देखकर कहा अभी तो एक निःसहाय
स्त्री की रक्षा करनी है। इतना-सा काम साट में तुम न करोगे तो कौन

करेगा ?

तुम्हें नहीं हो सकता ?

'वहा न मैं तो कल जा रहा हूँ । सम्भव है सीट बर न पा सकू ।

काक ने कहा ।

कौन है ?

'एक विद्वान ब्राह्मण जो पुत्री है ।

देवापाल खचित हो गया । पूछा कौन तेरी पत्नी ?

'यदि वही हो तो—

'उसे मैं अपने यहाँ क्यों धरण दू ?

मुझे कुछ हो जाय तो ?

तुम्हें और तेरे सगे सम्बन्धियों को कुछ भी हो इनसे मुझे क्या ?

मैं तुम्हारे स्थान पर हाँता तो यह नहीं कहता ।

'काक ! मैं तुमसे भली भाँति परिचित हूँ । तेरे जसा हृदयसौर मैंने दूसरा नहीं देखा । इस समय मृगुवच्छ मैं सब कुछ प्रभावस्थित हो गया है अतः तू यन्-केन प्रकारेण अपनी रक्षा करना चाहता है ।

भगवान सोमनाथ साक्षी है कि मुझे अपनी चिन्ता बिल्कुल नहीं है । किन्तु उस बेचाटी को विदेश से मैं लाया हूँ । मेरे सिवा उसका और कोई नहीं है । मानलो तुमन ताट पुन हस्तगत कर लिया—तनिक तौक्षण्य से देवापाल की ओर देख कर काक बोना तो इस बेचाटी का कौन सहायक होगा ?

अपने स्वामियों को क्यों नहीं सौंप जाता ?

सबमान्य सिद्धांत यह है कि अपना जीवन स्वस्व स्वामियों को नहीं मित्रों को सौंपा जाता है । काक ने उत्तर दिया ।

एसे तो कितनों ही के जीवन स्वस्व तूने रूट सिये । देवापाल ने कहा । काक समझ गया कि उसके सन्नों का प्रभाव देवापाल पर बढ़े वेग से हो रहा है किन्तु उसके हृत्त को पिघलाने के लिए अभी और

सावधानी से काम लेना पड़ेगा । उसने आधे क्षण तक विचार किया और फिर एक भयङ्कर प्रत्याज्ञा छोड़ा ।

‘रेवा माई ! तुम्हारे जीवन सर्वस्व को पाटण भिजवा दिया सम्म घत उमी का यह प्रतिवार दे रहे हो क्या ?

रेवापाल बचपन से लीसादेवी के धरण पूजता था । वह स्वामी भक्ति की या और कुछ यह कोई नहीं जान पाया । जब से ब्याह कर लीसादेवी पाटन चली गई तब ॥ उसके हृदय में स्वदेग की प्राण को छोड़ और कोई सगन बंधो भी थी या नहीं यह भी कोई नहीं जानता था । किन्तु काक से कुछ भी छिपा हुआ न था । वर्षों से छिपाए हुए अण पर उसने ऐसा तीव्र आघात किया कि वह फिर हरा हो उठा ।

क्या ? अमककर रेवापाल गरज उठा । उसकी आँखा में अग्नि प्रज्वलित हो उठी । आवेश में आकर उसने तलवार निकाल ली । मीत माई है क्या ? गरज कर वह बोला ।

तुम्हारे हाथों मीत—इससे बढ़कर अच्छी वस्तु और क्या हो सकती है ? मुस्कराते हुए शांत और प्रसन्नचित्त से काक बोला । लीसादेवी का पाणिग्रहण सोलकी के साथ कराया उसी का घर निकाल रहे हो क्या ?

बुप—रहो—रेवापाल धीरे किन्तु इस प्रकार धाता मानो रबन ही पी जायगा ।

क्या क्या मेरी बात असत्य है ? मणालकु बर यदि यहाँ होती भी तो तुम्हारा मनोरथ पूरा नहीं होता । कृत्रिम तिरस्कार ॥ काक बोला ।

घाण्डाल घ्राह्यण ! काँपते हुए स्वर में रेवापाल बोला तेरा समय आ गया है अब या तो तू नहीं या मैं नहीं । निकाल अपनी तलवार । बिना युद्ध किए तुझे नहीं मारूँगा । तेरी पापी जीभ को अब एक शब्द भी न बोलने दूँगा । चल निकाल । रेवापाल के मुँह में आग आ गए ।

घान्त रहकर मुस्कराते हुए काक ने गदन हिलाकर भा कर दी ।

रेवामाई ! मैं तुम्हारे सामने मैं सत्य नहीं उठाऊँगा ?

‘क्यों ?

मैं कायर नहीं किन्तु यदि हम लड़ें तो तुम्हारे मनु निश्चित है। जानते हो कि मैं तुमसे दुगुना बलवान हूँ और अपने बालमित्र को मैं मारना नहीं चाहता।

रैवापाल के क्रोध की सीमा न रहो। वह चेतना खो गयी। उसकी दृष्टि में काक ही उसका एक मात्र गुरु था वही उसकी भावनाओं में सबसे बड़ा शक्ति था। अतः उसे मौत के घाट उतार देने में ही उस अपनी और लाट की मुक्ति ढिंढाई दो।

‘पानी ! लड़ा रह। अभी तूरे दो टुकड़े करता हूँ। कहकर वह तनवार उठाकर आगे बढ़ा। काक कठोर हाकर तिरस्कार से देखता रहा।

यही ता देखना है कि किस प्रकार यावक ब्राह्मण को मारकर रैवापाल अपनी टक पर पानी फेरता है ? यह से काक न कहा।

‘रैवापाल का टक ! इन शब्दों के बानों में पन्त ही रैवापाल रुक गया। उसकी तनवार निवनी-नी-निकली रह गई।

रैवापाल कभी अपना टेक नहीं त्यागता। निवट ही से एक मधुर स्वर आया।

दोनों धूम। निवट ही तारों के क्षीप प्रकाश में तेजस्वी और गौरवयुक्त ब्रह्मानन्द सरस्वती खड़े हुए थे। काक ने साजग प्रमाण किया। रैवापाल का उठा हुआ हाथ नीचे झुक गया और उसका हाथ से तनवार छूट पड़ा। वह धरती पर बैठ गया और दोनों हाथों में भावा रसकर सिंचन लगा।

‘रेवापाल, यह क्या ? काक दो घनिष्ठ मित्रों को क्या यह सब शोभा देता है ?

रेवापाल ने हाथों में से छिर नहीं उठाया । काक मुस्कराते हुए देखता रहा ।

गुरुदेव ! घनिष्ठ मित्र ही तो इस प्रकार लड़कर फिर एक हो जाते हैं । कल मैं सोरठ आने वाला हूँ इसलिए भाई को एक भ्रमान्त सौपने आया था ।

‘क्या ?

मेरी स्त्री ! उस बचारी का क्या होगा इसकी मुझे अत्यन्त चिंता है । काक ने कहा ।

‘बेटा ! ब्रह्मानन्द बोले उसको क्या हो सकता है ?

‘गुरुदेव ! रेवाभाई को तो मैं उनिक सिखा रहा था यह कुछ होते हैं तो मुझे आनन्द मिलता है । आपसे सब-सब कहता हूँ । रेवाभाई तो भवसर की ताक में बैठे ही हैं और मृगुकण्ठ के नए दुपाल में रसी मर बुद्धि नहीं है । अतएव साट में उपद्रव होगा यह निश्चित है । आप ना न कहिये क्योंकि मैं दूसरी कोई बातने का नहीं । मैं आपको और रेवाभाई को पहचानता हूँ ।

तो अपने साथ लेता जा ।

पूसा भी नहीं हो सकता । जयसिंहदेव महाराज के दरबार में मेरा एक कट्टर विरोधी बठा हुआ है । महाराज या सीतादेवी भी मेरी स्त्री को बाधय देंगी नहीं । कल मुझे कहीं कुछ हो जाय तो फिर उसका क्या होगा ?

काक ! ब्रह्मानन्द ने कहा तू तो धोबी का बूत्ता हो गया है, न घर का रही न घाट का ।

बात है तो ऐसी ही ।

'तो घर का क्यों नहीं हो जाता ? पाटन में तेरा कौन है ? अपने रेवामाई के साथ क्यों नहीं रहता ? तुम दोनों बचपन के साथी हो इस तरह एक-दूसरे में कट-भरने में क्या कुछ साम है ?

ही बान !' रेवामाई एकदम खड़ा होकर बोला हमारे साथ भा हम पाटन को भी जीत लेंगे ।

माई ! गुरुदेव ! खिन्न स्वर में काव वाला 'मह निम'वाण गया नहीं है क्यों पहले भी मुझे मिला है । किन्तु मुझे आपकी योजना में श्रद्धा नहीं है । झकसा लाट पाटन क सामने कर हा क्या सकता है ? एक बात और भी है जो मुझे स्पष्ट दिखाई देती है वह आपको नहीं दिखाई देती ।

कौन सी ?

गुरुदेव ! लाट गुजरात भयवा सोरठ सब भवेल टिक सकें ऐसा सम्भव नहीं है । मानवा और सपादसस भी अकेले रहकर नहीं टिक सकेंगे । यदि यह सब एक न हो सके तो हम सब-के-सब नष्ट हो जायेंगे । गुण-पर-गुण व्यतीत हो गए—लाट और गुजरात गुजरात और मानवा गुजरात और सपादसस आपस में सझते सझते चले आए ह । इसी प्रकार चलता रहा तो हम निर्बीज और निराधार हो जायेंगे । और फिर गुरुदेव ! लाट में बैठ-बैठ आपको कुछ पता भी तो नहीं है ।

क्या ?

जिन विभर्मी यक्षों ने श्रीमदेव महाराज के समय में सोमनाथ लूटा था वह फिर भाग बढ़ते ही चले आ रहे हैं । प्रति वर्ष उनक विषय में अधिक-से-अधिक बातें सुनाई देती हैं । यदि हम बदर-ही घर लड़ मरेंगे तो हमारी क्या दशा होगी ? पाटन में एक पागल यती आया था—क्यों पहले । उसक विषय में यह कहा जाता है कि वह सदा भ्रमण भ्रमण घमों को त्याग कर एक धर्म स्वीकार करने को बात

★ भ्रमण के आस-पास का प्रदेश ।

‘तो मैं वहाँ ना कहता हूँ। परन्तु बाद में मेरी स्त्री छेर मर धान के लिए भूलो न मर जाय माई ! निराधार होकर न रोए मेरा पुत्र निराश्रय होकर कुम्हला न जाय—बस इतना ही वचन दे दे।

दे दे रेवा ! इसमें कुछ भी अनुचित नहीं है।

अच्छा काक ! अपना सोचा तूने किया ही । तेरी पत्नी और पुत्र को निराधार कभी न होने दूँगा । अब तो ठीक ? अब जा आज तो मैं तुझसे उकता गया हूँ । इस जन्म में अब अपना मुह न बिलाना ।

माई ! विधि ने क्या-क्या लिख रखा है कौन जाने ? कहकर काक ने दोनों को नमस्कार किया ।

काक ! जहाँ कहीं रहे काम वही करना जो तेरे गुरु को सोचा दे ।

निश्चिन्त रहिए गुरुदेव ! अच्छा अब भाशा ?

हाँ बेटा !

काक पुनः नमस्कार करके चला गया ।

रेवा ! यह लड़का है विलक्षण ! ब्रह्मानन्द ने कहा ।

स्वार्थे चायने में एव ही है गुरुदेव । रेवापाल ने उत्तर दिया ।

२०

काक ने बन्दरगाह पर जाकर इच्छानुकूल पीठ का प्रबन्ध हुआ कि नहीं इसकी छानबीन की । वहाँ से छोटकर भ्रम कार्य पूरे करके वह मजरी के पास गया ।

मजरी ने सांसारिक जीवन स्वीकार किया था फिर भी गरीब और बुद्धि में वह जसी थी वसी ही मोहक बनी रही । वह पहले के ही समान गविष्ठा थी पहले से भी अधिक विद्वान थी । जिन जिन लोगों ने उसका

परिचय हुआ उन सभी पर उसकी मोहिनी प्रभाव कर गई थी ।

उसका पांडित्य विद्वानों में उससे प्रति मान पैदा करता था परदेशी विद्वान मृगुकच्छ में आते तो इससे भेंट करने अवश्य जाते और प्रशंसा से भ्रातृ हुए हृदय से पराजय स्वीकार कर उसकी तुलना सरस्वती से करते हुए पलोक रचना करते । चारों ओर से जो योद्धा आते और दुःशूल का घातिभ्य स्वीकार करते थे उसके महत्व को भूलकर उसकी स्त्री के पुजारी हो जाते थे । मृगुकच्छ के साधारण लोग उससे परिचय होने पर उसे देवी मानते, बद्ध उसे रेवा माँ का भवतार समझकर उसके दर्शन कर कृतार्थ होते थे अथेष्ट वय वाले अपने घर के भंडारों को भूलने के लिए इसके निकट बात करने बैठ जाते थे और एक प्रमूढ भरी दृष्टि की याचना करने वाले युवक उसकी एक अग्रहीन दृष्टि से प्रोत्साहन पाकर उसका प्रसन्न करने के लिए भवसागर पार करने के लिए उत्तर हो जाते थे ।

इस गर्विष्ठा स्वस्य और सुन्दर रमणी के प्रति एक अस्पष्ट तिरस्कार की भावना वह ही पुरुष और नारीया रखते थे जो इसके सम्पर्क में न आ पाते थे । मजरी यह बात जानती थी परंतु एसी को वह भी स्पष्ट तिरस्कार से देखती थी ।

पति और उसके उपरान्त स्वयं की गति में उसे इतनी अज्ञा थी कि जब काक ने उसे रेवापान द्वारा दिये हुए वचन की बात कही तो उसकी भाँखों से चिनगारियाँ निकल पड़ी ।

क्यों किसी के पास भीख माँगने गए ? 'उसने होंठ-पर होंठ दबा कर पूछा तुम्हें—महारथियों के शिरोमणि को—एसी याचना करते सज्जा न आई ? क्या हो गया था तुम्हें तुम कैसे इतने अधिक अधीर हो सके ?

काक ने स्नेह में पसी मुन्दरी का त्रोध देखकर गहुर हास्य कर उठा ।

में न होऊँ और कुछ उपद्रव हो जाय तो ?

तो मुझे क्या हो सकता था ? जिसकी भजास कि मेरा कुछ कर सके ।

काक पुन हँस दिया हाँ यह तो मुझे मालूम है । मृगुच्छ का प्रत्येक नवयुवक तेरे लिए प्राण देने को तयार हो जायगा ।

नहीं तो क्या । जैसे सब सोग तुम्ही पर मोहित हो पड़ते हैं । मजरी ने भी हँसकर उत्तर दिया । किन्तु देवापाल के गव की तो कोई सीमा ही नहीं है । उसकी शरण माँगने से पहले मैं मर जाना अच्छा समझूँगी ।

पगमी ! रही न बसी-की-बसी । मेरे कानों में अभी से चपड़ियों की भनक पड़ रही है । और इन सम्पूर्ण साट में वषण का पक्का कोई है तो देवापाल । आँख को सँपना तो निरपक्व है ।

भ्रमिड ! जसा बाप बँसा बेटा । मुझे तो उमका नाम ही अच्छा नहीं लगता । फिर भी तुम व्यथ की धिता कर रहे हो । सोमेश्वर है मणिभद्र है और क्या चाहिए ? तुम अपनी बित्ता करो । और जिस प्रकार पद्मह वष पहले पाटण विजय करके सौंटे व इस बार भी वैसे ही विजय पाकर लौटना ।

साथ में किसी को लेता आऊ ?

‘मजरी से अधिक सरस मिल सके तो अवश्य लेते आना ! मेरी जीय्य है । मजरी ने हसकर कहा । तेजस्वी मुकुमार स्फटिक-सी बित इस मोहनी के शब्द झुनकर वह सब कुछ भूल गया । वह पत मर जा उसके मुल की अप्रुव देखाभा और उसने हास्य की विद्युत्प्रभा की ओर मोह दृष्टि से देखता रहा । फिर उचित उत्तर द दिया उसने मजरी का अनुमन कर लिया ।

मान छोड़ कर मजरी काक की बाहुओं में लिपट गई ।

मटराज ! उसने धीरे-से घन्तर की मणिभाया प्रशट की तो म्र छोटोने न ?

तुरन्त । पबराभी नहीं । मुझे कुछ होने वाला नहीं है ।

दोनों आत्मघटा के आनन्द में विलीन हो गए ।

दूसरे दिन दुग्पाल विदा हुआ । बन्दरगाह तक आग्रभट नगरसठ माधव और मणिमन्त्र पहुँचाने गए । मन्दिर की छत पर से मजरी शिखर में अन्तर्धान होते हुए पाठ पर बैठे हुए काँच को देखती रही । पाठ के अन्त हो जाने पर आँखों से आँसू पोछे और बीसरी को छाती से चिपका लिया ।

उसकी दो-तीन सलियाँ साथ में थीं । वह चुनचाप इस स्नेही हस्त की व्याप को देखती रही । परन्तु मजरी से एक शब्द भी कहने का किसी को साहस न हुआ ।

उसने बीसरी को एक सखी को लिया और दर्शन करने के लिए मन्दिर की घोर घुमी । एक विद्यार्थी ने बाहर दीपक जलाया । वह पुजारी लगहाता-लगहाता आया और हस हस कर समाचार पूछने लगा । हास्य की किरणें प्रकीर्ण करती हुई मजरी अपने तेज से अंधेर मन्दिर का भी प्रालम्बित कर रही थी ।

वह मन्दिर से बाहर निकली ही थी कि बेटों के साथ नगरसठ के महाँ की आँखें खिंची आई । देवापाल उसकी तिरस्कार की दृष्टि से देखता था यह मजरी को मालूम था । बेटों को था उसका समझ पसन्द नहीं था । मठ उसकी शीवा की भगिमा में गह बढ़ गया उसका हास्य में तनिक अभिमान भी प्रकट हुआ ।

‘मजरी मामी कसी हो ?’ बेटों ने कहा ।

‘अच्छी हूँ । तुम कैसी हो ?’

‘ठीक हूँ भरे देवर गए न ?’

‘हाँ ।’

‘मजरी इसर आया एक बात कहनी है ?’

‘बया ?’ कह कर मजरी कुछ दूर बेटों की ओर गई ।

मजरी उन कर सीधी खड़ी हो गई । उसकी आँखें अधिक बड़ी हो गई । वह एक शब्द भी न बोली ।

कहलाया है । पतिपरायण बेनां मजरी के गव को देख उत्पन्न हुए अपने क्रोध को दबाते हुए बोली कि कुछ काम हो तो उन्हें कहना भेजना ।

राण मर ने लिफ मजरी के होठ चाँप उठे । उमने उत्तर दिया, बनां देवी ! उनसे कहना कि मटराज की स्त्री को किसी के सरक्षण की आवश्यकता नहीं ।

मजरी की भाँखों में तसवार की चार जसी तीक्ष्णता थी, उसके सस्त्रुत स्वर में अपमान के सरगम के सभी स्वर थे ।

बेनां को इन शब्दों से गहरा आघात लगा । पतिभक्ति करते-करते सीधी नम्रता मूल गई और अपमानित स्त्री के हृदय में निवास करते—विपरीतों भागिन के विष से भी भयकर विष उसके अन्तःकरण में घुस व्याप्त था ।

हाँ मैं भूमी । तुम्हारे यहाँ जमी ही किस बात की है कि उनके सरक्षण की आवश्यकता पड़े इतना कह बनां वहाँ से चली । शब्द निर्दोष थे किंतु उसमें छिपा विष मजरी ने देख लिया । एक भयकर दृष्टि बना पर डाली और गव से सिर ऊँचा करके वहाँ से चली गई । उसकी भाँखों में क्रोध के धाँसू निकल आए ।

उसकी सलियों कुछ जान न पाई । वह भी मन्दिर से बाहर निकली । साम्बा बहुमानि के बाड़े में प्रवेश करने से पहले उन्हें एक स्थान पर मुख्य पथ पार करना पड़ता था । वे जैसे ही मुख्य पथ पर गईं वस ही उन्होंने पथ के दूसरी ओर से कुछ गुरुओं सहित एक नवयुवक साधु को आते हुए देखा । मजरी अपनी सलियों को लेकर तेज गति से गली में चली गयी, परन्तु उसने उस साधु का तजस्वी मुख देख लिया था । एक सखी से बोली यह जो नया साधु आया है न भया विद्वान माना जाता है ।

हाँ ! मैंने भी सुना है । बड़े-बड़े विद्वानों की भी इसके सामने नहीं चसती ।

हेमसूरि की चंचल दृष्टि भी मंजरी पर पड़ गई थी। काक द्वारा दिया हुआ परिषय उसे याद आया—बचपन में खमात में जिस युवती के प्योस में रहा था और जिसे काक उठा ले गया था वही।

उसकी विस्मृत तेजस्विता का उस स्मरण हो आया।

दुर्गपाल को कैसे यह स्त्री मिली और उसके पाहिष्य के विषय में लोकोक्त क्या थी यह तो उसे ज्ञात था। उसके निकट ही चल रहे एक धावक से पूछा 'दुर्गपाल की पत्नि बही शास्त्र बिगारद मानी जाती है न ?

'जी हाँ। युवक साधु की सवसता पर मोहित होकर धावक ने कहा।

२१

भावक तेजपाल भाषव और सोमेश्वर काक को बिदा कर लौटे। भव भाँवड़ में कुछ कुछ माहस आया। काक से उस भय जगता था। मत उसकी उपस्थिति में वह निःसहाय सा बना रहा। भव तो जब तक जूनगढ न हार जाम और कोई दूसरा दण्डनायक या दुर्गपाल न आ जाय तब तक वह लाट का स्वच्छाचार स्वामी था। उसके आनन्द की सीमा न रही। सोमेश्वर काक के घर गया भय यह भाषव के यहाँ भोजन करने के लिए जाने वाले थे। अतएव अपनी-अपनी पासकी की ओर बढ़। आग्रमत की पालकी के आस-पास कपिल चाटुकार और तथा भ्रम्य जन नएदुर्गपाल की देखने की उत्सुकता से खड़े हुए थे। एक सनिक ने धक्के मारकर इन सबको दूर क्षदेहा और आग्रमत अपनी पालकी में जा बठा। कहारों के पालकी उठाने से पूर्व ही आस-पास की मोड़ की पीरठा हुआ एक मोटा मनुष्य पालकी तक आया और झुक झुक कर भविष्यन्त करने लगा।

नए दुर्गपाल ने नेरा सोतला को पहचान लिया । उसे काक द्वारा दी गई चेतावनी का स्मरण हो आया । नेरा लहजे में बोल रहा था
 घ घ घणी घणी सम्भा अन्नदाता ! दु-दुर्गपाल म-महाराज की ज-जय ।
 ब बापू को नमस्कार ? भाड के बड जसा उसका मोटा शरीर नीचे झुकते समय कुछ-कुछ आनन्द में झूमते हुए हाथी के बच्चे का स्मरण करवा रहा था । आस-पास खड़े हुए लोग देखकर हसने लगे ।

आन्नमट को तुरन्त वही अपरिचित मुन्दरी या भ्राई । हमीर मत्स्य शया पर सेटा था और बीरा उतना बुद्धिमान नहीं था । नेरा के बिना उसे और कौन खोज सकेगा ?

आन्नमट ने काक की चेतावनी की चिन्ता नहीं की । वह नेरा को सामने देखकर मुस्कुरा दिया क्यों नेरा ?

घ घणी घणी सम्भा बापू ! आपकी कृपा से आनन्द है ।

आन्नमट को लगा कि नेरा कुछ कहना चाहता है । उस अपरिचित का समाचार तो उसे लाया है ?

मेरे साथ चल ।

ब बापू की आज्ञा । जि बिंजीव हो सी सी वर्ष तक ।

घ घणी घणी सम्भा अन्नदाता । कहता हुआ वह पालकी के एक और चलने लगा ।

अभी पालकी थोड़ी दूर ही गई होगी कि नेरा ने आन्नमट के कान में कहा म महाराज ! प प प पता मिल गया ।

सच ? हर्षित होकर आन्नमट बोला । उसका हृदय उत्थन पड़ा ।

नेरा ने आन्नमट-ही आन्नमट में उसे सावधान रहने के लिए कहा ।

सम्भा है ?

हाँ दू दूध जसा श्वेत रंग ? वह बोला ।

आन्नमट ने जोर से गर्दन हिलाई ।

ओ और म मन हर स ऐसी जादू म भरी आँखें ।

नेरा अपनी वाक्पटुता की परीक्षा करने लगा ।

भाज्रमन्त्र को घुरा लगा किन्तु धुप रहा । उसकी प्रियतमा के विषय में इस नौकर का इस प्रकार बातें करना उसे सटका ।

ओ ओर व बाए हाथ में रुद्राक्ष का व वना है ।

रोमांच से भाँवड़ ने भाँखें मूँद सी ओर अपनी प्रियतमा की प्रतिमा मस्तिष्क के सामने लाया ।

क क्यों ठी ठीक है न ?' नेरा ने चित्तिष्ठ होकर पूछा ।

'नहीं । अच्छा फिर ?'

भू भूम गया व बापू ! एक रुद्राक्ष ओर एक स्फटिक ।'

भाँवड़ पालकी में उछल पड़ा 'ठाक ।

'त तो मिल गई ।

कहाँ है ?

व बापू मे ग-ग-गरीब मारा धाऊँगा । मुझ गरीब कूँछ न धनु—।

अधीर होकर भाँवड़ ने कहा हरामखोर बोल ।

धन्यदाता ! वह स सरस्वती के समान विद्वान है ।

सचमुच ?

'व बापू ! मैं तो भव त तक भ म मट भी नहीं बना ।

तू मट बनना चाहता है न ?'

हाँ य बापू ! आपकी सेवा करते करते ही मरने की कामना है ।

अच्छी बात है ।

धन्यदाता व वचन दीजिए, मैं कहीं व बीच में ही न मारा जाऊँ ।

बोल कायर ! धन्यदाता क्यों है ?

'व बापू ! मुझे भट बनाएंगे न ?

हाँ हाँ हाँ ।

'तो कहता हूँ । नि किन्तु व बापू ! ऐसी नहीं है जो हाथ लग सके ।'

इससे तुम्हें क्या मतलब ?' भाँवड़ ने कहा ।

तो आप जानें ! मैं महाराज ! वह तो मटराज की विवाहिता है ।

'हैं ? किसकी क्या माधव की ?

'स—श्री श्री ब बापू ! उस दू दूसरे की ।'

आश्रमट का हृदय मानो रुक गया जो क्या उसकी ?

नेरा ने जोर से गदन हिलाई ।

भाँवड़ मौन रह गया । उसकी स्थिति ठीके से व्यक्तित्व जैसी ही गई ।

उसके कानों में घमघम जैसी आवाज होने लगी ।

आनन्ददाताओं के अंतर को पहचानने का नेरा ने विशेष अध्ययन किया था । वह मन ही-मन मुस्कराया । उसके बिना नए दुर्गपाल का काम चल ही नहीं सकता ।

म महाराज ! ब बात ब बनने जैसी नहीं है । उसने धीरे से कहा ।

नेरा ! कुछ भूल हुई है । मणिमद का रूप और रंग याद आते ही आश्रमट के हृदय में शंका उत्पन्न हुई ।

स स्वयं चल कर द देख लीजिए ।

आश्रमट को कुछ सूझ नहीं पड़ा । परन्तु नेरा ■ पास मुक्ति थी ।

'म महाराज ! अब आप अब दुर्गपाल हो गए हैं न । म भट राज के घर की कुशलता जानना आपका कर्तव्य है ।

आश्रमट ने धमपह मरी दृष्टि से नेरा की ओर देखा दू मुझसे संझा को मिनना ।

ज ज जैसी आशा ।

भाँवड़ के मस्तिष्क में दो बातें बिजली की भाँति फैल गई । एक तो अपरिचित रमणी का पता मिलने का रूप—और दूसरी उसे सिंह के पंजे से छीनना होगा इस बात से उत्पन्न डर । मृगुकच्छ आने से पहले उसने नए नगर के स्त्री-पुरुषों के विषय में छान-बीन की नहीं थी जितना कुछ जानकारी थी वह उसका पिता जवा महता द्वारा ही प्राप्त थी और वह बिह्ला भगरी के विषय में जानकारी देने के लिए हिल भी

सके ऐसा तो था नहीं भणिमट भी विशेष कुछ बता सकें ऐसी स्थिति में नहीं थे। इन्हीं कारणों से जांबड महेता ने मजरी को एक सामान्य स्त्री समझ लिया था। मतएव नेरा की बात ऐसी अविश्वसनीय लग रही थी कि उस मानने को जी नहीं चाहा।

उस अपरिचित मोहिनी का वह ऐसा दास हो गया था कि इस अनिश्चित दशा से छुटकारा पाने के लिए वह छटपटा उठा। जैसे ही माधव का घर आया वैसे ही आश्रमट ने माधव और तंजपाल से कहा—यदि समय हो तो मैं एक औपचारिक कृत्य पूरा कर लूँ।

क्या ? विनम्रपूण प्रश्न हुआ।

क्षण-मात्र के लिए आंबड हिवकिचाया फिर बोला—नाकमट चले गए घट मुझे सनिक उनके घर हो आना चाहिए। उनके घर वार्त्ता को प्रसन्नता होगी और मेरा भी दायित्व है।

‘भोजन करके चले जायें तो कैसा रहे ?’ माधव ने कहा।

‘फिर तो सच जी व यहाँ हेमचन्द्र सूरि आने बात है। और बहुत सच्चा ही जाने पर जाना भग्न भी नहीं लगता।’

तंजपाल सेठ अपनी बानी आँख से चिप्टाचार के इस समयक की ओर देखने लगे। फिर कुछ गम्भीर किन्तु विनोद भरी बाणी में उत्तर दिया बात सच है। नाक की स्त्री भी अपने आपको एकत्र निराधार न समझेंगी। तुम्हारे जैसे मल पुरुष भी यदि परिपाटी का पालन न करेंगे तो करेंगे कौन ? निस्सन्देह जाओ।

आश्रमट बड़की ओर देखने लगा। क्या वह रहस्य पाने गया ? नगरसेठ के मुँह पर से कुछ भी प्रकट नहीं हो रहा था।

मज्झी बात है। मैं यह आया। कहकर आश्रमट ने पालका उठाने वार्त्ता को मुझने का आदेश देते हुए कहा—‘जन्दी चलो—साम्बा बहुस्पति के नाटे में मेरे साथ किसी को आने की आवश्यकता नहीं। नाक मट जी के यहाँ भीड़भाड़ सहित जाना अच्छा नहीं लगेगा। उसने अपने अस्वारोहियों को आगा दी।’

वह स्त्री हूँगी । कैसा मधुर हास्य ! आत्मभट रोमांचित हो उठा ।
वाका ! इस वाक्क को आदि कवि वाल्मीकि के बचन सुनाओ
तो !'

बोली देर तक पुरानी गला खरारकर फिर अपनी ककश आवाज
में बोला

धन्यस्त्व म त्वया सुत्य पश्यामि जगती तसे ।

अयत्नादागतं राज्य यतस्त्व त्यक्तुमिच्छसि ॥

(अर्थ है - धन्य है तुझे तुझ जसा दूसरा ससार में नहीं देखा
क्योंकि बिना भागे मिले हुए राज्य को भी तू त्यागना चाहता है—
रामायण)

'समझा ? उस स्त्री की आवाज आई । भरत ने राज्य त्याग
दिया इसलिए कि उसने कभी राज्य आकांक्षा ही नहीं की थी और इसी
लिए वह महान् हो गया । उन्हीं जैसे व्यक्ति धन्य हैं तेरे जैसे लोभी
नहीं । वह हँसी पुनः उस मधुर हास्य को सुनकर आत्मभट अधीर-सा
हो गया ।

अच्छी बात है । हँसकर सोमेश्वर ने कहा हम लोभी हैं तो लोभी
ही सही । कर भी क्या सकते हैं हमारे भाग्य में न भरत होना लिखा
है न रामचन्द्र ।

कैसे जाना ? उस स्त्री ने पूछा ।

आत्मभट का अधीर मन अब और अधिक न रुक सका उसने आगे
बढ़कर द्वार पर लगा कड़ा खटखटा दिया । उसके मस्तिष्क में उस सुदरी
के शब्द घूम रहे थे ।

इतने में उसकी दृष्टि उस साइनी के हाँकने वाले पर पड़ी । वह
साइनी को खड़ा करने का प्रयत्न कर रहा था । सम्भव है वह धौसा
निदान यहाँ से ले जा रहा हो । जिस प्रकार आदि कवि को कौष वध
से काव्य की प्रेरणा हुई थी उसी प्रकार उसका श्लोक सुनकर आदि
महेश्वर को एक प्रेरणा हुई यहाँ आने का कारण मूक गया । बिना
प्रयत्न किये हुए हाथ आया राज्य त्याग दे वही महान् होता है । वह

पुनःपुनः ।

हो—हो—कीन आँवड़ भाई ! तुम बिघर से ? कहकर मणिमद ने द्वार खोलकर उसका स्वागत किया ।

कल जिस कमरे में काक स भेंट की थी उसी कमरे में आँवड़ बठा । हिटोले पर पुराणों काका और सोमेश्वर बठ हुए थे । मन्दर के कमरे की देहली पर भाजी काटती हुई वह सुन्दरी बठी हुई थी ।

आत्ममत् ठमा-सा देखने लगा । वही मुख वही आँखें वही भगिमा और वही रेशाएँ । सम्पूर्ण प्रकोष्ठ में अनन्त यौवन का अधिकारी देवों का नृत्य में विमोद स्वर्गलोच का-सा उत्सामजनक मादक वातावरण था । दो विंगाल वैजस्वी नयन उस पर टिके हुए थे । मञ्जरी का सगमरमर-सा श्वेत भास पर दुविधा से बन पड़ गए ।

दो दिन से जिसके लिए प्रतिपण प्राण व्याकुल थे उसी रमणा को यहाँ देखकर उसे रोमाँच हो आया । वह अपने भाप पर बस न रख सका । और जाने भी न बड़ सका । बस अपनी सुध-बुध खो बैठा ।

माट का युवक सोमेश्वर रूपवान मोड़ा था । उसकी दृष्टि में काक शंकर और मञ्जरी पावती थी । इन दोनों के बीच उसकी भवित उसका हृदय और उसकी आकरी बटी हुई थी । शंकर की अनुपस्थिति में अरक्षित पार्वती का अभिमान करने के लिए आने वाले की ओर जिस प्रकार नदी दस्तता है उसी प्रकार वह आँवड़ की ओर देखने लगा । वह काक का विषय था , पुत्र की कृपा से वह समय और खर्च परख सकता था । उसकी मञ्जरी के भास पर पही सिक्कड़न देखी । वह हिटोले पर से उठा द्वार तक आया और आँवड़ और मञ्जरी के मध्य में खड़ा हाकर बोला—

कहिए भटनी ! इस समय कैसे कष्ट किया ?

बूझता हुआ तारा जैसे प्रबलता से भमक उठता है वैसे ही आँवड़ में साहस जगा ।

भाई सोमेश्वर ! मुझे देवी से कुछ बातें करनी हैं । वह देहली के

श्रीकृष्ण ने अनुभव किया कि वह महान् पुरुष है, साठ का सत्ताधीश है सब लोग उसकी आज्ञा के अधीन हैं। मंजरी जसी मोहन स्त्री के लिए उत्पन्न मोह का उत्साह उसकी रोम रोम में समा रहा था और आज प्रथम प्रयास में ही विजय पाई थी। उसके प्राण मदोन्मत्त थे। प्रथम बार ही उसे अपनी शक्ति में पूरा-पूरा विश्वास हुआ।

बिस्मृत ही कच्चा वह नहीं था। माधव और तेजपाल को सारी योजना बता देना उस जैसा नहीं। किन्तु आनन्द उसके मुँह पर से टपका पड़ता था। तेजपाल और माधव ने उसे नई सत्ता के मद का स्वामाधिक परिणाम समझा।

माधव के यहाँ भोजन समाप्त हुआ और तीनों व्यक्ति नगरसेठ के यहाँ आये।

वह तीनों सेठ के घर पहुँचे उनसे थोड़ी दूर पहले ही हेमचन्द्र सूरि आये थे। रेवापाल घर में था। उसने इस युवक साधु का आगत-स्वागत किया उसे बरामदे में बिठाया। सूरि के साथ में आये हुए साधु उसके आस-पास बैठे।

रेवापाल इस नए साधु से पहले तिन मिल आया था और वह भृगु वचन जिस लिये आया है वह रहस्य समझने का प्रयत्न भी उसने किया था। इस बालक जैसे दिखाई देने वाले साधु का व्यक्तित्व विचित्र था। बाक्य वह इस प्रकार बोलता कि उसका उद्देश्य स्पष्ट समझ में न आवे फिर भी उसने अपनी बात कह दी है ऐसा लगता था और उसकी बात भीत में इस प्रकार अस्पष्ट विद्वता थी कि सुनने वाले को उसके ज्ञान की घणाघात का अर्थ हो जाता था। उसके बात करने का सात तथा अपरोक्ष रीति में सत्ता और आवेश दिखाई नहीं देते परन्तु सुनने वाले को यही लगता कि वह ठीक कह रहा है।

रेवापाल जी ! तुम्हारी क्वालि मुनकर मुझे प्रसन्नता हुई है।

तुमने अपने कुल की तथा अपने पिता की कीर्ति को दीप्त किया है।
यसतोप है तो केवल इतना ही कि जितने तुम रणवीर हो उतने धमवीर
नहीं।

‘यथा शक्ति तो धम पासन करता हूँ। रेवापाल ने कहा। उसे
साधनों के साथ बानें करना रुचता नहीं था।

परन्तु गिव-मंदिर का विशेष पक्षपात है क्यों? हेमचन्द्र सूरि ने
पूछा। इतने सब कहकर उसने बड़ी खूबी से जन और राज सप्रणय में
परस्पर विरोध आनितन का प्रचार किया। तुम्हारे जैसे योद्धा को
विरागात्मक घट घति घाते दर लगती है और राजकीय धम की ओर
विशेष झुकाव होता है पर तुम साट क आवक-अपठ हो तुम्हें तो
पहने अपने धम-पासन और पोषण करना चाहिए।

रेवापाल इस दृढ़िमान युवक का उपदेश जरा अनिच्छा से सुनता
रहा। उसने उत्तर नहीं दिया। सूरि ने बात आगे बसाई अच्छा तो
घस्न किसलिए धारण करते हो? तुम तो अहिंसा धम बड़ा मुगमता
से गृहण कर सकोगे।

युक्त अहिंसा धम अच्छा ही नहीं लगता।

‘मरे रे! मिठास से मुस्कराकर साधु ने कहा तुम एक बार
समात धामो निश्चय ही तुम्हारे विचार बदल जायेंगे।
मैंने तो साट नहीं छोड़ने का व्रत से रक्खा है।
यह क्यों?

‘साट का सौमाम्य जो नष्ट हो गया है। उसे एसी दुःशा ने कस
छोड़ जाऊँ? हाँ यदि साट की वित्रयो सना समात धाम तो मैं भयस्य
ही भाऊंगा! निराशा भरी आवाज से रेवापाल ने कहा।

जयन्त महाराज के राज्य में यह असतोप की भावना क्यों है मेरी
समझ में यह बात नहीं आती।

आपकी समझ में न आना स्वाभाविक है। जरा बठोरता से रेवापाल
ने कहा। दूसरे ही क्षण उसे मान हुआ कि सूरि बात नहीं कर रहा था

सगा कि यह बातें उसकी अपनी प्रतिष्ठा छीन देने की थी। यह उसका अपमान था।

‘और घोंसा निधान भी ! सूरि की सूचना भागे वड़ी। ‘काक के यहाँ से मंगा लो।

आंबड के सिर पर जैसे बज्र गिरा। घोंसा निधान काक के यहाँ ही रहेंगे—मजरी को वह ऐसा वचन दे भाया था। क्या वह वहाँ से मंगा ले ? क्या मजरी के घर को निस्तब्ध बना दे ? क्या लाट की साम्राज्ञी जसी सुन्दरी को एक सामान्य गृहिणी वह अपनी भाज्ञा से बता दे ? आंबड के मस्तिष्क में उसके घर के कमरे का भादक वातावरण फैल गया। उसके वातावरण में से दो बड़े-बड़े तेजस्वी आदू भरे नयन उसकी ओर दीनता से व्यंग्य से देख रहे थे। वह नयन उससे पूछ रहे थे—आंबड महोता तुम मुझे वचन देने के बाद मेरे घर की ऐसी प्रतिष्ठा करोगे ? लाट प्राप्त मेरा स्थान छीन लोने ? प्रणयी का उत्साही हृदय इस प्राधना को अस्वीकार न कर सका। जब तक वह लाट में है तब तक किसमें इतना साहस है कि उसकी—हाँ—उसकी मजरी की प्रतिष्ठा की ओर उगनी उठा सके।

आंबड ! जिस विचार में पड़े हो ? सूरि की बात आवाज भाई। आंबड कल्पना-सज्जि से सीटा पर उस सृष्टि में किया हुआ निश्चय साप लाया।

अन्तिम उत्तर आपको क्या दूँ ? तब मैं उसने पूछा।

काक के यहाँ से घोंसा निधान मंगा लो। हेमचन्द्र की आवाज में जरा बढोरता था।

क्यों ? आंबड ने क्रोध से काँपती हुई आवाज में पूछा।

इसलिए कि महाराज की भागा है।

महाराज ने मुझे तो ऐसी भागा नहीं दी।

तेजपास और माधव दोनों देखते रहे। ये दोनों हेमचन्द्र और आंबड को एक ही समझते थे।

‘तो इसका अर्थ हुआ कि तुम यौसा निजान काक के यहाँ ही रहने दोगे ?’

‘हाँ !’

‘तुम क्या कह रहे हो ? इससे तो प्रजा यही समझेगी कि काक ही सत्ताधीश है ।’

‘तो इससे बिगड़ क्या जायेगा ?’ भाबड़ ने पूछा । ‘महाराज का अर्थ है कि काक इतना है । वास्तविकता यह है कि उसी ने महाराज को साट दिलाया और अब पाटन इतना होकर बिना किसी अपराध के उससे सत्ता क्यों छीन ले ?’

इसलिए राजा महेता ने ऐसा ही करने के लिए कहा है । असन्तुष्ट होकर हेमचन्द्र ने कहा ।

‘भूगच्छ का दुर्गपाल मैं हूँ राजा महेता नहीं । भाबड़ बोला । हेमचन्द्र सूरि का मुँह पीका पड़ गया । तेजपाल काक का दुश्मन नहीं था इसलिए भाबड़ का यह अभिप्राय जानकर उसने भी कहा भाबड़ महेता की बात तो ठीक है बसा करने से साट में प्रजा हाहाकार मचा देगा ।’

भाबड़ ! सूरि कह रहे थे परन्तु दूसरा विचार आते ही वह नगर सेठ तथा मायब से बोले ‘तुम मुझे जरा अकेल बात करने दोग ?’

भाबड़ को इसका ध्यान नहीं था । वह तो कल्पना में एक सुंदरी के युगल नयनों से भरते हुए आभार को स्वीकार कर रहा था । सेठ और मायब दोनों उठकर जरा दूर चले गये ।

‘पागल ! तू क्या बन रहा है इसकी कुछ खबर है ?’
‘हिमसूरि ! दुर्गपाल मैं हूँ आप नहीं । आपकी बीच में नहीं पड़ना चाहिए ।’
‘परन्तु इसीलिए तो मैं समाप्त से यहाँ आया हूँ । मैंने तो नहीं बुनाया था । भाबड़ ने जवाब दिया पिता जी ने

मेजा है तो उन्हीं से पूछ आओ ।

‘तु राजद्रोह कर रहा है !’ कठोरता से सूरि ने कहा ।

‘मैं केवल एक पुराने राजसेवक का अपमान नहीं होने देना चाहता हूँ ।

‘तब तो उसके भादमी भी रहने देना ?

‘जैसे चलता आया है उसी प्रकार चलाना । आँवड़ ने आश्वासन दिया ।

‘तब मैं यहाँ से चला जाऊँगा । सूरि ने अन्तिम धमकी दी ।

‘जब इच्छा हो आप तभी जा सकते हैं ।

ठीक ! जरा तिरस्कार से हेम सूरि ने कहा । तुरन्त ही उसकी मधुर आवाज ने पलटा लाया । जैसे कुछ हुआ ही न हो । उसने शान्त परन्तु ऊँची आवाज में कहा भाई ! तुम जानो । तुम्हारे जी में आये सो करो मुझे जो ठीक लगा मैंने कह दिया ।’

नगरसेठ और माधव यह सुनकर पास आये । आँवड़ को लगा कि उसकी महान् विजय हुई । उसने कहा महाराज ! कल सवेरे हम मिलेंगे पर साम्बा बृहन्न त के बाड़े में ही ।

सूरि हँसा ही लोग जहाँ जाने के आये हो वहीं मिलता । अच्छा अब मैं जाऊँगा । तेजपाल सेठ कुछ दिन रहकर मैं यहाँ से चला जाऊँगा ।

‘ऐसा क्यों ? एकाएक ?

हाँ, जरा इधर आओगे ? उठकर सूरि ने तेजपाल का बुलाया । सेठ गये ।

इन यत्तियों से तो माथा न मारना ही अच्छा है । माधव मागर ने अपने-अपने मन की बात प्रगट की ।

‘और नहीं तो क्या ? आँवड़ ने जवाब दिया । उसकी कल्पना में दो सन्तित एव मनोहर झोंठ उसे धयदाव देते हुए दिखाई दिये ।

‘सबसे आँवड़ किसी से मिला था ? उधर सूरि ने पूछा ।

हाँ काक की स्त्री मंजरी से वह मिस धाया है । सेठ ने जवाब दिया ।
कोई बोला नहीं । सूरि ने मन में निश्चय किया कि उस स्त्री से उसे भी मिसना चाहिये ।

२४

भाबड़ महेरा के बासक जैसे मुख पर सन्तोष छा रहा था । भास्किर मृगुकण्ठ प्राने में कोई बर्राई नहीं थी वह वास्तव में दुग्धपाल बन ही गया और मंजरी जसी अपूर्व सुन्दरी भी तो मिली थी । वह झकेला हँस पड़ा । विधि को करना हो तो क्या नहीं कर सकता ?
कसा उसका रूप है कसा उसका मधुर स्वर ! कसी उसके सुन्दर नेत्रों की शोभा है और उससे वह बोला था उसके यहाँ बठा था । वह जरा हँसी भी थी । प्रातःकाल वह उसके घर जा अपनी नवीन सत्ता की धाक जमा सकेगा ।

स्वप्न समान मोहक वातावरण चारों ओर छा रहा हो ऐसा लगता था । रंग रंग में विचित्र झनार हो रही थी सूर्य और आकाश के रंग में सृष्टि की रचना में एक भवणनीय भाकपण दिखाई दे रहा था । एक परिपक्व शासक की रसिकता से वह आँखें मीचकर इन सब का अनुभव कर रहा था । एकाएक उसकी आँखों के आगे मंजरी का ऊचा स्वरूपवान शरीर धा खड़ा हुआ । उसके अंग-अंग में समदृष्ट मोह ने उसकी आँखों की भास्वरय चकित कर दिया । वह अचेतन अवस्था में उसके विकसित नेत्रों की ओर देखता रहा ।

भाबड़ की काल्पनिक दृष्टि के आगे जैसी प्रातःकाल देखी थी वैसे मंजरी दिखाई दी—मंजरी प्रतापी और विदुषी और उससे न

०
 आई थी न सकुचाई थी और न आश्चर्य-वर्कित ही हुई थी।
 उसका मोह मुग्ध हृदय चीतल हुआ। उदा महेश के पुत्र के पद
 ही इस सुन्दरी की दृष्टि में कोई गिनती नहीं थी, यावकप्रेष्ठ के
 महंकार का उसकी दृष्टि में कोई सम्मान नहीं था। खंभात की मुर्खातियों
 के हृदय के हार को उसे कोई पर्वाह न थी। पाटण की सेना के महा
 रथी उसकी सेवा करते थे। मृगकण्ठ के विद्वान् गिरोमणि उसकी पूजा
 करते थे। उसके घोर इसके बीच एक अनेक अन्तरपट था। और इस
 पारदघक पट में से एक मुख सदा उस ओर रखी हुई एक लाँह की
 भद्रभुत मूर्ति देखकर मुह में पानी भर साये वही दशा उसकी उस
 मय हो रही थी।

श्रीबद्ध आत्म-सन्तोष लो बैठा, उसका स्वाभाविक रूप नष्ट हो
 गया। उसकी भाषा के प्रासाद ध्वस्त हो गये। इस समय भी उसकी
 एक भीठी नजर पर अनेकों युवतियाँ प्राण-यौछावर करने को तैयार हो
 जातीं पर यह युवती तो वह स्वयं चरणों पर अपना सिर रख दे तो
 भी पलक न हिलाने ऐसी थी? श्रीबद्ध पसीने-पसीने हो गया।

थोड़ी देर में उसका अस्मिमान सतेज हुआ। प्रणयी की कला एक
 बीर पुरुष नहीं जानता—उसे इस सूत्र का भान हुआ। रसमुग्ध
 सुन्दरियाँ केवल महत्ता की ओर ही आकर्षित नहीं होती—इस सिद्धान्त
 ने उसे आश्वासन दिया। हृदय रिझाने की कठिन कला तो उस जैसे
 किसी भद्रभुत कलाकार को ही आती है। इस समय उसकी वास्तविक
 प्रीति हुए बिना न रहेगी ऐसा उसे लगा।

ऐसे तक बितकों में आभ्रमट ने पूरी दोपहरी बिता दी। मजरी के
 दशन फिर किस प्रकार हो सकें ऐसा उपाय वह सोचने लगा। इतने में
 एक पाशवक ने खबर दी कि सीमेश्वर भट्ट मिसने आये हैं। आनसी
 आभ्रमट उठ बैठा। उसकी मजरी से सम्बन्धित भट्ट जो आया था।
 विधि की सानुकूलता। क्या मजरी ने नये दुग्पाल को बुलाने के लिए

आदमी मेजा है ? या उसने सोमेश्वर भट्ट द्वारा कोई संदेशा मेजा है ?

वहाँ वह बैठा था वहाँ सोमेश्वर मामा और ममस्कार कर विनय से बैठ गया । आश्रमट ने ममस्कार स्वीकार की । थोड़ी देर दोनों एक दूसरे की ओर देखते रहे ।

‘भट जी कसे कष्ट किया ?’ आश्रमट ने पूछा ।

‘महाराज !’ धाँत विनय से सोमेश्वर ने कहा ‘आपको नए दुग के तिरीसण के लिए से जाने के लिए मारा हूँ ।’

अच्छा । हँसकर भाँवड़ ने कहा ‘दुग की कुजियां तुम्हारे पास हैं, ऐसा तो मैंने सुना था । अच्छा चलो । कहकर भाँवड़ बपड़े पहनकर संपार हो गया । मंजरी की सेवा में रहने वाले सोमेश्वर के साथ घूमना भी भाँवड़ को सुखदायक लगा ।

सोमेश्वर जी ! जब वह पासकी में बैठकर गड की ओर जाने लगे तो भाँवड़ ने बात छोड़ी, तुम भतराज काक के कुछ सगे सभन्धो हो ?

हाँ एक रिस्ता भी है—बहुत दूर का वह मेरे गुरु हैं ।

‘बहुत जबरदस्त आदमी है ?’ काक की बात करते हुए मंजरी के विषय पर कैसे भाया जाय यह विचार करते हुए आश्रमट ने पूछा ।

आप सब उनको सामान्य व्यवहार में जानते हैं, इसलिए उनकी वास्तविक महत्ता अभी भी आँक नहीं सकेंगे ।

‘नहीं, ऐसा नहीं है ।’

महेता जी ! उनका ठीक-ठीक मूल्यांकन करने के लिए मेरी तरह आपको भी उनसे चरणों की सेवा करनी चाहिये । उनकी मुद-कृता और बुद्धि, उनके आचार विचार और सिद्धांत सभी जाने जा सकते हैं । यह कलियुग है और भूगुरुच्छ पराधीन है वस इसलिए काक भट्ट गुगपाल के पद पर ही पड़े सड़ रहे हैं ।

तब पाटण क्यों नहीं चले जाते ?

सोमेश्वर ने एक तीक्ष्ण दृष्टि भाँवड़ पर डालकर मुस्कराते हुए कहा, आपके राजा में मंत्रियों में इतना साहस ही कहाँ है जो उन्हें

‘शुभ सुदृढ़ दिसाई देता है ।

‘महाराज ! यह गढ़ चालीस वर्ष तक घेरा बरदाश्त कर सके
ऐसा है ।

‘ऐ !’ चकित होकर आश्रमट ने पूछा ।

‘जो हाँ ।

थोड़ी देर दोनों धुपचाप चलाई चढ़ते रहे । अन्त में वे दरवाजे के
पास जा पहुँचे ।

यह दरवाजा इस समय धाँप क्यों है ? सबरे तो खुला था ?

भट्टराज गये तो केवल उस झोर का दरवाजा ही खोलने के लिए
ही कह गये हैं ।

उन्हें भृगुकच्छ की अधिक चिंता है ऐसा लगता है । जरा
असन्तोष से श्रीबिड़ ने कहा ।

उन्हें न हो तो झोर किसे हो ? विरस्कार भरी आँखों से
सोमेश्वर ने उत्तर दिया ।

ठीक परन्तु दुर्गपाल तो मैं हूँ । हँसकर आश्रमट ने कहा ।

हाँ परन्तु आप नये हैं । शान्ति से सोमेश्वर ने कहा ।

सोमेश्वर ने दरवाजे की लिटकी खोली और अन्दर से एक सनिक
दौड़ता हुआ आया ।

देवी ! यह तो मैं हूँ सोमेश्वर ! सोमेश्वर ने कहा और यह हैं
नये दुर्गपाल । पधारिये आश्रमट जी ।

वह दोना अन्दर भुसे । आश्रमट को सोमेश्वर आधीर पर से ले
गया ।

इस नवीन भृगुकच्छ का प्राचीर देखकर श्रीबिड़ को आश्चर्य हुआ ।
भृगुकच्छ नदी की घाटी पर स्थित विशाल घेरा ऊँची पहाड़ी पर
बनवाया गया था । और पहाड़ी पर बनवाया हुआ यह प्राचीर नदी के
तल से इतना ऊँचा था कि यह दुग कभी भीता जा सके इसकी कल्पना
करना भी कठिन था ।

‘यह दुर्ग इतना बड़ा किस लिए बनवाया गया है ?

क्योंकि चारों ओर से इसे नदी ने घेर रक्खा है। सोमे-वर ने कहा आवश्यकता पड़ने पर आधा गाँव अन्दर रखा जा सकता है। इसमें तीन हजार सैनिक आराम से रह सकते हैं।

‘यदि कोई घेरा ब्रह्म दे तो इतने बड़े दुर्ग में लोग भूखा न मर जायें।

‘नहीं यह इस प्रकार बनाया गया है कि तीन ओर से तो इसे भय ही नहीं। आवश्यकता पड़ने पर कुछ सैनिक इसकी महीना तक रक्षा कर सकते हैं।

‘वह क्या है ? एक घर की ओर सकेत कर आश्रम ने पूछा।

‘वह कठोर है।

अरे इतना बड़ा ?

‘हाँ इसे सदा भरा हुआ ही रक्खा जाता है।

/ अब कौन घेरा ढालने वाला था ? उलाहून जैसे स्वर में आबड़ ने पूछा।

‘संकेत न नर सदा सुखी। कहकर दोनों चारों ओर घूम कर देखने लगे।

२५

आश्रम और सोमे-वर दुर्ग का निरीक्षण कर रहे थे तो देवा नामक चुपचाप उनके पीछे-पीछे चल रहा था। उसकी सफेद दाढ़ी हवा में लहरा रही थी उसकी दृष्टि सम्मान में नीची झुकी हुई थी फिर भी उसके बृद्ध परन्तु सज्जन हाथ ने भासा अस्वाभाविक बठोरता से पकड़ रक्खा था। उसके भुर्रींगार माथे पर इस समय और भी अधिक भुरियाँ

पड़ी हुई थी। थोड़ी-थोड़ी देर बाद वह छिपी मंजर से भ्रात्रमट की ओर देख सेता था।

वह ध्रुवसेन का पुराना सनिक था और काक के अनुषर रूप में पाटण के सस्कर में सम्मिलित हुआ था। ध्रुवसेन का पतन हुआ और साट पर पाटन का शासन स्थापित हुआ परन्तु उसे इसकी कुछ चिंता नहीं थी। प्रतिदिन संध्या को वह एकांत भाषा से निकल कर काक के चबूतरे पर जा बैठा और जब काक अपने घर जाता तो पूछता—माई कैसे हो? प्रसन्न हो न? तब देवा जवाब देता है 'माई!' और चुपचाप लौट जाता। सम्पूर्ण सृष्टि में केवल इतनी सी बात में ही उसे रस था।

उसके एकाकी जीवन को ससार से जोड़ने वाली डोरी एकमात्र काक था। और इस डोरी को एकटक वह भवसागर पार करने के लिए भी प्रस्तुत था उसके एकसदमी मस्तिष्क में काक ने ऐसा स्थान बना लिया था कि उसकी परिस्थिति में परिवर्तन उसे सहन नहीं था। काक दुर्गपाल हुआ विवाह किया भटराज हुआ—वह उसे जरा भी अच्छा नहीं लगा। इस परिवर्तन से उसे ऐसा लगा कि काक उसका न रहकर दूसरे का होता जा रहा था।

काक ने उसको गढ़ के कोठार का मायक नियुक्त किया पर उसको यह अच्छा नहीं लगा फिर भी वह अपने माई की याता की उपेक्षा न कर सका।

कल जब वह सिष्टाचार के अनुसार साम्बा बृहस्पति के बाड़े में गया था और काक से मिला था।

देवा! मैं बचली जा रहा हूँ।

देवा ने ऊपर देखा। बाँछा में व्याकुलता थी।

'मे भी चलो माई?

काक स्नेह भरी हसी हुआ, 'भरे नहीं देवा माई।' फिर यहाँ कौन रहेगा?

‘जी !’

‘मजरी को देखते रहना ।’

‘जी । कहकर देवा वहीं बठ गया । उसके बूढ़ हृदय की समझ में नहीं आए ऐसी येना का अनुभव उसने किया । काक कुछ क्षण उसकी ओर देखता रहा उसके हृदय की व्याधा भी उसने समझी ।

देवा ! मैं घाय्य हो लौट आऊँगा । तू गढ़ की रक्षा करना ।

जी । कहकर देवा देखता रहा । उसकी छाँटा में भाँसू छलछला उठे । उसे लगा जैसे कोई माँ का इकसौता बेटा छीने सिये जा रहा हो ।

माई में बा रहा हूँ ।

हाँ जाओ पर जरा सतक रहना ।’

देवा धुपचाप बठा रहा और घर में जाते हुए काक की ओर देखता रहा । थोड़ी देर बाद उसने निश्वास छोड़ी और सिर हिलाता हुमा वह गढ़ में लौट आया । तब से उसका सिर झुका हुमा है और उसका बोलना भी बद हो गया । उसे भ्रम हुआ है कि उसका ‘माई’ अब छिर नहीं मिलेगा ।

इस समय नये दुग्पाल को देखकर उसकी छाँटों में विष उतर आया । माई व भौतिकरिज किसी दूसरे की दुग्पाल हाँव वह नहीं देख सकता ।

धुपचाप वह बम रहा है । कोठार के भागे भाकर भाजमठ और सोमेश्वर नदा की ओर देखने लगे । देवा धुपचाप सोमेश्वर के पास गया ।

‘सोमेश्वर ! देवा ने पूछा, तुम्हें तो दर लगेगी ?’

सोमेश्वर हँसकर उसकी ओर मूढ़ा । काक के समी सापी देवा के प्रति प्रीति रखते थे । माई ! माई व घर जाना है न ?

ही समय तो हो गया ।

परन्तु मात्र तो तेरा ‘माई’ है नहीं ।

इससे क्या ?’

‘जामो तब । सोमेश्वर ने कहा ।

‘सोमेश्वर ! कोठार देखना हो तो देख लो !’

‘भाय कोठार देखना चाहत है ? सोमेश्वर ने भांबड से पूछा ।
भांबड को इस नायक की अशिष्टता तथा सोमेश्वर के साथ बातचीत
करने का र्छण पसन्द नहीं आया ।

यह कौन है ? भांबड ने तिरस्कार से पूछा ।

यह भटराज का विश्वासपात्र नायक है और यहाँ के कोठार का
रक्षक है ।

‘इस तरह कहाँ जाने के लिए उतावला हो रहा है यह ? जरा रोव
वें नये दुग्पाल पूछा ।

देवा की नीची झुकी हुई बाँख जरा बठोर हो गई ।

यह भटराज के घर जाना चाहता । अपना दैनिक क्रम निभाने ।

तुम्हारे भादमी बड़े मुह लगे हैं जो ! आन्नभट ने कहा । देवा
ने ऊपर देखा ।

महाराज ! देवा सनिक मान नहीं है घर में भादमी जसा है । जा
देवा ! सोमेश्वर ने कहा ।

देवा बिना कुछ कहे चला गया ।

प्रत्येक सनिक यदि घर का भादमी होने लगता तो इस गाँव का
क्या होगा ?

भटजी ! नम्रता पूर्वक सोमेश्वर ने कहा इसके जसा विश्वासपात्र
दूसरा नहीं । इसका अपमान करने से लाभ नहीं है ?

‘लगता है यहाँ दुग्पाल के मान के अतिरिक्त सम्पूर्ण गाँव का मान
भस्म हो चुका है ।

देखिए न आज पाँचद वष से प्रतिदिन यह भटराज के यहाँ जाता
है । वह जायगा, थोड़ी देर तक खनुतरे पर बैठेगा और लौट आयेगा ।
परन्तु गए बिना रह नहीं सक्ता ।

‘मुझे ऐसे नौकर अच्छ नहीं लगते ।

‘ऐसे नौकर आपको मिलेंगे भी नहीं । तनिक मुस्करा कर सोमेस्वर ने कहा । वह भाग बड़े ।

देवा नामक चूपचाप गढ़ से उतर कर पुराने नगर में होकर साम्बा बृहस्पति के बाड़े में आया और काक के चबूतरे पर इस तरह मौन होकर बठ गया मानो किसी के आने की बात जोह-रहा हो । अंधेरा होने लगा । उसने ऊपर देखा और यह सोचकर कि काक की बात जोहना भय है वहाँ से उठकर चला ।

‘कौन है ?’ तभी द्वार छोटते हुए मणिमन्त्र ने पूछा ।

‘मे देवा नामक ।

क्या बात है ?

‘कुछ नहीं मों ही ।

कौन नामक ? अन्दर से मजरी की आवाज आई । वह तुरन्त बाहर आई । ‘आओ देवा ! बाहर क्यों बठ गए ?

‘कुछ नहीं मों ही । बहुर उसने निस्वास ली ।

‘देवा ! तेरे भाई बाड़े गिन में आ जायेंगे ।

बड़ ने गन्ध हिलाई नहीं दबी ! मैं अब उनसे भेंट नहीं कर सकूँगा ।

‘क्यों ? फीका हूँ ही हूँकर मजरी ने कहा ।

कन मेरी झोंपड़ी पर तन्तू बना है ।

‘दरे तो इससे क्या होता है ?’ मजरी ने साहस से कहा । तेरे भाई तो बस आए ही समझ ।

भाई तो आण्य किन्तु मुझ से भेंट न हाँगी । देवी ? ‘कोकाभाई’ की निश्चाओगी ?’

इस बड़ की का ऐसा स्नेह देखकर मजरी की आँखों में पानी आ गया आ अन्दर आ ।

देवा अन्दर गया और बीघरि को देखकर पुन बाहर आया । जिस समय वह धीमी गति और भारी सदृश्य से गढ़ की ओर मुड़ा उस

‘एक वर्ष तक चस सके इतना घनाज तो गढ़ में है !’

‘घापने कहीं से जाना ?’

जान ही लिया कहीं से । तुझे पट्टणियों को निराश करने का एक ही माग है ।

कौन सा ?

यहाँ से घनाज हटा देना होगा ।

कहाँ ? अकित होकर देवा ने पूछा ।

‘जहाँ इच्छा हो ।’

और माई घा गए तो ? देवा ने पूछा ।

देवा में गंगानाथ भगवान् को सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि मेरा अभिप्राय यही है कि यह पट्टणी सेना गढ़ में आनन्द से न रह सके । एक काम करेगा ? अभी घनाज निकास दे । यदि तेरे माई घा गए तो दूसरे दिन मैं कोठार किर से भरवा दूँगा ।

भगर किसी ने जान लिया तो ?

कौन जानेगा ?

‘किन्तु निनामा किस प्रकार जायेगा ?’

देख प्रतिग्नि रात को नवनेची के घाट के सामने मेरे भादभी नौका लेकर आयेंगे । तू ऊपर से बोरे गिरा देना ।

‘मेरे माई डाटेंगे तो ?’

पागल ! तेरे माई आयेंगे ही नहीं । रेवापाल बठोरता से कहा । देव बाँप उठा । उसे कम का उल्लू बीनता ओ सुनाई दिया था ।

घोसा तो नहीं है ?

‘सौगन्ध से ले ।’

तो अपनी सात पीढ़ी को सौगन्ध सात पीढ़ी की सौगन्ध ?’ देवा ने पूछा ।

‘हां । मेरी सात पीढ़ी की सौगन्ध ।’

देवा मोड़ी देर चुप रहा । उसने एकाएक ऊपर देखकर कहा, महा

रात ! कम रात को माथ में बना । यह नेरा सोसला की बात ठीक हुई तो ऐसे गिराऊगा ।' कहकर वह बच्ची से चला गया ।

रेवायाम हुआ । 'नाट का भाग्य कमर रहा है वह बोला, और धरन सायी को संकर बना गया ।

२६

लेखन के उपायों में हेमचन्द्र मूरि मीन धारण किये हुए थे । वह कुछ ही दूर पर रख हुए धरने 'प्रोछन' की ओर देख रहे थे । इस युवक मूरि को ध्यान करने के सिवाय इस प्रकार बैठने की भाव नहीं थी । आज की यह स्थिति उन्हें तनिक असह्यारण लग रही थी ।

जिस आयु में और लड़क भूले में भूषते हैं उस समय इन्होंने बीठ राग होने की इच्छा प्रकट की थी । जिस समय युवक जीवन में सकृति नवीन आह्वानों का अनुभव करने का छापटात रहते हैं उस समय इन्होंने भूरिप पाया जब और साथ अम्मास करना प्रारम्भ करते हैं उस समय वह छात्र-विशारद होने आये थे । अत्यंत अनुभव इनके अपूर्व धरित निष्ठीम ज्ञान और अगाध अनुभवा की देखकर चरित हो जाता था । इतने छोटे समय में ही जनविद्या और भय क अ्योम में एक अद्भुत अन्वित्य का आभास लोगों को होने लगा था ।

मौखन आयमन के परचाल जीवन में प्रथम बार उन्हें सावधानी से आत्म-निरीक्षण करने की आवश्यकता पड़ी । उन्हें विश्वास था कि उनका मस्तिष्क अन्य लोगों से निरासे ही प्रकार का था । उन्हें कभी समय रखने के लिए प्रयत्न करने की आवश्यकता न पड़ी थी, विचार क्या वस्तु है इसका अनुभव कभी किया नहीं था । उनकी यह निश्चय श्रद्धा थी कि वह आज्ञा अधिकारी है ।

अधिकांश जना के मस्तिष्क कीचड़ भरे पोखर के समान होते हैं कई के नहीं नाम मात्र सहरियों से मलकृत स्थिर बंधे हुए, जल से भरे सालाब जैसे होते हैं। कई एक प्रवाह्युक्त नदी के समान होते हैं। जिसमें उछलती सहरियां भी होती हैं और शांति सरलता भी। कुछ के मस्तिष्क समुद्र के समान होते हैं—शांत सरोवर की भगावता चटती गिरती सहरों का आनन्द दुर्जय और उछलता हुआ उत्साह प्रलय जसी चंचल तरंगों का तांडवनृत्य।

इस युवक का मस्तिष्क इनमें से किसी प्रकार का नहीं था। उसमें भारती की स्वच्छता शांति उदासीनता और सर्वग्राह्यता थी।

बीतराग या निद्वन्द्व होते औरों को कठिनाई होती है जितेन्द्रिय होने के लिए प्रती की परम्परा का पालन करना पड़ता है किन्तु इस शांत स्थिर एवं भावनाविहीन हृदय को जितेन्द्रिय प्रपञ्च निर्विकार बनने के लिए प्रयत्न करना नहीं पड़ा। कारण कि इसमें विकार अनुभव करने की शक्ति थी। जिनशासन के स्वयं विकार ग्रहण करने की शक्तिहीनता को देखकर स्तब्ध रह जाते और पूर्व जन्म के सुस्कार और लयोपशमन का ही परिणाम समझकर स्पर्धा करना त्याग देते थे।

निमल भारती-सा मस्तिष्क जिस ओर सूरि की इच्छा होती उसी दिशा में धूम खाता था और इच्छित विषय का प्रतिबिम्ब उसमें पड़ने लगता था। इस प्रकार वह बिना प्रयत्न किए ही अप्रूप था इसका हेमचन्द्र को पूरा-पूरा मान था।

इस उम्र में प्रथम बार उसके मस्तिष्क में सज्ज उत्पन्न हुआ। क्या मस्तिष्क पर विकार की छाया पड़ी है? अन्य लोगों में तो ऐसा सज्ज उत्पन्न ही नहीं होता परन्तु यह अद्भुत नवयुवक इतना-सा सज्ज होते ही उसके अनुसन्धान में लग गया।

कल उसने यहाँ पहले देखी एक स्त्री का मुख देखा एक मूख द्वारा उसकी सोची हुई बाजी को उसटते देखा और यह बाजी यह मूर्ख उस स्त्री की सहाह से ही उसट रहा था एसी उसे आश्चर्य हुई। उसने

कई प्रकार की स्त्रियाँ देखी थीं, कई मूलों को बाजी उलटते हुए देखा था, कई स्त्रियाँ बाजी उलटने में समर्थ होती हैं। इसका भी उसे अनुभव था। यह विकार तो नहीं ही था किन्तु विकार का सञ्चय ही प्रशुभ होता है। विकार का सञ्चय उत्पन्न हुआ है ऐसा भ्रम ही भस्तिष्क में क्योंकर हुआ ? अद्विग्न न्यायिक की तीक्ष्णता से सूरि ने यहाँ प्रश्न अपने आप से किया।

जिस समय उसने पीला ली थी उस समय इस स्त्री को देखा था ऐसा कुछ-कुछ स्मरण था तत्पश्चात् इसे वाक से गया और उससे ग्राह्य कर लिया वह भी उसकी जानकारी के बाहर नहीं था और इस विद्वान् और सज्जन स्त्री ने आश्चर्य उसे को मात दी थी इसमें ऐसा कुछ नहीं था। जिससे उसके स्थिर चित्त को किञ्चित् मात्र भी अस्थिर होने का कारण मिले। तो यह सञ्चय उत्पन्न हुआ कैसे ? हठी बनकर हेमचन्द्र सूरि ने अपने निमित्त भस्तिष्क से प्रश्न किया।

महाराज ! प्रणाम। भ्रात्रभट का सनिक उपहास करता-सा स्वर सुनाई पड़ा। उसने आकर प्रणाम किया।

कौन आश्चर्य ! आओ घमसाओ। सूरि ने कहा।

भ्रात्रभट और हेमचन्द्र बचपन के मित्र थे एक ही घर में बड़े हुए थे और दोनों उदा महेता के सर्वव्यापी खेल क खिलौने थे। फिर भी इस प्रतापी बालमूर्ति को सर्वोपरि बनाने उदा महेता के प्रयत्न के कारण क्षमात में हेमचन्द्र मुरि ने ऐसा आश्चर्य रच रखा था मानो वह कोई तीर्थंकर हो। इसलिए साधारणतया भ्रात्रभट को उसे इस प्रकार सम्बोधित करने का साहस नहीं होता। परन्तु कहावत प्रसिद्ध है कि कोचे हुए नाग से बोचा हुआ प्रणयी बुरा होता है। उसके सम्मान को चक्का पहुँचाया होता तो आश्चर्य सहन कर लेता किन्तु अब सूरि ने उसकी हृदयेवरी के मान को ही तोड़ने का काम आरम्भ किया तो उसे कैसे सहन हो सकता था ?

भ्रात्रभट के भस्तिष्क में एक बहुत ही विनोद भरा योजना आई।

उठा । इस तीव्र बुद्धि वाले युवक ने अपने मस्तिष्क से हिसाब मांगा ।

भारम्भ उस विचार धारा कि नहीं जाना चाहिये । हेमचन्द्र ने धाँसों बीच लीं । क्या सखमुष विकार था गया है ? भयम्भ इस डर से कि कहीं विकार बढ़ न जाय इस स्त्री को न देखने की यह उचित प्रेरणा हो रही है ? क्या उसे भी और साधुओं के समान साधारण प्रावकों के समान एने प्रसंगों में मनोनिग्रह करने की आवश्यकता पड़ेगी ? क्या वह ऐसी अयोग्यता को पहुँच गया है ? जिस इन्द्रियों के जीतने की कभी आवश्यकता नहीं पड़ेगी जो पूव जन्म के प्रताप से अपने को वीर राग मानता था उसे आज इन्द्रियों जीतने का प्रयत्न करना पड़ेगा ? नहीं—उसके अन्तर ने उत्तर दिया । तसय करने के लिए कोई कारण ही नहीं था । उसने स्थिर होकर आत्ममग्न की ओर देखा ।

‘भावङ्ग ! मुझे कल से एक सत करना पड़ेगा । तेरा मस्तिष्क ठिकाने नहीं है ।

आत्ममग्न हूँ पड़ ! आप तनिक भी चिन्ता न कीजिए । आप जायेंगे न ?

हाँ ! धाँसि से हेमचन्द्र बोला मैं खीचूँगा ।

अच्छी बात है । आप दोनों विद्वान हैं अतएव मेरा विश्वास है कि आपको भी लाभ होगा । आखिरी दाव फक कर भावङ्ग उठा और प्रणाम कर विदा हुआ ।

‘वर्मलास । भूरि ने कहा और फिर आत्मनिरीक्षण में रत हो गया ।

काश्मिर के यहाँ सभात के सुविख्यात सूरि ‘गोबरी’ के लिए जा रहे हैं यह सुनकर लोग कुछ चकित हुए ।

जित समय हेमचन्द्र सूरि अपने छ शिष्यों सहित साम्बा बहुस्मृति क बाढ़ में धाए उस समय उनके साथ भाभ्रमट भी था। सोमेश्वर मणिमद और पुराणी वाका सामुग्र्यों का अमितावन करने के लिए धामे और स्थापन करके उन्हें घराने से गए।

भावश्यकता से अधिक हेमचन्द्र नहीं सोचते थे। उनका सिर तनिक झुका हुआ था। वह अपने शीशु और भावनात्रिहीन मस्तिष्क को कठोरता से अपनी अविकार्य स्वस्थता को रखा करने का प्रयत्न दे रहे थे। उनके लिए उनके जीवन की परम कसौटी भा रही थी। अब तक निर्विकार होने को वह बहुत कुछ मानते थे क्योंकि स्वयं अविकारी होकर अविकारीपन को अष्ट मानते थे। विकार को निर्मूल करने के लिए किसी तप की आवश्यकता पड़े यह उनके लिए निवर्तता का चिह्न था। वासना जीतने के स्थान पर एक ऐसी स्थिति प्राप्त करना उसके जीवन का महान् लक्ष्य था जहाँ पहुँचकर वासना का अनुभव ही न हो सके। और ऐसी स्थिति प्राप्त करने में उन्हें अब तक कोई प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं पड़ी थी।

जिनशासन की रक्षा करना और उसके उत्कृष्ट के लिए प्रयत्न करना उसके अहिंसा-अन्ध का प्रचार करना और उसके लिए किसी न-किसी प्रकार से रागमत्ता हस्तगत करना यही उनका परम ध्येय ही था। जीवन के साथ उनका संबंध मात्र इस आकांक्षा को सिद्ध करने के प्रयत्नों तक ही सीमित था। मानव हृन्म के उत्साह आनन्द या व्यथा की ओर अनुकम्पा या स्नेह उनकी दृष्टि नहीं देखती थी। उनके विचार में वह सब कुछ जंतुओं की विकारी लोता थी, उनकी भार वह किसी महामोह की ठही पीड़ाओं का हनन करने वाले दस्तोपकारी वध के समान देखते थे।

पवारिए, महाराज ! मजरी का सुसंस्कृत स्वर सुनाई पडा विराजिए।

नीची दृष्टि करने सवे हुए सूरि ने ऊपर देखने से पहले धीरे से

रजोहरण से घुल झुहारकर 'धमलाम' का उच्चारण किया। जब उन्होंने ऊपर देखा तो द्वार में श्वेत वस्त्र में अप्सरा के समान वांतिवान् लम्बी और धिप्ताकर्पक सुन्दरी खड़ी हुई दिखाई दी। उसके मधुर होठों पर स्वागत की मुस्कराहट थी, तेजस्वी आँखों में स्नेही हृदय के उत्साह का प्रतिबिम्ब था। सूरि का जसा मस्तिष्क था वैसी ही उनकी निरीक्षण शक्ति भी थी। भर्त्सक शस्त्र और काव्य से याद किया शब्द-समुच्चय धीरे धीरे सुलने लगा। मदासना, चन्दनना' शरीरमण्डित 'जघन गौरव' इस सम्पूर्ण योजना में शब्द और वस्तु की रचने वाले का निष्पन्न अविकार था। उसमें था न सौन्दर्य भक्त का उत्साह और न कवि की भावना। भक्ति के भार से सोमेश्वर की दृष्टि झुक गई मोह की अधीनता से आत्ममग्न की आँखें जँ फटसे गईं। दूसरे साधुओं पर इस दर्शन की जो प्रतिक्रिया हुई उसे वह केवल मुह फाड़कर ही बता सके।

मंजरी ने वंदना की 'सूरिजी! आप और साधु मण्डल की मरी वंदना।

मंजरी वस्त्र सिकोड़कर पुराणी काका और मणिमग्न के मध्य में बैठ गई और गव भरी दृष्टि से दिग्दृष्ट में जिसकी ख्याति फली हुई थी उस बालसूरि की ओर निहारने लगी।

देवी! आंबड़ ने कहा सूरिजी हमारे सभात के भाषे के मुकुट हैं।

मैंने इन्हें बहुत बप हुए तब देखा था।' मंजरी ने मुस्कराते हुए कहा कहिए महाराज। याद है? आपने दीक्षा ली उससे पहले हम दोनों एक ही छपासय में थे। आपने मुझे भी दीक्षा लेने के लिए कहा था, याद है? आप उस समय घाठ बप के थे।

मुझे याद है। अविक्त्यन भिक्षु के ढंग से हेमचन्द्र ने कहा।

ऐसा? यह तो मुझे कुछ मालूम नहीं। आंबड़ बोला।

आंबड़ को देखकर उदा महेता की याद आई, और मंजरी के मुख

पर रेखाएँ खिचकर भिट गई । उसने श्रीवङ्ग के सापने देखकर कहा, तुम्हें कसे मासूम हुआ ? सूरिजी के साथ वह मुझे भी दीक्षा देन वाले थे ।

फिर ?' श्रीवङ्ग के कानों में उठती बात आई अवश्य थी किन्तु मञ्जरी के मुह से सुनने के लिए उसने पूछा ।

फिर ? मञ्जरी नीचे देखकर हस पड़ी । उसके हास्य की तरंगें कमरे में प्रसारित हो उठी । सूरि के धविकारी कान को यह स्वच्छन्दता छटकी । उसके मस्तिष्क ने केवल इतनी-सी टीका की— इस हास्य को विद्युत्स्तेधा कहा जा सकता है ।

'फिर क्या ?' मञ्जरी ने बात आगे बढ़ाई, मैं भाग गई । महाराज ! दीक्षा लेने के पश्चात् जिस क्षाति की खोज में आप थे क्या वह मिली ?

मेरे मन में क्षणाति थी ही नहीं । हेमचन्द्र ने कहा । किन्तु जिनशासन का योगस्कर पथ छोड़ देने के पश्चात् तुम अपना ब्राह्मणत्व तो रख सकी न ?

मञ्जरी के कानों को इन शब्दों में कर्कशता लगी । इस प्रश्न में उसे चलाहना सा लगा । उसने सावधान होकर ऊपर देखा ।

'मेरे ब्राह्मणत्व को भयवा आपकी दृष्टि में मेरी मिथ्यादृष्टि को— हरने की किसी में शक्ति थी ही नहीं ।

सूरि मुस्करा लिए, तुमने योग की होती या जिनशासन की आभूषणस्वरूप साध्वी बनती । मञ्जरी का सुझोस तिर गर्व में ऊँचा उठा । उसकी भ्राँसों की चमक बढ़ गई । उसने भ्राँसों तनिक खोली, उनमें चमक भाने की दस्तता समी देखने लग ।

मैं भाग गई तो आपका सम्पूर्ण शासन भी जो मुझे नहीं दे सकता था वह मुझे मिला ।

क्या ? अनायास श्रीवङ्ग के मुह में निकल गया ।

मञ्जरी वह प्रश्न सुनकर हस पड़ी । उसका जयनों में दया योग्य वाणी में मृदुलता आ गई तुम्हारे दुर्गपाम ।

‘काक मटराज !’ सूरिजी इस प्रकार बोले मानो धाम्रभट को उत्तर दे रहे हों । मंजरी ने इसमें छिपा हुआ कटास भी भांप लिया ।

‘हाँ । उसकी वाणी में दुजय गर्व की झंकार थी । उसकी सुन्दर श्रीवा की नसें कुछ फूलकर उठ आईं । गुह द्राणाधाय और कीटिल्य दोनों का दप भंग करे ऐसा मटराज ! यह हँस दी । उस हँसी में विजय हुन्दुभी की प्रतिध्वनि थी ।

हेमचन्द्र सूरि को सगा कि उसके जैसे साधु के सामने मंजरी आहम्बर दिखाये यह सबका अनुचित है । उसे मास हुआ मानो उसे प्रशंसा करने के लिए ही बुलाया गया था ।

भगवती ! सगता है काव्य-पुराणों में बहुत खि है तुम्हारी ! हँसकर सूरि ने कहा ।

उसकी हँसी में पिता जैसा वास्तव्य था । यह देखकर मंजरी क्रोधित हो गई । धाम्रभट के कपलानुसार हेमचन्द्र उससे भेंट करना चाहता था तो क्या उसका अपमान करने के लिए !

खि ! सोमेश्वर को भी तनिक खटक गया था इसलिए वह बीच ही में बोला सूरि जी ! जगता है आप देवी की शास्त्रज्ञता से परिचित नहीं हैं ।

बस आँख को सहारा मिल गया । मंजरी की प्रशंसा करके हेमचन्द्र को नीचा दिखाने का यही अवसर उसे उपयुक्त दिखाई दिया । सोमेश्वर ! हमारे सूरिजी अन्य शास्त्रज्ञों के समान नहीं हैं । यह हमारे गुजरात के अद्वितीय विद्वान् हैं । श्रेयी चाहें तो शास्त्रार्थ कर लें ।

मंजरी ने चौंकर ऊपर देखा । क्या इस विदेशी सूरि और उसके मित्र धाम्रभट ने उसकी परीक्षा लेने उसको विद्वता का उरहास उड़ाने के लिए यह प्रयत्न रखा है ? उसने कई समाए देखी थीं । कई एक में विजय भी पाई थी जसे जसे उसका जीवन काक के जीवन में समाता गया त्यों-तथा हर किसी पण्डित के साथ विवाद करने का उसने दृढ़ सङ्कल्प कर लिया था । क्या उसके गौरव का अपमान करने के लिए

ही यह वापिस आये थे ? क्या उसके शीरपति व धनु उसकी पत्नी की हँसी उठाकर उसका अपमान करने का प्रयत्न कर रहे हैं ? उसे उदा महेता—श्रीबड का पिता हेमचन्द्र का सहायक और उसका और उसके पति का धनु—यात्रा आ गया । काश्मीर के कवि-कुल शिरोमणि की क्या नववर्ण विजेता बात की अर्द्धांगिनी ना रक्त खोल उठा । उसके मोहक रत्नम अघर कपि और बन्द होकर फँडोर हो गए । कामदेव क धनुष सी उसकी मूर्ति तनिक निकट आई उसकी नाक गव स तनिक तिरछी हो गई । वह हसी—इस प्रकार कि नरपति भी क्षुब्ध लगने लगे—और बोले गुजराती विद्वान् ! और रण के लिए तत्पर वीर की भाँति मुँह खोकर मानो पण्डितों की समा में ही इस प्रकार गव वचन बोली—

या पाणिनीयमुपजीवति धाम्नास्त्रम्
या मम्मटोदितमसकरणं प्रयुज्यते ।

(जो पाणिनी द्वारा रची हुई व्याकरण की धारण सेता है और जो मम्मट की बताई मन्त्रार-योजना अपनाता है, इस गुजर भाषा के सेवक को मेरे साथ विवाद करने का अवकाश हो सकता है) ।

तस्या नु गुर्जरगिरि परिवारकस्य
कस्ते मया सह विषदकषावकाशः ॥

हेमचन्द्र में जितनी साधु की मिलिप्तता थी उतनी ही चतुर व्यक्ति की दृष्टि भी थी । वह तुरन्त समझ गया कि कुछ भ्रम होने का कारण ही मन्त्री ऐसे धाम कह रही है । उसने एक दम श्रीबड के सामने देखा और उसका मुन्करात हुए उसके मुख का हास्य जाना । इसी मोह पीड़ित ने यह सब किया है यह वह समझ गया । और मन्त्री को देख उसने भावहीन मस्तिष्क में अपरिचित क समान प्रस्ताव करने का विचार उठा । उसने मन्नता से हाथ जोड़े और अत्यन्त उदारपूर्ण 'मुसमुद्रा में सम्मान से उत्तर दिया—

मंजरी के नयनों में निम्न तेज देखा उसके स्फटिक भास पर घगाय
 ज्ञान की रेखाएँ देखीं उसके सौंदर्य में से विशुद्ध ज्ञान की शांत रश्मियाँ
 फूटती देखीं। सूरि की एकाग्रता व्यापक हुई। उसने मजरी की गोद में
 बीणा पड़ी देखी। उसके चरणों के सामने मयूर बठा देखा। उत्साह
 प्ररित करने के लिए उसके घागे बढ़ाए हुए हाथ में उसने कमल देखा।
 रूप मजरी का ही रहा किन्तु उसने दशन किए सरस्वती के।
 हेमचन्द्र ने साक्षात् दण्डवत् किया माता। तुम्हारा घरदान
 अवश्य फलीभूत होगा।

एक सण उसने दृष्टि ठहराई। उतने समय में सूरि ने योगबल से
 निर्विकारता साध ली थी। उसने प्रणाम किया भाँखें मोची और
 खोली। सभी उसकी ओर देख रहे थे। भाग्य से कोई नम्रता का प्रथ
 समझा हो। सूरि ने शांत स्वर में कहा—

काश्मीरान् गन्तुकामस्य शारदारामनेच्छया।
 यात्रामूत पुनस्त्वता मे वीक्ष्य त्वां शारदामहि ॥
 शारदा की धारायना करने की इच्छा से मैं काश्मीर जाना
 चाहता था। किन्तु आप स्वयं शारदा हैं। आपको यहाँ देखने के पश्चात्
 मेरी यात्रा का कोई प्रयोजन नहीं रह जाता।
 मंजरी की भाँखें हूँ रही थी। सूरि के अन्तर में जितना संभव
 है उतना उत्साह धाया।

सूरिजी! आप यहाँ कब तक ठहरेंगे?
 मे कल जाऊँगा।

माँ! कहता हुआ चुड़कता फिसलता बीसरि अन्दर धाया। व
 आकर मजरी के गले से लिपट गया। सभी उसकी ओर देखने लगे
 मजरी की आँखों में स्नेह जमट धाया।

‘माता! यह तुम्हारा पुत्र है?’
 हाँ, महाराज!

हेमचन्द्र सड़के की ओर एकटक देखता रहा और फिर ग

मुख से कहा—माता ! इस पुत्र की माता के रूप में मैं पुन प्रणाम करता हूँ ।

‘क्यों ?’

‘जिनघासन का सरक्षण इसी के प्रताप से होगा ।

सभी चकित होकर सूरि की ओर देखने लगे । जबत हेमचन्द्र सूरि बालक की मुसमुसा को ध्यान से देखता रहा । उसकी वाणी में शक्ति थी ।

‘महाराज ! क्या कहते हैं ?’ अनायास ही मंजरी को कपकपी छूट गई ।

‘हाँ ! मुझे स्पष्ट दिखाई दे रहा है ।

‘तो महाराज ! एक बात पूछू ?’ भातुरता से मंजरी बोली ।

‘क्या ?’

‘मेरे भट्टराज कब लौटेंगे ?’

सूरि ने चकित होकर मंजरी की ओर निहार कर कहा—मेरी विद्या इस प्रश्न का उत्तर नहीं द सकती । माता ! अब हमारे जाने का समय हो गया ।

‘हाँ ठहरिए । भिक्षा ले लूँ । मंजरी चली । उसका हृन्म सिलसा से भर आया । समुद्र की यात्रा करते हुए पोत का वियोग दुःख ही चला ।

दूसरे दिन जब हेमचन्द्रसूरि ने मगकुन्ध से प्रस्थान किया उस समय उनके मुख पर सरस्वती से वरदान जाने का गन्ध था ।

बार कहने की प्रतीक्षा वह नहीं करता था। वह सलाहियों को आदेश देने के लिए बसा गया।

सेमा !' काक ने सेमा को बुलाया 'देख मैं सामन्त दामा और खलासी नौका से उतर जायेंगे। सेमा ! मैं अपने प्राण और प्रतिष्ठा अब तेरे हाथों में सौंपता हूँ। तेरी चतुराई पर सम्पूर्ण काट निर्भर है। देख तू मेरे वस्त्र पहन ले और अपने वस्त्र मुझे दे दे।

'जी हाँ।

फिर तू और काका नाविक दोनों पोत लेकर पाटण की ओर जाना। पाटण के दोस्तों ही पोत डुबो देना। काका मानो वह रहा हो इस प्रकार आकर यहाँ दामा से मिलेगा और तू तैरता हुआ पाटण के बन्दरगाह में जाना।'

'जी।

देख ध्यान रखना। मुझसे परिचित कोई मिले तो कहना कि पोत डूब गया और मेरा क्या हुआ मात्तम नहीं। किन्तु जहाँ तक मेरा अनुमान है कोई नया आदमी ही आयेगा। नए पट्टणा योद्धाओं ने मुझे नहीं दखा है। तेरा और मेरा शरीर समान है अतः अगर कोई तुझे काक समझ ले तो ना मत करना।

सेमा तनिक अकित होकर देखने लगा।

सुन सेमा ! हमारा एक-दूसरे से दस बर पुराना सम्बन्ध है और तेरी चतुराई मैं मुझे विश्वास है। देख यदि वह तुझे काक समझ लें तो उनका भ्रम भंग मत करना। सम्भव है तुझ पर असहनीय दुःख दूट पड़े, वैसे दशा में एक बात याद रखना। यदि उदा महेना के आदमी तुझे कष्ट पहुँचायें तो कहना कि तुझे भाभी सम्बन्धी बात करनी है। यह तुरन्त तुझे उसके पास से आबेंगे। तू काक नहीं है यह उदा महेना देखते ही समझ जायगा। यदि महाराज के आदमी पकड़ें तो कहना मुजाल महेना से घोषमाण के घात की बात कहनी है। छप्पा ? आश्चर्यकृत्य पढ़ने पर दो में से कोई एक तुझे पहचान लेगा और तेरा

वाल्स बाँका भी नहीं होगा । मैं भीखित रहा तो पाँच-सात दिन में मा ही पहुँचूँगा ।"

जी !

सैमा ! तू सब बात जानता है इसलिए कुछ ऐसा करना कि इतने दिनों तक यह भ्रम बना रहे ।

जी बहुत अच्छा ।

और सैमा ! काक की छाँट बाणी छनिक कांप उठी मुझ कुछ हो जाय तो— काक ने गला साफ किया तू और सोमश्वर अपनी मामी और बच्चों को देखना ।

छोड़ो बापू ! आँखों से जल पोंछते हुए सैमा बोला किस्की मजाल कि आपका बाल बाँका भी कर सके । अधिक धृष्ट तो इन पट्टणियों को भी उसल फेंकूँगा ।

काक मुस्करा दिया । बात इतनी सहज नहीं है ।

बापू आप बुद्धिमानों को ऐसा ही लगता है । हम तो पुरन्त दान महाकल्याण में विश्वास करते हैं ।

अच्छा कहकर काक ने सैमा का आलिंगन किया ।

पोत के किनारे के निकट पहुँचने पर काक दामा नायक सामन्त और सलासी लकड़ी के पाट डाल कर पानी में कूद पड़े और किनारे की ओर चले गए । सैमासत और काका ने धीरे धीरे पोत को पुनः नदी की बीच धार की ओर बढ़ाया ।

२६

सूर्य का स्वच्छ प्रकाश बढ़ने लगा था । प्रकाश में सोमनाथ पाटण मुद्र से निकसी रंभा के समान घोमित हो रहा था । सुन्दर वस्त्र के र के समान मगर-कोट समुद्र तक आता और जहाँ वह जलधि को

स्पर्श करता था वहाँ बन्दर में पड़ी मौकाधों की भाँसर मन्द-मन्द पवन में झूल उठती थीं । इस घेर के ऊपर चापसरा की धमर देह के समान सोमनाथ का भव्य मन्दिर खड़ा था । मन्दिर का स्वर्ण कलाग और उसके चारों ओर फहराती हुई ध्वजा एसी सग रही थी माना उज्ज्वल दिव्य सुन्दर अपने मुख की ओढ़नी में छिपाने का निरर्थक प्रयत्न कर रही हो । प्रभास में भाज जिस मन्दिर के चमत्ताभेन दीख पड़ते हैं वही कभी परधी से प्रदक्षिणा करवाते थेक के समान अपनी सम्पूर्ण छाटा में स्थित था । भाज भी उसकी प्रत्येक शिखा की अपूर्व चारीगरी उसके स्तम्भों का गौरव और उसके गुम्बजों के अवरोध इन सबसे यह मन्दिर कैसा रहा होगा इसका अनुमान किया जा सकता है । किन्तु इस कथा के काल में तो वह नया था और गवदीवन की मोहकता में झड़ग खड़ा था ।

महमूद गजनवी ने पाण्ण लुटका और सोमनाथ के प्राचीन मन्दिर को तोड़कर यह मान लिया कि उसने गुजरात की शक्ति और समृद्धि की सदा के लिए झूठ किया है । किन्तु वह धम विनाशक विदेशी गुजरात से परिचित नहीं था । उसके पीठ केरते ही शूरवीर भीम ने फिर पाटण ले लिया और वहाँ प्राचीन मन्दिर के जले हुए परपर पड़े थे वहाँ नए मन्दिर की रचना प्रारम्भ करा दी । देश-देश के चारीगरों ने वर्षों तक एकाग्र होकर साधना की । देश-देश के नरपतियों ने अतुल धन का उपहार दिया । और जिस मन्दिर का निर्माण शूरवीर भीम ने प्रारम्भ किया निर्माणादि में रुचि रखने वाले कणदेव ने उसे अलङ्कृत किया और छीन पीढ़ी पश्चात् उसी पर जयदेव ने धनमोल स्वर्ण-कलाश चढ़ाकर महमूद गजनवी की विनाशक वृत्ति का उपहास किया ।

यह मन्दिर नहीं बरन् पर्यर में तराशा हुआ एक महाकाव्य था और उसकी प्रेरणा-शक्ति उससे भी अधिक थी । चारों दिशाओं से आये हुए यानी कलाग के समान गगनचुम्बी और धमरावती के समान अप्रूप धाकर के इस सदन की देखकर ऐसा समझते मानो उन्हें सदेह

धुन्तिसाम हो गया हो और जम जमान्तर के पाप मिट गए हों ।

यह मन्दिर पृथ्वी पर खड़ी नी हुई अनहितवाह के प्रभाम की समरमूर्ति की रक्षा करता था । यह ठीक है कि प्रभात मर्दों और प्रभास गुजरात के इन तीन विद्याल द्वारों में से प्रभास सबसे छोटा था । फिर भी विदेशी पोत यहाँ की पवित्रता और मन्दिर की मध्यता से भावपित होकर यहाँ लंगर डालना न चुकते थे । बाल्मगाह के निकट आते हुए यात्रियों की प्रससा मरी दृष्टि क्षितिज पर सोमनाथ भगवान के गगनमेदी गुम्बज पर पड़ती थी । जितनी उनकी भक्ति भावना बढ़ती थी उतना ही पाटण का मान बढ़ता था ।

पाटण के नरेशों की दृष्टि में भी यह मन्दिर उनके प्रताप की आवित प्रतिष्ठा था । मूलराज सोलकी की गम्भीर चतुराई ने प्रभाम घाम की अनहितवाह का पुण्यसेन बनाया । इसी मे सारठ में गुजरात का प्रभाव फना और सम्पूर्ण भारत के पुण्यधाम क रक्षक कहलाने का गौरव सोलकीमा को प्राप्त हुआ । भीम ने गुजरात के हरि से इस भूमि को सौचा इसकी पवित्रता को उज्ज्वलता प्रदान की और समग्र ससार पर विजय प्राप्त करने को व्याकुल अवतिहृन्व भी यही मानते थे कि इष्टनेत्र क वैभव में ही उनका वैभव निहित है ।

शिवालय मष्टाना से पहले ही घोड़ों की टाप से जान उठा । तीन भवरोही भवों को शौहाते हुए मन्दिर के सामन आए । उनमें से भागे का भवरोही भव स धरती पर कूद पड़ा और पीछे देखे बिना ही तीव्र गति से मन्दिर में घुस गया ।

धामन्तुक पट्टणी सनिक था । उसके वस्त्र और धामूयणों से सगता था कि वह बहुत सम्पन्न है और उसके मुख से सगता था कि वह बुद्धिवासी भी है । वह तीव्रगति से मन्दिर में गया । ध्यान लिए बिना ही घंटा बजाया और महादेव की घोर देखे बिना ही नवस्वार किया । मन्दिर की एक क्षिपकी के निकट एक व्यक्ति खड़ा हुआ था । नवा मन्तुक ने उसे देखा और धावश्यकता के धनुकुल मान देकर उसकी घोर

गया । झिड़की के सामने खड़ा हुआ व्यक्ति खतासी जसा लग रहा था ।

नायक ! उस नवागन्तुक युवक ने कहा ।

बापू !' उस व्यक्ति ने बड़े सम्मान से नमस्कार करते हुए कहा ।
क्या हात है ?

बापू ! खतासी अभी-अभी चारों ओर होकर घाए है । ऐसा लगता है केवस एक ही पोत था रहा है ।

यहाँ से दिलाई देता है ? उस युवक ने पूछा ।

वह है ? खतासी ने हाथ के संकेत से दिखाया ।

कुछ क्षण मौन बातचीत चल रहा । झिड़की पर एक बिन्दु आकार में निरन्तर बढ़ा होता जा रहा था ।

जस बाहर चले । आगन्तुक ने कहा और बाहर निकल गया ।
खतासी पीछे-पीछे भागा और दोनों मंदिर की कोठ पर बढ़कर खड़े हो गए ।

आगन्तुक बीबीस-पच्चीस वर्ष का था फिर भी उसके मुख पर
गंभीरता की छाप थी । वह स्वाभाविक गव से चलता था और रह रह
कर अचानक से झिड़की की ओर देखता थोड़ी देर में सूर्योदय हुआ
और सूर्य का स्वर्णिम विम्ब ऊपर उठता आया । दुर्ग्य प्रतिदिन के
समान होते हुए भी अपूर्व था । सुन्दर लगते हुए इस विम्ब की ओर
क्षण भर तक वह युवक देखता रहा । फिर धीरे-से मन्दिर के शिखर
की ओर देखा और पोत पर मस्ती से उठती हुई ध्वजा का ओर प्रसन्न
होकर देखने लगा । वह अपनी दृष्टि उधर ही जमाए था मानो उछलती
तरंगों से कोई खेती सुना हो वह बड़बड़ाया ।

तरंग झूमगा ।

बापू ! उस खतासी ने इस कविताप्रमी युवक की विचार-मात्रा
को झूरता में भग कर दिया ।

क्यों ?

‘वह गया ।’ खतासी ने हाथ सम्बा करके आवाज दी ।

‘क्या ?’

‘वह जलपोत बट्टान पर चढ़ गया है ! देखिए झोत रहा है !

‘हाँ ! धरे धब क्या होगा ?’

‘टूटा धरेरे—वह डूबेगा ! खनासी ने नूटे हुए घन्टों में कहा !

यह भड़ोच से घा रहा था वही पोत है क्या ? युवक ने पूछा !

‘हाँ बापू !’

हाय हाय ! उस युवक का कपाल सङ्कुचित हो गया ‘नायक ? इसमें क सच्ची व्यक्तियों को रक्षा करनी होगी !

धब तो जो भोलानाथ करे वही ठाक !

धरे भोलानाथ तो बरेगा ही ! अघोरता से पग पटककर युवक बोला !

तू बहली दूसरे खनासी लेकर पहुँच और उसमें जितने योद्धा हों उन्हें किसी-न-किसी प्रकार मरे पास ला ! देखता क्या है ? युवक ने क्रोधित होकर कहा जा एग्जम् और बन्दरगाह पर घाघ्रा दे दे—काई भी धरकर आए तो उस पकड़कर मरे पास लाया जाय !

धीर न घाए तो ?

तुम लोगों के पास बाघन के लिए रस्सियाँ हैं या नहीं ? बटाक्ष से युवक ने कहा, ‘जा धीघ्र जा !’

दूसरे ही क्षण वह खनासी अन्दर की धार भागा अथ खतासियों की एकत्रित करके नौकाए खोलने में लग गया ! वह युवक पोड़ी देर तक नायक की गति विधि देखता रहा फिर दूबते हुए पोत की ओर देखा ! अन्त में हठोन्हाह होकर धीमी गति से वह मन्दिर की धार मुड़ा ! उसक भुज पर निराशा की छाव स्पष्ट प्रकट हो रही थी !

पोड़ी दूर जाकर पुनः सौटा और मन्दिर में प्रवेश किया ! उसने पण्डा बजाया और मध्यार तक जाकर छायाण प्रणाम किया ! ‘भोलानाथ ! अज्ञाता की ही तो समा करना ! उसने गद्गद् कण्ठ से

प्रायना की ।

वह उठा मन्दिर से बाहर गया, और अस्त्र पर बैठकर अपने अपने निवास-स्थान की ओर मुड़ गया । उसकी मुसमुदा स्पष्ट ही चिन्तायुक्त थी ।

३०

युवक धीमे धीमे चलता हुआ अपने [स्थान पर गया और पगड़ी उतारकर इधर-उधर टहनने लगा । उसके मुख पर ग्लानि थी और वह जब-तब कान लगाकर आत-जाते लोगों की पग ध्वनि सुन रहा था ।

जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया वैसे-वैसे उसकी अधीरता बढ़ती गई । अंत में उसने एक आदमी को बुलाकर बन्दरगाह की ओर भेजा ।

समय बहुत व्यतीत हो गया था । युवक का मुख निस्तेज और निरुत्साह-सा होने लगा । होठों की दशाकर वह अधीरता को दवाने का यत्न कर रहा था । उसने एक निश्वास ली । ऐसा लग रहा था कि उसके जीवन की आशा नष्ट होती जा रही है ।

इतने में बाहर घोड़े की टाप सुनाई दी । युवक एकदम आगे बढ़ आया । अस्त्र पर से नायक और एक शबेड़ वय के घोड़ा को उतरते हुए देखकर उसके मुख पर मुस्कराहट की हल्की सी रेखा छा गई । नायक के साथ आने वाले घोड़ा का मुख उसे तेजस्वी लगा । घाँसों में धमक भी थी—किन्तु अस्पष्ट सी—क्योंकि वह धका हुआ था । उसके पसने की छटा में गंध था । नाव सीखी कहा जा सकती है स्नायु भी दूढ़ है । युवक को सन्तोष हुआ । समरथ देखा ! मैं जीता ! तू हारी अब तू मेरी—

किन्तु युवक का यह असम्बद्ध प्रलाप अधिक न चल पाया । वह

योद्धा भीगे बस्त्रों सहित आया ।

‘कौन भटजी ?’ उस युवक ने भागे बढ़कर पूछा ।

उस योद्धा ने कपाल को आशु चित कर सिर ऊपर उठाया । ‘मुझे यह लोग यहाँ क्यों लाये हैं ?’ तनिक गव से उसने पूछा ।

‘क्षमा करो भटराज ! युवक ने कहा जयसिंहदेव महाराज ने आपके स्वागत के लिए मुझ भेजा है । आपके पोत को बिकट परिस्थिति में देखकर मैंने ही इस नायक को भेजा था ।

तुम कौन हो ? गव स उस योद्धा ने पूछा ।

‘आपने मुझ नहीं पहचाना ?

कभी देखा हो ऐसा स्मरण नहीं आता ।

मैं उदा महेता का बाहूड हूँ । उस युवक ने कहा ।

‘उदा महेता का पुत्र बागमट भटराज और पण्डित ।’ धीरे-से वह योद्धा बोला बागमट को बोलने की इस आदम्बर भरी रीति के प्रति ‘तिरस्कार हो आया ।

‘जो हाँ ? आप दूसरे वस्त्र धारण कर लीजिए । अब हम वयसी चलेंगे ।

‘परन्तु मैं तुम्हारे साथ नहीं आऊँगा ।

‘क्यों ?

मेरी इच्छा ।

बागमट की भाशा भग हो गई । उसने काकमट की इतनी प्रशंसा सुनी थी कि उसने उसके विषय में वास्तविक काकमट भी इसार-श्रुणा अधिक ऊँची कल्पना कर रखी थी ।

‘चलना तो आपको हीमा ही ।’

‘क्यों ?

‘महाराज की आज्ञा जो है ।

‘धीरे यदि न चले तो ?’ तनिक विचित्र ढंग से हसकर वह योद्धा बोला ।

‘आपको से जाना मेरा कसब्य । यहाँ से वधसी जाने का रास्ता नहीं है । इसलिये मुझे विशेष आज्ञा दी गई है ।

तो ठीक है । काकमट को एकदम स्वीकार करते देखकर वह और आश्चर्य में पड़ गया ।

अभी प्रस्थान कर दें ?’ वाग्मट ने पूछा ।

जब तुम कहो ।

आप विश्राम कर लीजिए, तब चलेंगे । विनयी वाग्मट बोला । उसका मन बधलो जाने के लिए उत्साहित हो उठा ।

३१

जब काक थो पकड़कर अपने आपको भाग्यशाली मानता हुआ वाग्मट फूला न समा रहा था तब काक सरपट भागते हुए घोड़े पर जूनागढ़ की ओर बढ़ रहा था । साटी जाकर उसने खलासियों और दामा को वहीं छोड़ दिया और स्वयं तुरन्त चोरबाड गया । थोड़ी ही देर में चोरबाड का मोतिया भीर और काक दोनों ने जूनागढ़ का मार्ग लिया । रात होते हुए भी वह जूनागढ़ वाली मुख्य सड़क में जा सके । इस मुख्य सड़क की रक्षा पाटन की सना करती थी भूत उधर होकर जाना विपत्तियों से भरा हुआ था । इसी कारण उन्हें लम्बा देढ़ा-मेढ़ा मार्ग पकड़ने की आवश्यकता हुई ।

सोरठ के निर्मल व्योम में चमकत हुए धारागणों के प्रकाश में वह मार्ग काट रहे थे । परन्तु सोरठ के हवा से बात करते हुए घोड़ों के लिए अवकार या पथ की कठिनाइयाँ गीछ थीं । योजन-पर-योजन पार होते चले जा रहे थे फिर भी मोतिया और काक अधीरता से निरन्तर एड का उपयोग करते ही चले जा रहे थे ।

काठियावादी घोड़े में जम साहस आता है तो उसके पल लग जाते हैं उसके पाव धक्के मही उसकी ब्वास भरती नहीं और उसको एड़ियों की भाव-मन्दता भी नहीं होती। वह पगु न रहकर वेग की मूर्ति बन जाता है। उसका स्थूल देह समीर की सूक्ष्मता ग्रहण कर लेता है। इन वेगवती घोड़ियों को उसकी इच्छा शक्ति को तन्मयता से साधते देखकर काक को भी उत्साह हुआ। उपाकाल के समय जब उसने घोड़ियों को रोका उस समय सितिज पर गिरनार घोमित हो रहा था। पवतों से परिचित यात्री को गिरनार खिलौना मालूम होता है और यह धका होने लगती है कि इसे पवत क्यों कहा जाता है ! किंतु औरस भूमि में रहने वाले गुजराती के लिए तो गिरनार गिरिगज है।

छोटे जड़भा के बीच खड़े मनुष्य-और की भांति वह सौरठ की औरस भूमि पर घोमित हुआ और घाताग्न्या से जनसमूह की शक्ति का आकषण केंद्र बना हुआ है आदश चक्रवर्ती माघात के पुत्र ने इसकी छाया में शक्ति प्राप्त की तथा यावपति कंसहारी कृष्ण ने कालयवन के भय से भागते हुए इसी की शरण ली थी। अपनी पर बुद्धिमान का प्रसार करने के लिए उत्सुक देवप्रिय अशोक आर्यावत में हिन्दू संस्कृत स्थापित करने के लिए आनुकुलभूषण समुद्रगुप्त और विदेशी होते हुए भी आय-धर्म के गव सं भक्त रुद्रामन—इन तीनों ने गिरनार को अपनी सत्ता का सीमा दशक विजय-स्तम्भ माना था। चूड़ासमा की सत्ता के स्थापक ने भी इसकी अनेकता की सहायता से सौरठ का साम्राज्य स्थापित करने का प्रयत्न किया था इसी की प्रेरणा से प्रवस बनकर खेगार पाटन की सब विजयी सत्ता को यहाँ से खटा रहा था।

निर्वाण की खोज में सगे हुए बौद्ध मित्र की शक्ति और स्थिरता प्रष्ट करती हुई पन्देखा मस्कार के विजय की निरन्तर साधना में रत और आय धर्म की धुरी को सीधी रखने वाले ब्राह्मणों की निडर निष्प-मारमकता की साक्षी देने वाले पदचिन्ह हिंसा के मोह में फँसी हुई मनुष्य जाति को अहिंसा धर्म की शिक्षा देने के लिए व्याकृष जैन

साधुओं की सहनशीलता की छाया से क्षोभित पदचिह्न पवित्रता के सभी पदास्पद वहाँ पत्थर-पत्थर में दिखाई पड़ते हैं। तब अधिक ध्यान से देखने पर दो और रेखाएँ भी दिखाई पड़ती हैं।

एक नन्ही और सुघट—नर केसरियों की विस्मृत होती हुई बीरता को सुकुमार हाथों से टिकाए रखने वाली सतियों में श्रेष्ठ रागक की और दूसरी विशाल और कठोर—जिसके शिथूलहृदय में उपजी सदा जीवन की पवित्रता भक्ति-योग की महत्ता और सत्य प्रेम की रसिकता त्रिवेणी-संगम के प्रताप से गुजरात की रसान भूमि पुनः रसमय हो गई थी उस कृष्ण-विह्वल नागर की।

किंतु इस सब पर विचार करने के लिए काक के पास न समय था और न शक्ति। उसके लिए गिरनार उसके मित्र खेंगार—केसरी की मुफा थी और इसीलिए था उसकी यात्रा का लक्ष्य।

सूर्योदय होने लगा। गिरनार के गिहरों पर भूरापन हटकर स्वर्ण जैते तज की चमक छा गई थी। निकट ही पर्वत के श्रृंगों से विश्वकर्मा ने मानो गड बना लिया हो ऐसा जूनागढ़ भी दिखाई दिया।

मोतिया ! काक ने कहा।

हां बापू !

हम जूनागढ़ जब तक पहुँचेंगे ?

बापू ! पहुँच तो अभी आते किन्तु इधर पट्टणियों का प्रबल कृष्ण विशेष है इसलिए शीघ्रता नहीं की जा सकती। सम्भा तब पहुँच जायँगे।

दोनों थोड़ी देर तक चलते रहे और फिर घोंड़ियों को छोड़कर एक वृक्ष के नीचे विधाम करने बैठ गए। किन्तु उनके आगम में अधिक विधाम करना भी नहीं लिखा था।

बापू ! चलो थोड़ी समालो।

क्यों ?

यहाँ पुनः उड़ती दिखाई दे रही है। कोई आया है।

काक ने देखा। कुछ दूर पर सचमुच घूँत उड़ती दिखाई दी। वह सपक कर घोटिया पर चढ़ गये और वेग से टेढ़े-मेढ़े मार्ग से भागने लगे। दिनभर वे इसी प्रकार गाँवों और मुख्य सड़क से दूर चलते रहे। संध्या होते-होते वह गिरनार धा ही पहुँच।

बापू ! अब निश्चिन्त हो जाइए। इस पय पर अब कोई नहीं मिलेगा।

‘क्यों ?’

‘यह पय केवल मैं ही जानता हूँ।’

काक ने चारों ओर देखा। मोतिया ! अब मेरी आँखा पर पट्टी बाँध दे।

‘क्यों ?’ चकित होकर अहीर ने पूछा।

‘मैं धनुष पन का आत्मी हूँ। मैं इस पय से परिचित न होऊँ तो अच्छा।’

मोतिया ने अब उस काक की ओर देखा और बहुर सेकर उसकी आँखों पर पट्टी बाँध दी।

काक ने नाम मात्र को लगाम पकड़ रखी थी। उसकी चतुर घोड़ी वेग से बहोरक घोड़ी के पीछे-पीछे जाती जा रही थी। पय में स्थान स्थान पर उतारा और चढ़ाव घात कई बार छोड़ी एकत्र शब्द हो जाती थी। एक बार वह जमक भी गई।

काक की पट्टी से चारों ओर अचकार ही प्रतीत होता था योड़ी देर पश्चात् मोतिया बोला।

‘बापू उतरिये ! गड़ आ गया।’

‘ऊँर जाने से पहले पट्टी मत खोलना।’

असी बापू की इच्छा।

मोतिया घोड़ी दूर तक काक का हाथ पकड़ कर ले गया। वहाँ कोई रुका हुआ था। मोतिया ने उससे बात की और फिर काक का हाथ पकड़ कर पत्थर की एक सफरी पगडण्डी पर चढ़ने लगा। यक-यक पर

मोतिया काक को सामगान रहने की सूचना देता रहता था। कुछ देर
 इन्धन वह गढ़ पर आ गये। मोतिया ने पट्टी खोल दी।

चारों ओर अंधकार छा चुका था। कभी-कभी मशाल का क्षीण प्रकाश
 दिखाई देकर घट्ट सा हो जाता था। इस अंधकार में भी मोतिया काक
 को बहुत दीप्तता से ले चला।

थोड़ी दूर चलकर महल के पिछले द्वार से उन्होंने अन्दर प्रवेश किया
 जहाँ मोतिया ने किसी मनुष्य के कान में कुछ कहा। वह तुरन्त ऊपर
 जाकर लौट आया और काक को ले गया। महल की छत के एक किनारे
 काक को खड़ा करके वह चला गया।

रात अंधेरी थी। काक तारा के क्षीण प्रकाश में भी चारों दिशाओं
 में भली प्रकार देख सकता था। थोड़ी दूर पर सैनिकों की हुंकार भी
 वेदना की चीत्कार स्पष्ट सुनाई पड़ रही थी। कोट की छाई से दूर अंध.
 की हिनहिनाहट या कभी-कभी उत्साह भरी गजना से पट्टणी और सोरठीर
 सैनिक के लड़ने के स्थान का ज्ञान करवा देते थे। चारों ओर के अंधकार
 में दीपक के प्रकाश के कारण विजय-सेना की छावनी बनस्पती स्पष्ट
 दिखाई पड़ती थी। स्थान-स्थान पर खिलाई पड़ने वाली आग की लपटें
 या घुमा विदेशियों द्वारा किए हुए व्यवहार की साक्षी दे रहे थे। सबसे
 तटस्थ अंधकार में भी काला लगता हुआ गिरनार समीप पर अपना एक
 समान भयंकर प्रभाव डाल रहा था। इस सब से अलग दूर किसी गुहा
 में पड़े सिंह की गजना का गम्भीर नाद उस त्रासमय वातावरण को
 और भी त्रासमयी बना रहा था। काक विचार-मग्न होकर देख रहा
 और मौन ही उसने जूनागढ़ के दुजय खेंगार की अठिग वीरता को
 अर्घ्य अर्पण किया।

पीछे से कोई दौड़ता हुआ आया। कौन काक ? आगन्तुक का
 स्वर सुनाई पड़ा।

काक को स्वर परिचित लगा। आगन्तुक को वह देख सके उस
 पहले तो आगन्तुक ने उसे अपनी बाहुओं में भर लिया।
 काक चमका किन्तु पहचानते ही बोला कौन रा ?

राणकदेवी के स्थान पर रा' क्यों आये ? उसे किसने बुलाया है ? रा' क्या सोचेंगे ? इस प्रकार के अनेक विचार काक के मन में उठे । रा' के आतिथ्य समाप्त कर लेने पर उसने उसे ध्यान से देखा । उस दम पर उसके मस्तिष्क के आगे पन्द्रह वष पहले का खगार खड़ा हो गया । उसके सबसे और छटा भरे भग अब भी जैसे-के-तैसे थे । सोमसुन्दरी के इस प्रणयों के सुन्दर अर्थों पर इस समय कवच और पट्टियाँ थी । उसके सिद्ध भव्य मुख पर सुन्दर दाढ़ी सोमिष्ठ हो रही थी और दो धारों की रेखाएँ इस भव्यता को अनुपम छोभा प्रदान कर रही थी । उसकी कमकती हुई आँखों में निश्चय किन्तु अस्वामाधिक तेजस्विता दिखाई पड़ रही थी । आज भी उसका हास्य पहले जसा ही मोहक था ।

'काक आ गया तू । खँगार ने भाव भरे स्वर में कहा ।

महाराज ! काक ने विरोध मान से कहा— भला आप बुलावें और मैं न आऊँ ?

धीरे । खँगार ने कहा हाँ मैंने ही बुलाया था ।

'परन्तु मुझे तो देवी का संदेशा मिला था ।

नहीं, मैंने भेजा था ।

किन्तु मणिमद तो कहता था कि वह देवी से मिला था ।

'वह तनिक पागल है । मैंने दूसरी रानी के द्वारा कहलवाया था ।

किन्तु वह मगड़ी भ्रम में यह समझ बैठा कि वह राणक से मिला था ।

ऐसा क्यों किया काक ने पूछा ।

'वरना तू आता जो नहीं ।

आपने कहनाया होता तो भी मैं आता और निश्चय हाँ आता ।

क्यों पाटण की चाकरी छोड़ दी ? तनिक तिरस्कार से खँगार ने पूछा ।

'नहीं । जब तक वो चाकर हैं । कल की बात भगवान सोमनाथ

जानें ।

‘क्यों ? फिर तेरे स्वामी क्रुद्ध हो गए हैं क्या ?’ रेवा ने हँसकर पूछा । उसकी हँसी से पहले जया ही विनोद क्षतकृता था ।

बापू ! अपनी पीड़ा में स्वयं सम्माल लूँगा । यह कहिए कि मुझे क्या बुलाया ?

खेंगार ने सावधानी से चारों ओर देखा और फिर धीमे से कहा—
मुझे तेरी सहायता की आवश्यकता है बाक ।

मैं प्रस्तुत हूँ ।

मुझे पाटण क साथ सचि करनी है ।

स चि । बाक आश्चर्य चकित हो गया ।

धीरे बोल । कोई सुन लेगा । बाक आश्चर्य की इसमें गई बात क्या है भाई ? शांत और विनोद भरे स्वर में खेंगार ने कहा ‘खेंगार ने जयसिंह देव को पन्द्रह वर्ष तक छकाया और अब भी जनागढ़ के कंगूरे अच्छे हैं । फिर भी सोरठ का रा’ सचि की याचना क्यों करता है यही जानना चाहता है न ?

हाँ । बाक ने कहा ।

बाक ! कोई रा कभी नतमस्तक नहीं हुआ और जूनागढ़ ने कभी विजयता का स्वागत नहीं किया । इसलिए सचि की बात करत हुए मेरे प्राण काप रहे हैं । गत वष मुझे मुजाल ने सचि की सलाह भेजी थी तो मैंने सलाह माने जाने को गंधे पर बिठाकर धुमाया था ।

तो अब क्या हो गया ?

खेंगार ने एक गहरी साँस ली— भाई मुझे मालूम नहीं था कि जयदेव स्वयं भी रण में भाग लेंगे ।

बाक आँखें फाड़ कर रा की भार देखने लगा । खेंगार जैसे अद्विग^{२४} वीर के हृदय में कायरता ?

तो उससे क्या ?

‘उससे क्या ? बाक ! मैं वीर राजपूत हूँ, और वीर राजपूत का

सामना करने से मैं कमी बच नहीं। किन्तु तुम्हारा जयदेव न टेक का ही दुष्ट है और न राजपूत ही। खेंगार ने कटुता पूरक कहा।

‘बापू ! मैं नहीं समझ पाया।

‘नाक’ जयदेव मुझ के लिए अवश्य निकता है किन्तु जूनागढ़ सेने नहीं। कटान मरे स्वर में खेंगार न बहा।

‘तो ?

वह पुनः रोगक का संना चाहता है।

काक पीछे हटा ‘क्या पागल हुए हो ?

नहीं उसकी दृष्टि तो बहा है। उसे राजपूत की टेक की क्या चिन्ता ? वह कोई मनुष्य है ? राखस और पिशाच के बल पर जो राजपूत लबठा है वह कोई आदमी है ?

बाबरामृत की बात कर रहे हो ?

‘तुम्हारे महाराज की प्रत्यक्ष विशेषता निराली है। बाबरामृत उनका सबक है सो तो ठीक। किन्तु जब स वह बंयली घाया है तब न स्वयं बाबरामृत हो गया है। गाँवों में प्राग सया दी जाती है चारों ओर लोग नाहि नाहि कर रहे हैं। बाप-दादा यवनों की कथा बहा करते थे। वही ही दया हो रही है। मुख्य अरनी भयहाय प्रजा की विपत्ति नहीं देखी जाती। इस से तो सन्धि करके नाक कटाना अधिक अच्छा है।

‘महाराज ! प्राप सम्पूर्ण कुन क कसंर बन कर रहे जायेंगे।

हाँ। किन्तु अपनी निःसहाय प्रजा और अपनी राणक की रक्षा ता कर लूँगा।

महाराज ! सँधे सन्धि करना मुझे तो अच्छा लगता है। ताट का विग्रह भी मने एस हो समाप्त किया था। किन्तु प्रश्न तो यह है कि जयदेव महाराज मार्गसे भी या नहीं। काक ने कहा।

‘उससे भी बड़ी कटिनाई एक धोर है।

कौन सी ?

‘राणक की।

राणक देवी की ? काक ने पूछा ।
'हाँ, काक ! मुझे बुलाने का मुख्य हेतु इसी बात को समझने का है भाई ! राणक स्त्री नहीं जगदम्बा का भवतार है । लोग मुझे षण् देते हैं किन्तु जूनागढ़ यदि अब तक टिका रह सका है तो उसी के यत्नाप से । उसी के उत्साह से हम जीवित हैं । उससे सचि की बात कौन कर सकता है ?'

'आपने उनसे बात नहीं की ?
नहीं, साहस जो होता । काक ! यह न होती तो मैं युद्ध में कभी का हार जाता—घौर जूनागढ़ भी अब तक भूमिसात् हो गया होता । किन्तु मेरी राणक दे—'खेंगार ने स्नेह भोनी वाली में कहा के साहस ने हमें जवा रहने दिया । अब उसके दृढ़ संकल्प के विरुद्ध कौन जाय ? सम्भव है तू उसे समझा सके ।

'किन्तु मेरी बात मानेंगी ?

'सम्भव है मान ले । वह तेरा अत्यन्त मान करती है और मुझे तुझ में बहुत विश्वास है ।

काक मुस्कराया जो सती आपकी नहीं मानती वह मेरी बात कैसे मानेगी ?

'काक ! प्रयत्न करके तो देल । मुझे मृत्यु का डर नहीं—घौर न राणक ही को है । किन्तु मैं खेन रहूँ और वह महाराज के हाथों में पड़े—'खेंगार के शरीर में कंकणी छूटी यह काक ने स्पष्ट देखा ।

'बापू ! आप मुझे बहुत कठिन काम सौंप रहे हैं ।
क्यों ?

'राणक देवी से कुछ का नाम दबाने के लिए कहना और जयदेव महाराज के त्रौष को रोचना यह दो काम त्रिपुरारी से भी नहीं हो सकते तो मुझसे कैसे होंगे ?
मुझे विश्वास है कि बनेगा तो तुम ही से बनेगा ।
किन्तु महाराज ! देवी को यहाँ आने का कारण क्या बताऊंगा ?'

‘बहु देना कि मेने मग्यना करने बुसाया है ।

मच्छा ! किधर है ?

‘अभी घाती है । तू स्नान करके भोजन कर । बस ही अपने मुख पर बस्त्र बांध से ।

‘जो घाज़ा’ कह कर काब बस्त्र बांध कर रा के पीछे हो जिया ।

३३

काक के भोजन कर चुकने पर रा सेंगार उसे स्वयं रनिवास में ले गया । कमरा छोटा और भँवर था । एक बड़े दीपक का प्रकाश फला हुआ था । वहाँ पाँच-सात स्त्रियाँ बठकर हँसियार साफ कर रही थीं । एक सामने की टाक में भवानी की प्रतिमा के सम्मुख पी का गिया बस रहा था । सभी स्त्रियाँ कासे बस्त्र पहने हुए थीं । एक छोटी स्त्री दीपक के पास बड़ी-बड़ी एक ढाल पर से रक्त के घबूँ साफ कर रही थी । वह धीमे-धीमे कृष्ण गा रही थी और दोस स्त्रियाँ धीरे धीरे उसे दोहरा रही थीं । पीछे भी असाभाय था । गाने वाली यमराज से कह रही थी कि ‘कत माना क्योंकि मान तो उनका पति शत्रु का हनन करने पया हुआ है ।’

ऐसा लग रहा था मानो जोगमाया खप्पर निकलने से पहले तँगाटी में लगी हों । कमरे में अशान्ति गांभीन छाया हुआ था । रा’ और काक धीमे-धीमे भाए । काक के घन्तर में अशान्ति ही पूरा जावना उदित हो रही थी । उसे लगा कि एक प्रकार का दैवी और सुप्र वातावरण चारों ओर फला हुआ है ।

दे ! सेंगार ने धीमे धीरे सम्मान से कहा ।

रा’ का स्वर मुनकर पास-पास बैठी स्त्रियाँ जमकी और रा’ को

चानकर शीघ्रता से घु घट निकालती हुई वहाँ से चली गई। दीपक सामने पड़ी हुई छोटी स्त्री ने हाथ राककर ऊपर देखा। दीपक के शीण प्रकाश में उस मुख को देखकर ही काक को विश्वास हो गया कि उस स्त्री को डिगाना असम्भव है।

काली घोड़नी की किनारी में अद्भुत रीति से मड़ा हुआ मुख छोटा घोर लीण था—कभी मुन्दर रहा होगा! उसके घबरो में निश्चलता थी उसकी आँखों में तेजस्विता। किंतु यह सब होने पर भी उस मुख पर एक ऐसी गहनता थी जो न समझी जा सकती थी घोर न सहन ही की जा सकती थी।

उसके चारों घोर पीसा तेज दुसह था। ऐसा लग रहा था मानो यमराज को हराने वाली सावित्री या वेणीसंहार करने के लिए इच्छुक द्रौपदी के मुख का तेज सब के लिए इस मुख पर आकर बस गया हो। जिस प्रकार उस कमरे का आतावरण अपायिव था वसा ही वह तेज न रख सका। उसने इस स्त्री को साष्टांग प्रणाम किया।

राजकदेवी ने काक को नहीं पहचाना, किंतु रा को देखकर वा उठी उसका छोटा एव लीण शरीर घनुष के दण्ड के समान झुका उसके मुख पर अवगनीय भक्ति की मुस्कराहट छाई हुई थी।

‘प्यारिये महाराज!’ उसने आदर से कहा। उसकी वाणी में दबाई हुई भावना का कपन था। लँगार भक्ति से बैठ गया।

यह कौन है?

देवी! आपने मुझे नहीं पहचाना? कहकर काक ने वस्त्र हटा दिया।

कौन आई काक? आँखें फाड़कर राणक बोली।

हाँ।

राजकदेवी की गहन आँखों की गहराई से भी किरणें फूट पड़ीं।

‘तुम यही?’ उसके स्वर में कुछ-कुछ शक था।

‘देवी !’ काक ने कहा, ‘मे जयदेव महाराज का मेरा नहीं भाया है । मुझे तो बापू ने बुलवाया था ।’

‘क्यों ?’ उसने अपने पति की ओर घूमकर प्रश्न किया ।

‘मुझे इससे सनाह सेनी थी ।’

‘किस विषय में ?’ उसने पूछा ।

बापू को मेने सनाह दी है कि पाटण के साथ संधि कर डालो नहीं तो जनागढ़ मल्लिभामेट हो जायगा । काक ने राणकदेवी की ओर देखकर कहा ।

राणक के मुख पर विचित्र परिवर्तन हुए । उसका फीका चेहरे मुख लाल हो गया मानो किसी ने झरमान किया हो तमाषा मारा हो और उसके मुख पर भ्रम गोरव की भाषा स्पष्ट हो गई । खेन स वह कुछ पीछे हटी और फिर रा’ के सामने देखन लगी—फिर धीमी और कपटी हुई बाणी में प्रश्न किया मेरा रा जयदेव से संधि किसलिए करे ? सपनीली भाँसों से उसने काक की धार देखा ।

उसकी बाणी में तिरस्कार न था डाँट न थी फिर भी काक को तिरस्कार और डाँट दोनों मिले । एक बाण्य ही में इस अपाधिव स्त्री की अतुल मुद्रा उसकी पतिमक्ति और उसके भरने पति के चारों ओर रच हुए स्वप्न दृष्टिगोचर हो गए । इस स्त्री के लिए खेंगार मनुष्य नहीं दुजय देवता था । इस देवता की वह पूजा करती थी । खेंगार और काक दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखा । उस दृष्टि में काक ने भरने प्रयत्न की निष्कतना स्वीकार की । फिर भी काक ने एक बार फिर प्रयत्न करने का निश्चय किया ।

‘देवी !’ प्रका भीषण कष्ट में है और सम्पूर्ण सोरठ उज्राड होता जा रहा है । किसी प्रकार तो जूनागढ़ की रक्षा हो ।

काक, ! एक गहरी साँस भरकर देवकी वाली मेरा रा’ है तो पीठित प्रजा कम फिर सुखी होगी और उज्राड सोरठ में रास रंग होंगे ।

किन्तु, न करे नारायण कही जूनागढ़ पराजित हो जाय तो ’

‘अच्छा । मजरी भी तो हमारे जूनागढ़ की ही कहाती है ।

‘ऐसा तो है ही । देवी, भव आप बठीए । महाराज, भव आप मुझे आज्ञा दें तो धाऊँ ।

‘रात यही रहकर जाना । तू पक गया है । प्रातःकाल जूनागढ़ देखकर जाना ।

बापू मुझे रात रातों बचसी जाना है और जूनागढ़ मुझे देखना नहीं । यह भी हो सकता है कि जूनागढ़ पर चढ़ाई करने का काम मुझे सौंप दिया जाए ?

काक तेरे जसा और नहीं दत्ता । खेंगार ने कहा तूने क्यों पहले मेरा मानी होती और जूनागढ़ आकर बस गया होता तो हम दोनों क्या कर बालते ?’

महाराज ! आपका शीय आपकी टेक देखकर मुझे भी ऐसा ही लगता था । किन्तु जसी सोरठ की टेक आपको प्यारी है वसी लाट की मुझे । अच्छा देवी आज्ञा ?

भाई ! भरे आशीर्वाद । राणक देवी ने कहा ।

जाते-जाते काली ओढ़नी में मढ़े हुए उस अग्रतिम स्त्री के क्षीण मुख की ओर काक ने एक बार दखा और मन-ही-मन प्रणाम करके खेंगार के साथ बाहर निकल गया ।

बाहर निकलते समय उसने मुख पर वस्त्र बाँधते हुए उसने कहा महाराज ! बिम्बा न कीजिएगा जूनागढ़ का अभी तक ककड़ भी नहीं हिसा है और जयदेव महाराज मनस्वी पुरुष हैं भय कुछ होने का नहीं ।

तुम जूनागढ़ सेने को कहेंगे तो ? खेंगार ने छाँत और विनोद भरे स्वर में कहा ।

मुझ जनागढ़ सेने को कोई नहीं कहेगा, और आपके कपनानुसार कोई बहे तो भी मैं लूँगा नहीं ।

‘नहीं, सेना । तेरे हाथ मृत्यु पाकर ये निश्चिन्त हो जाऊँगा । सप

आन मृत्यु से मुझे सनिक भी भय नहीं है।

'तो बापू ! मरने के पश्चात् क्या होगा इसका भा सनिक डर न रहिए। मुझ एक डर है—कल मेरा क्या होगा यह समझ में नहीं आ रहा है।

'काक ! तेरा कोई कुछ करने का नहीं। मैं भी पाटन से कुछ-कुछ परिचित हूँ। तेरा बाल भी बाँधा करने का साहस किसी में नहीं है।

'देखा जायगा।

'ले मोतिया यह रहा। मोतिया इन्हें बपती के भाग पर छोड़ आ।

'बापू की आ आज्ञा। कहकर मोतिया काक को ले गया।

३४

जाने से पहले काक ने रा से बहुत बातें कीं और सब माँचे धन से मित्र से बिगा ली। राजकुंजी के व्यक्तित्व का काक पर बहुत प्रभाव पड़ा था। इस प्रतापी स्त्री के अपने बीर पति और सम्पूर्ण जूनागढ़ पर अपने स्वर्णों का ऐसा जादू कर दिया था कि उसे कोई भय नहीं कर सकता था। राजक और खेंवार के स्वर्ण और गौरव बने रहें और पाटन की विजय भी हो जाय—इन दो वस्तुओं पर यहरा विश्वास करता हुआ काक जूनागढ़ से बाहर आया।

मोतिया उसे एक समय पथ से गिरनार की दूसरी ओर ले गया जहाँ उसने उसकी आँखों की पट्टी खोल दी और इसके बाद दोनों बड़े वेग से बपती की ओर चले। मंदरका की ओर कई दिना से से रठी और पट्टी सनिकों में मद्ध हो रही थी। इसलिए उन्होंने उससे भलग दूसरा मार्ग पकड़ा। इस आर थोड़े-थोड़े अंतर पर जूनागढ़ की भीगी या घाना

मिलते, किन्तु मालूम होता है मोतिया सब चौकीदारों को पहचानता था क्योंकि उसे देखकर कोई भी काक के विषय में पूछ-ताछ नहीं करता था। यात्रा कुछ कठिन अवस्था थी। पथ ऊँचा-नीचा था खाइयाँ भी बीच में पड़ती थीं, इसलिए वह जल्दी-जल्दी नहीं चल सकते थे। मार्ग में पड़े हुए घरों को देखकर घोड़ियाँ धमक उठती थीं।

थोड़ी दूर में वे एक टेकरी पर पहुँच गए, जहाँ वह विश्राम करने के लिए ठहर गए। टेकरी के नीचे एक चौकी थी जहाँ कुछ सैनिक प्रत्याश के चारों ओर बठे हुए थे। एकाएक टेकरी के दूसरी ओर से मोढ़े की टाप सुनाई दी। अहीर और काक दोनों ने ध्यान से चारों ओर देखा। दूर एक काला घमा वेग से चौकी की ओर चला आ रहा था और दूसरा बयली की ओर वाले जंगल में घुसा जा रहा था। अहीर ने शक्ति होकर चारों ओर देखा और छिचारी कुत्ते के समान सूँघने लगा। काक वेग से भाते हुए भाववारोही की ओर एकाग्रता से देख रहा था।

‘मालूम होता है तुम्हारे चौकीदार डग से चौकीदारी नहीं करते।

बापू ! कोई परिचित व्यक्ति ही होगा नहीं वो जूनागढ़ की चौकियों से निजल प्रामा सुगम नहीं है।

‘चलो देखें।’ कहकर काक टेकरी से उतर कर चौकी की ओर गया। वह भाववारोही चौकी के निकट पहुँच चुका था और चौकीदार उठकर उसके निकट पहुँच गये थे। भाववारोही ने अपने मुँह पर बदन बाँध रखा था। मोतिया चतुर था। उसने सुरन्त भाववारोही को पहचान लिया और भाग बढ़कर प्रणाम किया देशसदेव बापू को धणीप्रमा।

चौकीदार और भाववारोही दोनों चौंक पड़े। इधर काक भी धमका। यहाँ पहले उसने देशसदेव को देखा था और उसने यह भी सुन रखा था कि इस समय देशस और उसका भाई विश्वास दोनों खेंगार के पक्ष में हैं। इसलिए इस समय उसका मिलना काक को मला नहीं लगा।

कोन मोतिया ! चकित होकर देशसदेव ने पूछा। देशसदेव और मोतिया को पहचान कर चौकीदार दूर लिसक गए। काक भी दूर

सहा रहा ।

हो बापू ! किन्तु इस समय आप यहाँ कैसे ?

‘ये चौकियाँ देखने ही निकला हूँ ।

‘ऐसा ?’ मोतिया ने नम्रता से कहा एक घादमी को अपनी चौकी के बाहर बेजता है ।

देवलदेव ने चाका से काक का और देखा, कौन है ?

बापू का घादमी है ।

किन्तु यह है कौन ? अपनी चौड़ी मोतिया की चौड़ी के निकट जाकर देवल ने धीमे-से पूछा ।

मुझे नहीं यादगुम ।

ऐसा क्यों है ? सकता है ? देवल ने हसकर पूछा ।

हो सकता है तभी तो । नहीं आपसे कहने में क्या बाधा ?

भ्रमछा ठहर पूछता है ।

नहीं बापू ! महाराज धर्म ही जोधित हो जायेंगे । मोतिया ने कहा ।

घरे ए ! इधर धा । देवल ने काक की निवट बुलाया । काक धीरी धीरी आगे से आया और खड़ा हो गया ।

तेरा क्या नाम है ?

काक ने मौन रहकर मोतिया की ओर सकेत किया ।

आप इससे कुछ न पूछिए । मोतिया ने धीरता से कहा हम आयेगे । हमें देर हो रही है ।

यह नहीं हो सकता ? मुझे जानना ही पड़ेगा ।’ देवल ने सनिक शोध में कहा नहीं तो अभी महाराज के पास ।

बापू ! मोतिया भ्रमीर पर भी विश्वास नहीं ?

‘भाजकल किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता ।

मोतिया का मुख शोध से समतमा उठा । काक ने देखा कि यदि बात बढ़ जायेगी तो गड़बड़ हुए बिना न रहेगी । उसने धीरी की एक माछी ओर आगे आया ।

‘महाराज !’ घनावटी स्वर में वाक बोला । देशल और महीर ने ऊपर देखा । काक अपनी घोड़ी देशल की घोड़ी के निकट ले गया और मोचे झुककर देशल के कान में कहा— बापू जिससे आपने अभी अभी मेट की है मैं उसी का आदमी हूँ ।

देशल धमका फीका पड़ गया और उसकी अस्वस्थता का अनुभव करके उसका घोड़ा भी उछल पड़ा ।

बल मोतिया ! काक ने कहा और उसने और महीर ने अपनी अपनी घोड़ियों को एड़ लगाई । देशल अपनी पगड़ी सम्मालता ही रह गया ।

बापू ! आपने तो चमत्कार की बात की । मोतिया ने कहा ।

मरे यह तो मेरा पुराना मित्र है काक ने कुछ दूर दौड़ने के बाद घोड़ी रोकते हुए कहा ।

मोतिया अब तू जा । बचती बह रही । मैं अपने आप ही चला आऊंगा ।

‘भटक जायेंगे तो ?’

किसी बात करता है ? हाँ देख महाराज से कहना कि कुछ संदेहा कहलवाना है इसलिए अगले बुधवार को तुम्हें यहाँ भेज दें । यदि कुछ कहना होगा तो मैं उस दिन मध्य रात्रि को इसी स्थान पर आऊँगा । बापू और देवी को मेरी अग्र सोचनाय कहना ।

‘ओ आज्ञा ।’ कह कर मोतिया ने अपनी घोड़ी घुमा दी । हो सके तो इस ‘बापुजी’ को वापिस भेज दीजिएगा । बड़ी सम्झनर घोड़ी है । बेटी माना । महीर ने घोड़ी से कहा ।

काक कुछ देर तक खड़ा रहा । बचनी जाने का माग सीधा जान पड़ता था । वह तुरन्त घोड़ी पर से उतरा और धरती पर कान लगाकर सेट गया । धीरे चलते हुए घोड़े की टाप-सी कुछ सुनाई दी । वह तुरन्त घोड़ी पर चढ़ बठा और घोड़ी को दौड़ा दिया ।

घोड़ी देर में आगे आते हुए किसी घोड़े की टाप स्पष्ट सुनाई देने

सगी । पाटण के मण्डसेश्वर का पुत्र और खेंगार का भाणेन विश्वासघाती देशस इस समय बंयली के किसी व्यक्ति के साथ गुप्त मन्त्रणा करे और यह कहते हो कि यह उस व्यक्ति का गण है देशसदेव का चेहरा फोका पड़ जाय—काक के लिए इतना बहुत था । वह बंयली जाने से पहले वहाँ की परिस्थिति का जानकारी प्राप्त करने के लिए ध्याकुल था । बंयली जाने वाला यह व्यक्ति कौन था, यह जान लेने की भी उसने अत्यन्त आवश्यकता समझी ।

जैसे-जैसे उसकी घोड़ी आगे बढ़ती गई, वैसे-वैसे आगे का घोडा और बग से भागने लगा । फिर एकाएक उसकी चाल धीमी हो गई । जब काक उस घोडे के पास पहुँचा तो घोडा झकेला चल रहा था । काक मन-ही-मन हँसा । घुड़सवार चतुर लगता था किन्तु काक की बराबरी कर सके ऐसा नहीं था । काक अपनी घोड़ी पर से उतर पड़ा और उस घोडे पर बैठकर आगे चल पड़ा ।

जब उसने देखा कि बंयली छनिक निकट आगई है तो वह भाग के निकट एक छेद में घोड़ी की लगाम हाथ में लेकर बैठ गया । घोड़ी ढेर में काक ने जो सोचा था वही हुआ । उसकी घोड़ी पर बैठकर एक व्यक्ति धाया और उस सोया हुआ समझकर घोड़ी रोककर देखने लगा । फिर कुछ देर विचार करके वह घुड़सवार बंयली की ओर चल दिया ।

तब काक ने विभ्राम करने के लिए भाँखें भाँच लीं ।

३५

घोड़े की हिनहिनाहट सुनकर काक उठ बैठा । चारों ओर ऊँचा का प्रकाश फैला हुआ था, फिर भी काक को ऐसा लगा मानो उसने कोई भयानक स्वप्न देखा हो । दो बलिष्ठ कासी मूजामा ने उसे धरती पर दबा रखा था और उसे एक भयानक मुस दिलाई पड़ रहा था ।

भीत्कार की। उसे सुनकर चौकीदार काँप उठे और खिर के बल गिर पड़े। काक ने चौकी पर की।

‘तुम्हें जाना हो तो जा। किन्तु तू कहीं मिलेगा?’

सध्या को शमशान में और दिन को राशमङ्ग के नीचे वाले चौक में। आप कौन हैं?

मैं? तू क्यों जानना चाहता है? किन्तु मुन तुम्हें एक बात बताता हूँ।

‘कौन सी?’

मन्त्री का दुर्गपाल काक प्रभास से इस घोर घा रहा है। सम्भव है दिन निकले घा भी पहुँचे। उसे पकड़कर महाराज के निश्ट ले जायगा तो महाराज बहुत प्रसन्न होंग।

बाबरा बोला वा—क? और हसकर गदन हिलाने लगा।

तू उसे पहचानता है या? काक ने तनिक सावधान होकर पूछा।

नहीं। महाराज ने उसे पकड़ने की आज्ञा दी है।

उसे कौन लेने गया है।

बाहड़।

उदा का पुत्र?

‘हाँ।

‘अच्छा? काक ने कहा तो जा आनन्द कर। कहकर काक ने थोड़ा बढ़ा दिया। बाबरा दूसरे मार्ग से चला गया।

बाबरा के भद्गुट होते ही काक का ध्यान अपने घोड़े और उसके स्वामी की ओर गया। यह पुरुष कौन था इसका निश्चय करने के लिए उसने घोड़े की लगाम छोड़ दी ताकि अपना स्थान स्वयं दूढ़ने के लिए वह स्वतंत्र हो जाय। काक अपने पारों ओर ध्यान से देखने लगा। जूनागढ़ राखक के प्रताप से भ्रमिग था, जयसिंहदेव राखक को हथियाने का निश्चय कर चुका था इस जोड़े का स्वामी और देशतदेव कुछ सम्मिलित पश्यन्त्र कर रहे हैं और जेवार की चले तो वह सधि

कर ले ! किन्तु इन सब में मुजास महेता नहीं है ? क्या वह बढ़ हो गया ? क्या जयदेव ने गुरु को भी मात दे दी ? क्या मीनलदेवी भी पुत्र की राजनीति के आधार पर चलने लगी हैं ? और यदि ऐसा होता तो मुजास महेता यहाँ किस लिए आए हैं ? और उदा महेता क्या कर रहा है ? यह ग्रन्थ किसी प्रकार भी नहीं खुल पा रही थी ।

ऐसा विचार करते-करते उसकी आँखा के सामने फिर हथियार छाक करती हुई और यम का आह्वाहन करती हुई देवकी आई । काक ने मन-ही-मन संकल्प किया कि जयदेव का रा का या जूनागढ़ का जो हो सो हो किन्तु देवकी का गौरव अखंड रखने के लिए यदि प्राण भी देने पड़ें तो मुह नहीं मोड़ूंगा ।

फिर वह अपने विषय में सोचने लगा । जयदेव महाराज उसे पकड़ मगवाने के लिए आतुर थे उदा महेता की भी यही इच्छा थी परन्तु सीतादेवी उसकी सहायता की प्रतीक्षा कर रही थी । यह सभी एक साथ उसके लिए एकाएक कैसे सागल हो उठे हैं ? इन सभी को क्या विभिन्न प्रेरणायें हुईं ? या किसी एक ही स्वार्थ से, या एक ही के कहने से सबको प्रेरणा हुई ? ऐसी प्रेरणा कौन दे सकता है ?

जयदेव महाराज का प्रताप वह स्पष्ट देख पा रहा था । उसे लगा कि अब मुजाल का सूर्य अस्त हो रहा है । महाराज उदा का उपयोग कर रहे थे । मृत समझ जाने वाला बाबरा उसके प्रताप को अस्वाभाविक और दुसह बना रहा था और जयदेव परमार जैसे विदेशी मोटा को गुजर बीरों पर अपना क्रोध निवासने का अवसर मिल रहा था । काक मन-ही-मन विस्मित हो गया । निःसंख किन्तु महत्वाकांक्षी दिखाई पड़ने वाले लड़के का कसा असीम विकास हुआ है ?

चलता चलता थोड़ा रुक गया । प्रकाश फल गया था । राजगढ़ के अस्तबल के सामने थोड़ा खड़ा हुआ । निकट ही एक बड़ी हवेली थी । बपली की सुरक्षित स्थिति देखकर पटटणी दण्डनायक परशुराम के प्रति उसे भान हुआ । एक योजना की दूरी पर ही मुद चल रहा था किन्तु

हिलाने लगा, तू—

‘काक ! अभी यह नहीं गया तो जयदेव महाराज मेरे प्राण ले लेंगे ।

अयसि—

हां ! काम से मुझे रात बाहर चला जाना पड़ा । सौटने में देर हो गई । काका ! तुम अपने लिए दूसरा पान ले आओ । कहकर काक ने पूजा-पात्र पकड़ लिया । वह बूढ़ ब्राह्मण घबरा गया ।

‘भरे छू दिया मुझे स्नान करना पड़ेगा ।

‘आओ आकर स्नान कर आओ और यह लो पसे ।

किन्तु यह तो बलात्कार ब्राह्मण अनिष्ट जोर से बोला ।

काक ने उसकी ओर झींझें सरेर थीं ।

‘महाराज आवश्यक समझते तो मेरी ओर से यह स्वर्ण-खड्ग दान कर देना । किन्तु बिना गड़बड़ किए चले जाओ । नहीं तो— कहकर काक ने अपनी सक्की सभाली । बूढ़ ब्राह्मण के होठ आते रहे । परन्तु उसकी झींझें हथेली पड़े हुए स्वर्ण-खड्ग पर धाज-म सूम की-सी साससा से टिकी हुई थी । थोड़ी देर में काक ने पूजा-पात्र के पानी से मुह धोया वस्त्र और शस्त्र उतारे और बदल-पात्र से त्रिपुण्ड धारण किया ।

‘महाराज ! आपका नाम ?

‘दयानाथ चतुर्वेदी ।

भव आओ । काक बोला ।

बढ़ भयभीत-सा चला गया और काक पूजा-पात्र लेकर राबगढ़ के एक छोटे द्वार के सामने गया । प्रहरी ऊथ रहा था किन्तु उसे हो काक द्वार में घुसकर वेग से सीढ़ियाँ चढ़ने लगा वैसे ही उसकी भींद उड़ गई ।

‘ए महाराज ! कीम हो ?’

मैं दयानाथ चतुर्वेदी का मतीजा हूँ। और भाँखें टेढ़ी करके वह सनिक की शक्ति का अनुमान लगाने लगा।

‘बुद्ध को क्या हो गया?’

‘गाय ने भार लिया है। कहकर काक जल्दी-जल्दी चढ़ने लगा।

घरे सड़ा सा रह। दया काका के नए मोजों का मुख तो देखू। कहकर सनिक उसके पीछे दौड़कर पकड़ने भागा। उसके निकट जाने के पहले काक ने पूजा-पात्र ऊपर की सीढ़ी पर रख लिए और जैसे ही सनिक एक सीढ़ी बढ़ा जैसे ही वह एक सीढ़ी उतर गया। सनिक चिल्लाया ‘बाहूँ!’ या लेकिन उसके एक घण्टी भी होतने से पहले काक ने उसका गला पकड़ लिया। उसके शब्द धनबोले ही रह गए।

काक ने एक हाथ से कमर पटका उतारा और सनिक के मुँह में ठूस दिया। निश्चेत-च हो गए सनिक की उठाकर वह ऊपर चढ़ गया और बाड़ी दूर पर उसे एक खुली कोठरी में डालकर द्वार बन्द कर दिया। दूसरे ही क्षण पूजा-पात्र हाथ में लेकर छत्रवेणी पुजारी ने महल में प्रवेष्ट किया।

काक ने चारों ओर देखा किन्तु कोई दिखाई नहीं पड़ा। कुछ दूर पर कोई स्त्री प्रभाती या रही थी। वह उस ओर गया। एक दासी बरकौ का ‘गाता’ साफ कर रही थी।

‘बहन!’ काक ने सम्बोधित किया।

— ‘कीन?’

मुझे छोटी देवी के पास से चलती। देवी का पूजा का समय हो गया है और मुझे भाग नहीं मालूम।

‘पागल! इस समय कहीं छोटी देवी पूजा करती है?’

‘भाज उनका घर है। उठ। मैं उनके गाँव का ब्राह्मण हूँ। तुम्हें सबर नहीं। मुझे विरोध रूप से बुझाया है।’

‘अच्छा। परन्तु मैं उधर कैसे जा सकती हूँ। मैं ठहरी दासी।

‘तू मुझे माग तो दिखा । देस, तू वहाँ जे जायेगी सो देवी तेरा उपकार माने बिना नहीं रहेगी ।

स्त्री को कुछ रहस्य-सा विश्वास दिया । उसे लगा कि इस भेद के भय से संकट दूर हो सकते हैं । उसने सुरन्ध्र उठकर हाथ साफ कर लिए ।

‘मुख्य मार्ग से स जाऊँ या पोर मार्ग से ?

‘पोर मार्ग से सुभीता रहेगा ।

वह रनिवास को पिछली सीढ़ियाँ चढ़कर ऊपर घाए । एक दासी खड़ी-खड़ी दातुन कर रही थी । वह नौकरानी उसके निकट गई ।

‘देवी जाग गई ?

‘नहीं क्यों ?

‘देवी के बुलाए हुए पण्डित जी आ गए हैं ।

पागल हुई है ? इस समय देवी को पण्डित की क्या आवश्यकता पड़ी ? कहकर दासी तिरस्कार से कहने लगी ।

‘मगी । काक ने धीरे-से कहा ।

दासी भुगुक्छ की और रानी की विश्वासपात्र थी । उसने काक की ओर दबा और उसे पुजारी के बेप में देखकर स्तब्ध हो गई ।

‘का ?’

धुप रह । देवी को उठा । मुझे भेंट करनी है । सुन इस नौकरानी को पहचान ले । इसे देवी से पुरस्कार मिला देना ।

‘तेरा नाम क्या है ?’

‘देवी ? वह अपने पथीता के बारहूठ जी हैं न मैं उनको नहीं दासी हूँ । नौकरानी ने अपना सविस्तार परिचय दिया ।

ठीक है दोपहर को आना । महाराज ! आप दायर प्रतीक्षा कीजिए, देवी को उठाती हूँ ।

काक तनिक सिसककर द्वार के पीछे खड़ा हो गया मगी दोघ्र ही दोड़ती हुई आई— पधारिए, देवी बुलाती हैं । काक ने मुख पर विभिन्न मुस्कराहट दोड़ गई वह भुगुक्छ की जिस कुबरी को जयसिंह्य से ब्याहा था उसके पास गया ।

एक स्वर्णजडित पलंग पर जयसिंहदेव महाराज की पटरानी सीला देवी उनीची-सी बैठी थी।

अम्बुसर के घरे के समय जिस भूषण कृष्णरी से उसने भेंट की थी वह आज पहचानी भी नहीं जा सकती थी। तब की तुलना में आज उसका धरोर भरा हुआ था और उसके मुख का आकषण भी बढ़ गया था। सोने और हीरों के आभूषणों में उसका अंग-अंग चमक रहा था। चारों ओर पाटण की महारानी के अनुकूल बमब दिखाई दे रहा था। उसके अंग के आभूषणों में अपना एक विनोद बमब दिखाई पड़ता था।

इस समय उसके बाल बिखरे हुए थे और बस्ती में थोड़ी गई थोड़ी उसने मांसल धरीर की सोमा को छिपाने का व्यर्थ प्रयत्न कर रही थी। भावस्मिकता से उसके होंठ खुले रह गए उसके पश्चिद्व दंतों का अपूर्व हार दिखाई पड़ रहा था। उसके मुख और शरीर पर भासत दिखाई दे रहा था मद का या नौद का यह कहना कठिन है कम के मार से घायी झुकी पसकें उसकी आँखों के तेज की छिपा रही थीं।

जैसे ही काक ने प्रवेश किया उसने आँखें तनिक खोलीं। काक ने एक दृष्टि डाली। सीला देवी की आँखों में पहले जसा ही स्थिरता और निश्चयात्मकता थी। काक सम्मान से द्वार के सामने खड़ा हो गया। उस देखकर रानी की स्थिर आँखों में क्षणिक अस्थिरता आई और चली गई। उपेक्षा से थोड़े गए वस्त्र के नीचे से दिखाई पड़ते पाँवों की उगलियों की ओर उसने देखा—काक ! तू आ गया ?

हाँ ? मुस्कराकर काक ने कहा जीवित आ गया। माग में कई बार मेरे प्राण लेने का प्रयत्न अवश्य हुआ किन्तु आप तो जानती हैं मैं मुक्त जैसे की यमराज तक नहीं से जाना चाहते। आज्ञा ? मुझे क्या बताया ?

मंगी ! बात धीरे स्थिर स्वर में सीसा देवी ने कहा 'तू बाहर जा, धीरे किसी को जाने मत देना ।

मगी क बाहर जाते ही रानी घूमकर काक की ओर देखने लगी ।

'इसी वेष में जाने के कारण ?'

'निश्चिन्त होकर बसा दूंगा । आपसे जेंट करने के लिए कई को बकसा दिया है । उसमें से एक भी यदि अपने स्वामी के पास पहुंच जायगा तो हमें बात करने का समय नहीं मिलने का । सम्भव है मेरा शिरच्छद कर दिया जाय ।

तेरा शिरच्छद ? रानी ने भीड़ों को तनिक टैदी करके कहा ।

हां । मुझे पर महाराज और महाराज के मंत्री कुपित हैं ।

यह होते हुए भी तू उनकी सेवा करता है ? तिरस्कार से रानी ने कहा । उसकी आंखों में अधिक स्थिरता आ गई ।

'हां । काक ने दृष्टि हटाकर नीचे देखा ।

क्यों ?

मुझे अपने ही ढंग से काम करना खस्ता है । अब आपकी क्या आज्ञा है ?

आज्ञा ! सीसा देवी तिरस्कार में बोली तू मेरी आज्ञा मानता कब है ? अब तेरी क्या आज्ञा है यही पूछने के लिए मैंने तुझे बुलाया है । तिरस्कार भरी वाणी में रानी बोली ।

मेरी आज्ञा ? धीरे से काक ने कहा । मंत्रावात के लक्षण स्पष्ट दिखाई पड़ने लगे ।

हां ! सीसा देवी ने इस प्रकार कहना आरम्भ किया मानो हिसाब लगा रही हो तूने साट खिनवाया और पाटण मेरे सिर पर पटक दिया ।

'फिर भी आप सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ सिंहासन पर विराजी हुई हैं । काक ने बात पूरी की ।

रानी ने काक की बात का कोई उत्तर नहीं दिया ।

मे लो थक गई हूँ ।

किससे ?

सबसे ? रानी पुन ऐसी शीति से बोली मानो हिसाब लगा रही हो, तूने कहा था मे महीं स्वामिनी बनूंगी किन्तु यहाँ ठा भगता है प्रत्येक व्यक्ति स्वामी है ।

काक को लगा कि रानी वास्तविक ध्यया प्रकट नहीं कर रही है जब उसने उसे जानने का निश्चय किया पृथ्वी के स्वामी जयदेव महाराज आपके चरणों में हैं ।

बुन रह रानी ने ऐसी निश्चयात्मक वाणी में कहा मानो तलवार से प्रहार कर रही हो, तेरा पृथ्वी का स्वामी मनुष्य नहीं है ।

‘तो ?

रानी ने उगनी के पोर गिनने प्रारम्भ किए, बि देवता हूँ—मनुष्य है—झोर पगु है । उन्हें मैं कैसे बघ में कर सकती हूँ ?

काक ने ध्यया समझी । दिवी ! यह बनावटी नम्रता से बोला—‘इतनी क्यों निराश हो रही हो ? भाव क्या नहीं कर सकती ?

‘मेने सब कुछ किया । एक भी कत्ता नहा छोड़ी । किन्तु अब वे बघ के बाहर होते जा रहे हैं । रानी फिर भी स्थिर चित्र की महत्वा कांक्षी सुगन्दी ने अपनी ध्यया का वणन किया ।

भापको लो कहना हो साध कहिए क्योंकि समय निकल जा रहा है । झमीर होकर काक बाता ।

‘तुम्हे उन्हें बघ में करना होगा । रानी ने कहा ।

‘किन्तु वह कैसे झमीर क्यों बघ में नहीं है यह लो कुछ बताइए ।

‘वह रापक दबी के पीछ पागल हो गए हैं ।

झमीर इस पागलपन में इनकी रसा करनी है ।

हां ।

किस प्रकार ? काक ने पूछा ।

बाहे जुनागड़ जा बाहे देवदो लो बघ में कर बाहे महाराज को

सोचा कर । तुने मुझे यहाँ ब्याहा है । अब मुक्ति सोच निकालना भी तेरा ही काम है ।

रानी की मर्यकर और पनी दृष्टि देखकर काक को कंपकंपी भी छूट गई ।

‘देखता हूँ ।

देखता हूँ क्या ? मुझ पर कोई और पटरानी आई तो कुछ-न-कुछ होकर रहेगा । धड़िल कांति और निश्चय से लीलादवी ने कहा या तो तू नहीं रहेगा या मैं न रहूँगी या फिर पाटण नहीं रहेगा । उसने अपने हाथ अपने पाँव पर मारा मानो पाटण को साइ रही हो ।

दबो ! आपकी आज्ञा सिर-आँखा पर । जिस क्षण मेरे जीते-जी आपके सिर पर दूसरी पटरानी आएगी उसी क्षण प्राण दे दूँगा । और कुछ ?

‘कसे होगा यह सब ? रानी ने पूछा ।

इसकी चिन्ता आप न कीजिए, मैंने आपके सेंट-की है यह बात किसी से न कहिएगा । मेरे वस्त्र और हथियार राजगढ़ की पिछली झिड़की वाली गली में पड़े हैं उन्हें मगवा दीजिए ।

रानी ने मगी को बुलाकर आज्ञा दे दी कुछ क्षण दानों मौन रहे फिर ।

काक ! मंजरी कैसे है ? तनिक तिरस्कार से रानी ने पूछा । प्रसन्न है ।

और बच्चे ?

धान-द में है ।

‘साट के क्या हाल पान है ?

अभी यहाँ से एक मुख की दुर्गपाल नियुक्त करके भेजा है और रेवापाल को प्रतीक्षा कर ही रहा है ।

तब क्या होगा ?

‘असी सोमनाथ की इच्छा । किन्तु देवा, मुजाल महेता रपा कर रहे हैं ?

‘ठाबूल बजाते हैं ।

‘और उगा ?

महाराज के लिए राणक देवी साने के लिए व्यानुत है । वह तो तेरा शत्रु है न ?

‘काक मुस्कराया — मुझे उकसाने की आवश्यकता नहीं ।

रानी ने हँसकर काक की ओर अस्थिर दृष्टि से देखा ।

‘और यह जगदेव कौन है ?

नया परमार थोड़ा है । बहुत चतुर है । तुम सब पर धाक जमाने के लिए महाराज उसे लाए हैं ।’

भण्डा ! और बाबरा मृत—

रानी के मुख का रंग तनिक फीका पड़ गया । वह ।

‘क्यों ?

‘उसका नाम लेते ही तो मरे जग ठड़े पड़ जाते हैं । मंगी ! क्या है ! रानी ने घूमकर पूछा ।

महाराज की खोजते हुए परमार यहाँ आए हैं । मंगी ने कहा ।

‘कैसे जाना ?’

‘महाराज न जिस ग्रहरी का बन्द किया था उसी ने परमार को कहा लगता है ।

भण्डा शांति से रानी बोली, जाकर बाहर खड़ी रह । आए तो खड़ा रखता । मंगी गई और रानी काज की ओर घूमो ।

महाराज मत । तू उस कमरे में जाकर वस्त्र पहन ।

न म माप मेरी बिन्ता मत कीजिए । मुझ इस परमार से भी परिचय करना है ।

देवी ! मंगी ने द्वार खुला रखकर रानी से कहा जगदेव परमार मापसे भेंट करना चाहते हैं ।

ले दे । कहकर रानी ने हाथ के संकेत से वाक को घटकर मेघा
लग से उठर कर लहगा-कंधकी ठोक किए, ओढ़नी सिर पर
रखी और पुन गर्व से बैठ गई ।
वह पल्ला पर बठी हो थी कि जगदेव परमार घन्दर आया ।

३८

जगदेव घन्दर आया । सीतादेवी ने उस पर उपेक्षा भरी दृष्टि
सकल मुंह फेर लिया ।

जगदेव मूर्ति के समान था । उसका विशाल कद था छाती चौड़ी
थी उसके हाथ साधारण मनुष्य की जथा के समान थे उसका मुख
बड़ा और भरा हुआ था । उसे तेजस्वी नहीं—मुन्दर कहा जा सकता
था । काली सावधानी से सवारी हुई दाढ़ी की सोमा बढ़ा रही थी ।
उसकी कमर में लटक लटक रहा था पटके में दो कटारें सोमा दे
रही थीं ।

उसे देखकर जटिम शीप का स्मरण हो आता था किन्तु उसकी
भ्रांत में कुछ भ्रम्य-सा था—वह तेजस्वी न थी फिर भी सोम उनसे
घबरात थे । उनमें सज्जनता न थी । किन्तु हरामखोरी भी न थी ।
उनमें दुष्टता न होते हुए भी कोई उनको देखकर विश्वास नहीं करता
था । जयसिंहदेव महाराज के दरबार में उसे कोई सम्मन नहीं पाता
था । घबराते सभी थे । पट्टणी मोटा उससे सम्बन्ध रखना नहीं चाहते
थे । महाराज और उसकी शक्ति के मय से कोई उससे समुदा भी नहीं
करना चाहता था । जगदेव सम्मत्ता था कि पट्टणियों को दबा
रखने की शक्ति केवल उसी में है । गर्वति पट्टणी उसको तिरस्कार से
देखते थे और मात्र उतना ही मान देते जितने से महाराज को शोष न

हो। गर्विष्ठ सत्ताधारी एव विदेशी के बीच जितना माईभारा हो सकता है उससे अधिक पट्टणियों और जगदेव के बीच में नहीं था।

किन्तु महाराज के महामन्त्री और अत्यन्त निन्दक सन्धी तो अपना तिरस्कार छिपाने का प्रयत्न तक नहीं करते थे। जगदेव भी जहाँ तक बनता उनके ससंग में नहीं जाता था। उदा के साथ बहुत नम्रता से और परशुराम के साथ सम्मान से व्यवहार करता था। रानियों के साथ वह कोई सम्बन्ध नहीं रखता था और जहाँ तक बनता रानियों भी उससे कोई सम्बन्ध न रखती थीं। एक सीतादेवी अवश्य उससे घात किन्तु तिरस्कार से व्यवहार करती थी। जगदेव के मुख पर से इतना तो स्पष्ट हो रहा था कि इस समय यहाँ आना उसे अच्छा नहीं लग रहा था। उसके स्थूल मुख पर थोड़े बहुत शोभ के चिह्न थे और गले में से शब्द निकालने में भी उसे कष्ट हो रहा था। किन्तु यह दशा उसने दाढ़ी में हाथ फेरकर छिपा ली।

देवी ! सेवक का दण्डवत प्रणाम। विदेशी उच्चारण में जगदेव ने रोम रोम से नम्रता टपकाते हुए कहा।

रानी ने गर्वन हिसाई और घात निश्चित बाणी में पूछा—क्यों जगदेव ?

देवी ! महाराजाधिराज की आज्ञा है कि किसी अपरिचित व्यक्ति को महल के प्रान्त न घुसने दिया जाय। जगदेव ने खंखारकर कहा।

तो ? तिरस्कार से सीतादेवी ने कहा।

कोई एक व्यक्ति धुसकर आपने प्रकोष्ठ की ओर आया है ऐसी मुझे सूचना मिली है।

रानी ने अपना मुह जगदेव की ओर किया। उसकी आँखों में हृदय भेनी निर्दय पूर्ण तीक्ष्णता थी। पल भर तक वह देखती रही उसने मन ही मन में घबराते हुए भी बाहर से साहस बनाए रखने वाले योद्धा को अपने तिरस्कार का पूरा-पूरा अनुभव करवा दिया।

मुझसे क्या चाहते हो ?

‘यह कौन है और कैसे आया यह सब धानकारी मुझे महाराज को देनी होगी । दबो ! समा कीजियेगा मुझे महाराज की आज्ञा का पालन करना ही चाहिये । नहीं तो आप तो जानती हैं बेरी क्या गति होगी ।’

रानी ने तिरस्कार से मुँह फेर लिया ।

‘वह कौन है ? जगदब ने धीमे से किन्तु दृढ़ स्वर में पूछा ।

‘परमार !’ रानी ने बिना बोधित हुए ही कटाक्ष किया ‘तुम शायद महारानीयों की सलाखी सेने की ही भीकरी करते हो ? रानी ने प्रत्यक्ष प्रकार पूछा मानो यह नितान्त स्वामाधिक और सामान्य हो । किन्तु जगदेव को अपमान का गहरा घाव लगा । उसके होंठ कुछ काँटे, परन्तु तुरन्त उसने स्थिर होकर हाथ जोड़े ।

‘महारानी ! मैं तो आज्ञा पालन करने वाला दास हूँ ।

मैं जानती हूँ । कहकर सीतादेवी ने तिरस्कार से भौंझाई की ‘कसा आदमी या वह ? तिरस्कार से उसने पूछा ।

‘दबो ! ब्राह्मण के वेप में वह महम में घुसा था ।

हूँ—और किस वेप में बापस निकला ?

जगदब को लगा कि रानी उसकी हँसी उड़ा रही है ।

‘दबो ! अभी तो वह व्यक्ति मही है ।

‘क्या ? सीतादेवी ने चमककर पूछा । उसने जगदब की ओर दबा और उस योद्धा के मुख पर मुस्कराहट देखकर वह घबराई ।

‘अभी उसके पूजा-पान यहीं पड़े हैं । कहकर जगदब ने मुस्कराकर भूमि पर रखे हुए पानों की ओर संकेत किया ।

जगदेव ! शांति से सीतादेवी बोली । उसकी बाणी में भयंकर तिरस्कार था ‘पाटण की महारानी के साथ किस प्रकार के विवेक से काम लेना चाहिए यह तुम्हें नहीं मालूम यह सच है मुझ विवेक सिखाना पड़ेगा । जा ! बाहर जाकर मंगी को भेज । मुझे केश सवारने है ।

परन्तु देवी ।’

‘परमार ! जो मैंने कहा वह नहीं सुना ?’ रानी ने गप से पूछा ।

अगदेव को यह प्रश्न ठीकर के समान लगा ।

हाँ ।

रानी ने गदन हिमाकर उसे बाहर जाने की आज्ञा दी । अगदेव को घोर क्रोध भूझ ही नहीं । वह नमस्कार करके बाहर चला गया । उसके बाहर निकलते ही रानी के मुखपर क्रोध छा गया किन्तु मंगी को घाता हुआ देखकर उसका मुख जैसा था वसा ही शांत हो गया ।

‘मंगी ! इन पानों को छिपा दे ।

जसी दबो की इच्छा ।

रानी मंगी की ओर देखे बिना शीघ्रता से अन्दर गई और द्वार बन्द कर लिए । दूसरे ही क्षण उसकी चीन्कार मंगी को सुनाई पड़ी । मंगी के प्राण सूख गये । सीतादेवी जसी शांत और भावहीन स्त्री का इस प्रकार चीत्कार कर उठना इतना अस्वाभाविक था कि वह थबरा गई । वह झटपट खबर गई । रानी कुछ दक्षिण की ओर उसकी आँखों में थबराहुट थी । प्रकोपित निर्जन था ।

‘मटजी ?

कौन जाने वहाँ गया । रानी ने कहा ।

इस द्वार से तो बाहर नहीं गए ? कहकर मंगी एक दूसरे द्वार के सामने जाकर उसे ध्यान से देखने लगी । उसका ताला उस ओर था किन्तु द्वार बन्द दिखाई पड़ा ।

‘पागल ! यह द्वार तो कभी खुलता नहीं । इसको कुँजी ही क्यों है?’

तो फिर ?

‘देवी—देवी ! धो देवी ! मंगी चाहती ।

‘क्या है ? कठोर होकर सीतादेवी ने पूछा ।

अरे रे—मटजी—मगाना मगवाना मला करें । कहकर मंगी ने आँखों पर हाथ रख लिया ।

रानी नहीं समझी । उसने मंगी का कान पकड़कर सींचा— क्या है ?

‘देवी—यह तो—बाबरा है ।

पल भर रानी मौन रही। उस मगी की बात सच्ची लगी, उसके सुन्दर होठ फड़कते रहे उसकी आँखें स्थिर और गहन हो गईं, मोहक पीछापन उसके मुख पर छा गया। रानी के कुछ मोलने के पहले ही बाहर के प्रकोष्ठ में किसी के दौड़ने की आवाज आई। रानी द्वार की ओर मुड़ी।

द्वार खोलकर एक सालह-सत्रह वर्ष की कन्या ने नाचते-कूदते प्रवेश किया। उसकी थोड़नी अस्तु-व्यस्त उसके मुख पर हास्य उमड़ा पड़ता था। हास्य के कारण उसके मुख पर मोहक लालिमा छा रही थी। उसकी चंचल आँखों में अधिक हमने के कारण आँसू थे। उसके हास्य की प्रतिध्वनि सारे प्रकोष्ठ में हो रही थी। वह रानी की ओर आई और एक उँगली ऊँची करके कुछ कहा। उसके हँसने के कारण एक अक्षरभी समझ में भी नहीं आया।

‘समय ! रानी ने जठोरता से कहा।

‘माँ ! बड़ी कठिनाई से वह कन्या बोली परन्तु हँसी आ जाने पर वह पाव लम्बे कर, भूमि पर बैठ गई और एक हाथ भूमि पर रखकर दूसरे हाथ में पेट पकड़ लिया।

‘समय दबी ! क्या है ? मंगी ने पूछा।

उत्तर में समर्थ ने पुनः रानी की ओर संकेत किया किन्तु फिर हँसी आ जाने के कारण वह बोल न सकी।

समर्थ ! पागल हुई है ? सीतादेवी के प्राण धँधोर हो गए थे। उसने मगी की ओर देखा और कहा ‘मगी चल मुझे महेताजी से भेंट करने जाना है।’

सीतादेवी और मंगी वहाँ से चले गए। समर्थ अकेली हसती रही। थोड़ी देर में बड़ी कठिनाई से उसकी हँसी रुकी और वह खड़ी हो गई।

अहा कैसे पहरा गई ? माँ अब पकड़ में आई है। वह फिर हँसने और चारों ओर कूदने लगी—माँ खुश पकड़ी गई ? और अब महेता

माने वाले हैं ।'

समय ने हंसकर धरती पर पांव पटका फिर घोखी हसी और नीच झुककर तानी दे-देकर कुछ गाने सगी । वह घोड़ी-सी कूनी और कमर से कुजियों का गुच्छा निकाला ।

‘माँ समयमें उनका ब्राह्मण चुप्त हो गया है । फिर उसने ही-ही हंसकर यही ने जिसे न सुनने योग्य मान लिया था उस द्वार को पक्का देकर खोल दिया । उस घोर न साँकल चढ़ी हुई थी न ताया ही लगा हुआ था । समय उस घोर गई घोर साँकल चढ़ाकर द्वार पर ताला लगा दिया ।

३६

मन्दर जाकर काक अपनी भूल पर पश्चात्ताप करने लगा । सीला अपने पं से हटा दी जा सकती थी जयसिंहदेव उस पर कुपित थे, और उसके यहाँ किसी को भी माने की कड़ी मनाही थी । उस समय और इस प्रकार महल में घुसकर वह सीलानेवी से मिला इससे भवश्य उसे हानि पहुँचेगी—ऐसा उसे लगा । इस भूल को सुधारने का विचार करने वह उस कमरे से बाहर निकलने के लिए द्वार खोजने क हनु दूसरे द्वार की ओर गया । द्वार को पकलकर देखा तो खुचा लगा तब उसने उसे खोल दिया । अब वह एक मूनी कोठरी था । द्वार का ताला खोलकर किसी ने नहीं रख दिया था ।

काक ने सावधानी से द्वार बन्द किया एकाएक एक कन्या सामने जाकर खड़ी हो गई । वह सुन्दर और मटमल थी और उसे देखकर हँसने लगी ।

और पकड़ा गया । वह हँसने लगी ।

धीरे । काक ने नाक पर उ गली रखी ।

‘तू कौन है ?’ उसकी सड़की ने धाँसें नचाकर पूछा ।

भरे पर धीरे से बोल । रानी सुन लेगी ।

हा, हा हा ! क्या हसी, तू छिपकर भाग भागा । घब्र्रा हुआ कि मैंने द्वार खुला छोड़ दिया । मालूम है, इसकी कुजी केवल मेरे पास है ? तू कौन है ?

मैं साट का साक्षर हूँ, और देवी का आश्रित हूँ ।’

हा हा हा ! और छिपकर भागा जा रहा है ? कन्या हसी और फिर एकदम गम्भीर हो गई, तू साट का है ?

‘हाँ ।

काक भटराज को जानता है ?

मन्ती भाँति । क्यों ?

‘वह सोमनाथ पाटण भाया है ।

काक सावधान हो गया । ‘भाया होगा । तुम्हें क्या काम है ?’

वह पकड़ा गया कि नहीं कुछ मालूम है ?’ सड़की ने पूछा ।

जब बाहक महेता गए हैं तो बिना पकड़े कहीं रह सकते हैं ? काक ने कहा ।

क्या गद्गद् हो गई और उसके गाल सज्जा से लाल हो गए । मनजाने ही हर्ष से उसके दोनों हाथ मिल गए ।

तुम्हें विश्वास है ? सड़की ने पूछा ।

हाँ बहन । तेरी इच्छा सफल होगी । अब मुझे जाने दे । जयदेव महाराज कहाँ मिलेंगे ?

बाहर निकलकर दाएँ हाथ जाना वहाँ जयदेव परमार मिलेंगे । उनसे कहना वह मुझे से जायेंगे ।

‘बहन ! तू कौन है ?

मैं दहनायक परशुराम की पुत्री समर्थ हूँ ।

सज्जन महेता की पोत्री ।’

मगछा !

‘बानरे ! तू तो सभी से परिचित है ।

‘हाँ । कहकर जल्नी-जल्नी काक वहाँ से निकला । कन्या ने द्वार पर ताना लगाया और कुंजी कमर में छिपा ली । ठीक है अब देवी मुझे बिड़ापगी तो मैं भी उन्हें बिड़ा दूंगा ।’ यह कहता हुई उछली । कुछ देर के लिए वह विचार में पड़ी और फिर एक-एक हस-हसकर गाने लगी ।

काक उस कमरे से निकलकर एक कोठरी में भागा और वहाँ से जल्नी-जल्नी हाथ हाथ की और गया । दो कोठरियाँ पार करने के पश्चात् उसे दो सयस्त्र योद्धा लिखाई पड़े । वह उनके निकट गया ।

‘महाराज अन्दर है ?

दोनों योद्धा घुबराती प्रतीति नहीं होते थे । एक सामान्य ब्राह्मण को इस प्रकार आठ देख के तनिक क्रोधित हो गए ।

‘हाँ क्यों ?

‘कुछ नहीं मुझे भेंट करनी है । कहकर काक अन्दर आने लगा । उसकी घण्टा देखकर वे तनिक चकित हो गए और द्वार के सामने माल मड़ा लिए परमार को आनंद ।

काक को लगा कि अन्दर कोई बटा है अतः वह जोर से बोला—
‘मुझे क्यों रोकते हो ? काक की बापी में गब और सत्ता दोनों थे ।
‘मुझे साठ के दुगनाल भटराज काक को क्या समझते हो ? काक का नाम सुनकर वह तनिक तनिक दूर खिसक गए ।

‘अन्धशता ! यह तो मैं काक ! कहकर काक इस प्रकार अन्दर आया गया मानो महाराज ने उसे पुकारा हो और वह उसका उत्तर दे रहा हो । परन्तु अन्दर आता इतना सहज न था । एक दूसरे सयस्त्र पुरुष ने उसका हाथ पकड़ा और चरधराती बापी में पूछा ‘कौन है ? क्यों गड़बड़ करता है ?

काक ने ऊपर देखा । सामने खड़ा पुरुष घूस से समनय पा और

उसके एक हाथ पर पट्टी बधी हुई थी। उसकी धाँसे सास हो रही थी। काक ने वह छोटा किन्तु सशक्त धरीर, झुकी हुई किन्तु प्रतापी मासिका थीत किन्तु हठी मुख तुरन्त पहचान लिया।

दखनायक महाराज को घणोलम्भा। विनोद से काक ने कहा।
‘क्या सचमुच विजय की धुन में लोग पुराने मित्रों को भी भूल जाते हैं। खूब है यह संसार?’

कीन? तनिक चकित होकर सज्जन मंत्री के महारथी पुत्र परशुराम ने कहा।

‘काक।

भृगुकच्छ का दुग्धास? ओ हो हो! कैसे हो? बाहों में लपेट कर उसने काक से पूछा।

‘भच्छा हूँ। जीता जागता यहाँ तक आ ही गया हूँ। महाराज मिलेंगे।

तुम पर तनिक क्रोधित है।

‘उसकी चिन्ता नहीं। भन्दर है न?’

हाँ। अभी धर्मो मेरुटा के निकट सौराठियों को हमने पीछे धकेल दिया है। यही सूचना देने के लिए आया था।

‘परशुराम जी! आप न होते तो पाटण का जानें क्या होता?’

परशुराम हस दिया काक। ये दरबारी नहीं घत आपलूसी पचती नहीं। परन्तु तू न होता तो पाटण ने लाट बमी की लो दी होती।

धरे ही भूसा। मैं फिर मिलूँगा। मुझ आवश्यक काम है।

जा! विजय कर। इस समय महाराज का मन भी कुछ प्रसन्न है।

काक नमस्कार करके अदर गया। उसका पगरव सुनकर भन्दर के प्रकोष्ठ से एक सत्ता मरा स्वर सुनाई पड़ा कीन, अगदेव?

काक ने स्वर पहचान लिया और दौड़कर भन्दर गया ‘नहीं भन्त दाता! मैं हूँ काक।

गद्दी पर एक व्यक्ति भारमी में दसकर मुँहें सवारता हुआ बठा था। एक-दो गण कधी सेकर खड़े थे।

काक ने साष्टांग प्रणाम किया।

४०

साधारण-सा युवक गद्दी पर लटा हुआ था। उसका कं बड़ा घोर छटागर था। उसका शरीर भरा हुआ घोर सशक्त था उसके चौड़े कंधे और सुदृढ़ मुँहाए उसका शारीरिक बल की साखी दे रही थी।

उसने सफ़्त घोड़ी पहन रखी थी घोर कर्णों पर सुनहरी दुपट्टा बाँध रखा था। भीने दुपट्टे में स उसके गले में पड़े हुए आभूषण घोर हाथ क बाजूबन्ध चमक रहे थे उसका रंग गेहूँसा था। मात्र कलाई के भास-याम उसके हाथ तनिक साँवल थे। उसका मुख गोल और भरा हुआ था छोटी घोर सुन्दर दाढ़ी के मोहक केच सिर के लम्बे घोर धु पराले केर्णों में मिलकर उसके मुख की भव्य बना रहे थे। उसकी नासिका लम्बी घोर पनली थी। महत्वाकांक्षा प्रकट विलासी शक्ति के परिचायक हाठ सुपट्ट और पतले थे धलसामा दे रहे थे। शीर्षे विद्याल लम्बी घोर तेजस्वी थी उनस भावेन टपक रहा था। घोर उसके मुख पर सोए हुए सिंह के समान प्रताप सा पडा हुआ था—ऐसा कि उसकी स्थिरता ही सामने वाल की कपा देती थी।

जयसिंहदेव महाराज ने शीर्षे तनिक अधिक खोलकर देखा। इस प्रकार किमो का भाना उन्हें ग्रन्था नहीं लगता था ऐसा उनकी दृष्टि से स्पष्ट लग रहा था।

‘कोन ? कुछ कठोर हाँकर उसने पूछा।

देव ! आपने जिसे बुलाया था वही काक हूँ। काक उठा घुटने

के बस मुक्ता और हाथ जोड़कर बोला ।

काक ! तू ?

हो देव ! आपका आशा-पत्र मिलते ही तुरन्त जसा आया अन्न दाता प्रसन्न तो है ? काक ने पूछा ।

महाराज को यह मित्रता अच्छी नहीं लगी यह काक ने स्पष्ट देख लिया । परन्तु उसके चेहरे पर मुस्मान थी ।

‘तू सीधा जता आया ?’ आनन्दचरित जयदेव ने पूछा ।

आपकी आशा हो तो मत्ता रुका जा सकता है ?

तुम्हें कोई मिला ?

नहीं देव ! राजा का देव था मत मैं बहुत सावधान था । किन्तु कृपानाथ ! आप प्रसन्न तो हैं ? दण्डनायक ने मुझमें मंदरड़ा के विषय में अभी-अभी कहा था ।

हाँ यह अच्छा हुआ । जयदेव महाराज ने गव से कहा ।

‘सीलानेवी प्रसन्न हैं न ? और बड़ी देवी ? मुजाल महेता आदि तो आनन्द में ही होंगे ?’

जयदेव की आँखों में थोड़ी-सी चमक आई । उसे यह प्रश्नावली अच्छी नहीं लगी ।

काक सब प्रश्न है । साट की क्या दशा है ?

मैं आया तब तक तो साट खाल था । अब तो आनन्द महेता क्या कहते हैं उन्हीं पर निर्भर करता है ।

वर्धों ?

बहुत बुरा है । इस समय साट की धात रखना छोटे वर्धों का खस नहीं ।

‘हँ हँ !’ तिरस्कार से महाराज ने कहा किन्तु तू इस घेप में कैसे ?’

‘देव ! काक मुस्कराया, आपका आशा-पत्र मिला तो मुझे लगा कि आपको सशमन बेरी आवश्यकता है । आपके और भरे राजा कुछ बम

तो नहीं है ? अतः इस वेप के सिवा और कोई चारा नहीं था । मन्-
दाता ! सीतादेवी का विवाह कराने भाया था उसके पश्चात् आज
आपके दर्शन कर रहा हूँ । किन्तु महाराज आपकी कीर्ति और आपका
प्रताप देखकर तो मैं घग रह गया । पन्द्रह वष पूष भेने जो कहा था
वही हुआ न ?

आपका जन्म विजय राजा की कीर्ति को भी मग्द करने के लिए
हुमा है ।

जयदेव ने प्रसन्न होकर दाढ़ी पर हाथ फेरा । वह सकिए पर बैठ
गए और काक पर पहली घमत् भरी दृष्टि डाली ।

काक ! तू पाटण आकर क्यों नहीं रहता ?

देव ! आप क्या नहीं जानते ? आपके दरबारिया में खलबली
मच जायगी । स्मरण नहीं पन्द्रह वष पहले मक्क बला जाना पड़ा था ?

काक ! तुझसे मुझे काम है । जयदेव ने कहा ।

आपकी भासा हुई और मैं प्रस्तुत हो गया हूँ ।

‘मैं इन सबसे थक गया हूँ । सीधे होकर कुछ तिरस्कार से राजा
ने कहा, मुरार ! बाहर जा । कभी लेकर लड़े हुए व्यक्ति से जयदेव
ने कहा । मुरार बाहर चला गया । काक ! मैं इस जूनागढ़ के घेरे से
थक गया हूँ । राजा ने काक पर तीक्ष्ण दृष्टि टिकाकर कहा ।

भावहीन भुद्रा मैं काक ने कहा— देव ! तो दो भाग है ।

कौनसे ?

या तो जूनागढ़ पर विजय प्राप्त कीजिए या छोड़ दीजिए ।

‘मैं जयसिंहदेव जूनागढ़ का घेरा हटा लू ?

तो उस पर विजय प्राप्त करिए । काक ने धाँति से कहा ।

जयसिंहदेव ने धर्षीर होकर हाथ पटक करिस्तु वह जीता भी तो
नहीं जा रहा है और मेरी कीर्ति को बलक लग रहा है ।

आपकी भासा की देर है ।

‘क्या ? तनिक हृषित होकर जयदेव बोला ।

‘आपको कितने दिना में जूनागढ़ सेना है ?’

‘कितने में लिया जा सकेगा ?’

‘जितने में आप बर्हें ।’

‘और यदि नहीं लिया तो ?’

उसके पहने या तो जूनागढ़ नहीं या फिर काक नहीं ।

जयदेव महाराज प्रसन्न हो गए । काक दृष्टि नीचे किये यह परि

वर्तन देखता रहा ।

‘यम हो ! सच है तेरे समान एक भी नहीं है ।’

यह तो आप बहुत समय से जानते हैं ।

जयदेव का मन प्रसन्न था । वह हँसे । ‘काक ! तेरी बोली तो वसी की वसी ही है ।’

देव ! भुक्तों जब परिवर्तन नहीं हुआ तो मेरी बोली में कैसे हो सकता है ?

जयदेव हँसा । आदुकारिता से अरे दरबारी चातावरण में इस समय यह साहस उभ आनन्द समा । इतने में मुरार आया ।

भग्नता । बाहर परमाङ्ग और उदा महेता भाये हैं ।

राजा ने काक की ओर देखा । मुस्कराए तू काक को पहचानता है ?

वही आपका विदेशी दास ?

जयदेव हँसा — फिर तेरी जवान सीधी नहीं रहती ! यह तो मेरा विद्वान्दास है ।

उससे क्या वह सम्मानित हो जाता है ? देव ! आपको हँसी अच्छी लगती हो तो मुझे वस्त्र परिवर्तन कर सने दीजिये ।

हां ! यह ठीक है । मुगर जा इसे वस्त्र दे ।

‘ओ धाजा ।’

काक उठा और मुरार के साथ दूसरे दरवाने से बाहर चला गया ।

जयदेव मन-ही-मन हुंसे । बपों से परशुराम सोरठियों के गढ़ को घेरे हुए पड़ा था और सोरठ का अधिकांश भाग पाटन के आधीन था परन्तु जूनागढ़ के गढ़ को तोड़ना कोई खेल नहीं था । तीन बार जयसिंह देव महाराज ने स्वयं धावा बोला था, किन्तु वह जूनागढ़ का एक ककड़ भी नहीं हिला सके । इस समय परशुराम त्रिभुवनपाल सोलकी घोर मुरारपाल संकलेस्वर राज्य के इन भयगण्य महारणियों ने रा खेंगार को चारों ओर से घेरे रखा था फिर भी गिरनार का रा' अपनी स्वतन्त्रता का झंडा उठाये हुए उनका उपहास कर रहा था ।

अब जयसिंह के काय टूट गया था । समय ही न जाने कैसे देवकी के प्रति उनका प्रेम फिर जाग पड़ा था । बपों पहले खेंगार द्वारा किया हुआ अपमान उन्हें चुभ रहा था । और जब तक रा न झुकेगा तब तक उनकी कीर्ति में कालिमा बनी रहेगी यही विचार उन्हें रात दिन जताया करता था ।

युद्ध में जाकर पीछे हट जाय तो बड़ी कठिनाई से अजित की हुई कीर्ति और महता नष्ट हो जाते हैं—यह बात भी वह न भूल थे । वे बड़ी तयारी के साथ एक ऐसा भावा बोसना चाहते थे कि जूनागढ़ का एक पत्थर भी न बच सके । इसी के लिए खमात से सेना लेकर उठा महता को थोड़ी बहुत सेना लेकर मालवे से दादाक को और मृगुकच्छ से काक को बुलाया था । त्रिभुवनपाल परशुराम मुरारपाल उठा दादाक और काक इन छ' सहस्र युद्धा के प्रचण्व विलाडियों के नेतृत्व में धावा बोसने का उन्होंने निश्चय किया था । यम के सनिकों के समान यह दुजय योद्धा खेंगार तो क्या गिरनार को भी घूर कर सकते थे ऐसा उनका विचार था ।

दादाक अभी नहीं आया था । जयदेव की बलती तो काक को न भुलाता । दूर पड़ा हुआ काक इन योद्धाओं के साथ सोभा नहीं देता ऐसा कुछ विचार उनके मन में था । किन्तु त्रिभुवनपाल और मुरारपाल दोनों ने काक को बुला भेजने की बात कही थी । जब जयदेव ने मु जाल

महेता को भी शास्त्र से सज्जित होने के लिए कहा तो महाधामात्य हँस पड़े ।

‘जयदेव ! मैं आऊँगा किन्तु वह आपको शोभा नहीं देगा आपने बहुत कीर्ति अर्जित की है किन्तु इसके बिना और सब व्यर्थ है । भूस-राजदेव ने रा को भुकाया आपने लिए अभी यह करना दोष है । आवश्यकता होगी तो रण चढ़ूँगा । निर्दिष्ट रहियेगा । वृद्ध तो हो गया हूँ फिर भी अभी चलेगा । कहकर मंत्री ने अपने वज्र किन्तु सशक्त बाहुओं पर दृष्टि डाली ।

राजा बड़ा गर्विसा था किन्तु मुआल महेता के समुख वह बच्चा ही बना रहता था । राजा अपने को छोटा न समझ से इससे विचक्षण मंत्री सब और ध्यान रखते हुए भी एकांतवासी थे । जयदेव यह उदा-रता समझता था । उसने जाने की आज्ञा चाही ।

‘महाराज ! मंत्री ने निरपेक्ष भाव से कहा, एक काम करिएगा तो मेरी आवश्यकता नहीं पड़ेगी ।

क्या ?

भगुकच्छ के दुग्पाल को बुलाकर साथ ले लीजिएगा ।

किसे बाध को ?

हाँ ।

दूसरे ही दिन आभ्रमट आज्ञा-पत्र लेकर भगुकच्छ के लिए निकला ।

जयदेव दूर पड़े हुए बाध का अपने तज से बकाचीय कर देना चाहते थे अपने प्रताप से उसे डराए रखना चाहते थे । यह उद्देश्य पूरा नहीं हुआ यह राजा को अच्छा नहीं लगा । परन्तु बाध के साहस शीघ्र और चतुराई की उन्हें आवश्यकता थी और उनका सम्मान करने जितनी शक्ति भी उनमें थी ।

गवित्त अपेक्षा से जगदेव फिर गद्दी पर सेट गए । छिर के केशों को हाथ से सवारते हुए वह विचार करने लगे ।

विचार करते-करते क्यों पहले देखी कलाहा की देवकी का मुख याद आया । जगदेव के मुख पर से उग्राही जाती रही और उचकता छा गई । उनकी विद्याल साँखों में धातुरता दिखाई पड़ने लगी । काफ के साथ बातालाप से उठे किचारों ने दूसरी ही गिना पकड़ी । वह मन ही-मन बहबड़ाए ।

जुनागड़ लू, रा' को समाप्त करूँ यह सब तो ठीक है, किन्तु उग्रा ठीक कहता है—रा' क मरने पर वहीं देवकी मिल सकती है ? राज्य विहीन हुई देवकी मुझे शत्रु तो समझेगी ही किन्तु देवकी का प्राप्त करना ही होगा । जगदेव का भवें तन गई । उसकी साँखों में रोद प्रकट हुआ । क्यों नहीं प्राप्त होगी ? क्या बाध है ? उग्रा इतना बच्चा नहीं । वह जानता है कि मेरी इच्छा सफल हो जाय तो उसका बेटा पार हो जाय । वह चतुर भी है । यदि समझौते से ही देवकी प्राप्त हो जाय तो भले रा' कर देकर जुनागड़ में ही बना रहे । किन्तु इस विषय में मुझे इन सङ्गधारियों का विश्वास नहीं । देखू उदा क्या समाचार लाया है ।

धनी-धनी लम्भा, धनदाता ! जगदेव का स्वर सुनाई पड़ा ।

जगदेव ! रोव से जगदेव महाराज बोले दूसरा कौन है उग्रा महेता ! धाधो ! जगदेव धीरे उग्रा महेता धाए ।

स्वच्छ और सुन्दर वस्त्रों में सजे किन्तु बहुमूल्य अस्त्रधारों से उग्रा महेता सुसज्जित थे । उनकी साम पगड़ी का रंग बसा ही था जसा यौवनकाल में हुआ करता था । सब उनकी ओर आकर्षित हो जाते हैं । वह पहले के समान ही हँसमुख थे । उनकी मूर्छों में कासे-केस बहुत कम

रह गए थे किन्तु फिर भी उनके मुख पर बुढ़ाये की रेखाएँ अधिक नहीं । उसकी दृष्टि का पनापन कुछ अधिक तोखा हो गया लगता था । कभी-कभी तो उनमें भलमनसाहस भी दिखाई पड़ती थी । वह बड़ी हुई उम्र के सौजन्य से था या अभ्यास द्वारा प्राप्त की गई सरलता के कारण यह निश्चय करना कठिन था ।

यह अनुमयी दरबारी नय से चलता था । इसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर उसका स्वभाव और जीवननिर्या की स्पष्ट छाप थी । शांत और स्थिर बुद्धि—न झिग न छूटे ऐसा धर्म—न धुके न विपत्ति में मुह मोड़े ऐसा शौच कभी न समाप्त हुआ और न कभी कम हो ऐसी मिठास—लगन से प्राप्त किये हुए न्न श्रुणों का प्रतिबिम्ब क्षण-क्षण पर उसकी चाल में बोली में और विचारों में पड़ता था । उसके शृंगार में उसकी बोली में और उसके व्यवहार में कुछ ऐसी विनयता थी कि एक क्षण के लिए भी कोई यह नहीं भूल सकता था कि वह जन धर्म का महास्तम्भ यादव शिरोमणि धनुस धन का धनी और धरार सत्ता का अधिकारी है ।

हाँ देव आ ही गया । मन्त्री का शांत और मधुर स्वर सुनाई पड़ा । इस स्वर में मोहकता थी किन्तु कहीं कुछ कमी अवश्य है एका चुनने वाला तुरन्त समझ जाता था ।

जगदेव तू कहाँ गया था ? जयदेव ने पूछा ।

‘मन्नदाता ! मैं महल में ?’

परमार !’ सिर ऊँचा करके राजा ने कहा मैं कोई बहाना नहीं सुनना चाहता । यहाँ दो व्यक्ति बिना आज्ञा के घुस आए इसमें दोष तेरा है ।

जगदेव हाथ-में-हाथ कर सिर नीचा किये खड़ा रहा ।

बाहर जा ।

जो आज्ञा ! कहकर जगदेव बाहर चला गया ।

‘आयो गेहता भी ! बठी !’ राजा ने उपेक्षा से जवाब की बैठने के

लिए सम्बोधित किया। उदा महेता ने पीठ पर दुपट्टे को सपारा और गद्दी के नीचे पालघी मारकर बैठ गया।

‘क्या कर आए ?’

‘मैं देशत से भेंट कर आया हूँ।’

तो ?

‘परसों वह मुझसे भेंट करने वाला है। हो सका तो रा’ और देवड़ी से मैं ही भेंट कर आऊंगा।’

महेता ! मुझे इस प्रकार बातचीत चलाने में विश्वास नहीं।

‘महाराज ! आप परिणाम देखेंगे सभी समझेंगे।’

‘तुम भी तो जानते हो रा बहुत हठी।’

‘हम क्या कम हठी है ? अनन्दाता ! जो धोय से नहीं होता वह

चतुराई से हो जाता है।’

‘ठीक ! किन्तु ध्यान रहे मुझ पर कलक न लगने पाए।’

देव ! आपको देवड़ी पर से और रा झुक जाय—इससे अधिक

और क्या चाहिए !

अधिक तो कुछ नहीं—किन्तु— जयदेव ने कुछ रुककर पूछा—

किन्तु महेता बाह्य क्यों नहीं आया ?

महाराज ! वह अपने नाम का काक है उसे खाना क्या कोई सहज बात है ?

किन्तु बाह्य उसे ले तो अवश्य आएगा न ?’ न समझ पड़े ऐसे उपहास भरे स्वर में राजा ने पूछा।

दय ! अगर कोई यह काम कर सकता है तो बस बाह्य—

वसे काक हमारी सहायता करेगा न ?

उदा महेता सर खुजलाने सगे हाँ करेगा। किन्तु [उसके मत से चलेंगे तो !

‘महेता ! गुजरात में एक ही व्यक्ति का मत चलता है।’

और वह अनन्दाता का। उदा ने वाक्य पूरा किया। बाहर किसी

की पगध्वनि सुनाई दी । दोनों सुनने लगे ।

‘जगन्नेव ? यह कौन है ? जयदेव ने पूछा ।

‘कृपानाथ ! बाह्य महंता आए हैं । जगदव ने द्वार पर भाकर कहा ।

‘आने दे ।

जगदव और बाह्य ने प्रवेश किया । बागमट यात्रा में सीधा बसा आ रहा था । उसके मुख पर चकाचट और हर्ष दोनों के चिल्ल स्फुट दिखाई दे रहे थे ।

अनन्दादा, यही सम्मा ! बागमट ने प्रणाम किया । पिता जी प्रणाम ।

काक को लाया ? उदा ने पूछा ।

जयदेव केवल उसकी ओर देखता रहा ।

अनन्दादा ! आपकी आज्ञानुसार मैं काक भट को पकड़ लाया हूँ ।

बागमट ने झुककर हर्षातिरेक से कहा ।

किसे ? जयन्नेव ने चौंकर पूछा ।

भटराज काक को । बागमट ने कहा ।

किसी को उसके साथ बात तो नहीं करने दी न ? उदा ने पूछा ।

जयसिंहन्नेव की एक दृष्टि ही से पिता-पुत्र स्तब्ध हो गए, काक’ बाहर है ?

जी हाँ महाराज !

अन्दर ला देखू तो । राजा ने कहा । उसकी आँखों में शोध प्रकट हुआ ।

जो भागा महाराज ! कहकर बागमट बाहर गया । महाराज की मुखमुद्रा देखकर उदा चिंतित हुआ ।

देव ! उसके साथ सनिक सावधानी से काम लीजिएगा । उसने सप्ताह दो ।

जयसिंहदेव कभी-कभी सबसे विरक्त घोर पहुँच के बाहर हो जाते थे। उस समय उनकी घाँसों का सेम उनके निकट सम्बन्धियाँ तक को दूर से जा पटकता था और उनके चारों ओर गौरव का भ्रमण वातावरण छा जाता था। इस समय राजा की बिल्कुल वसी ही दशा हो गई।

मैंने तेरी सलाह नहीं पूछी थी। उन्होंने पग पटककर उदा से कहा। उदा मौन रहा। वाग्मट लमा को साथ लेकर अदर धाया।

कहाँ है काक ? राजा ने कठोर होकर पूछा। वाग्मट ने आश्चर्य चकित होकर चारों ओर देखा। उदा फीका पड़ गया जयदेव ठहाका मार कर हँस पड़े।

यह है काक ? जयदेव ने तिरस्कार से कहा उदा भहेता ! वह काम कोई यदि कर सकता है तो बाह्य— हा ! हा ! हा ! यह घोर काक ?

लमा हाथ जोड़कर खड़ा रहा।

क्यों रे तू बीन है ?

मानता ! मैं तो भटराज का सेवक हूँ।

किम्का ? काक का ? राजा ने पूछा।

हाँ नेत्र ! लमा ने कहा।

तू यहाँ कैसे धाया ?

मैं गया करेँ दन ! यह भाई कुछ पूछन लगे थे। पोन दूबने लगा तो मैं तरता-तरता भाया और फिर इन्होंने मुझे पकड़ लिया। मैं तो स हाथ धा कर हा गया सकता था ?

उग भहेता तुम काक को पकड़न वाले थ न ?

दय ! ?

तुम्हारा खड्ग साट गया है। मरी राय दे तुम भी वहाँ जाकर कुछ सीन घासा। बटाय से राता ने कहा।

मानता ! किंतु यह जान गया कहाँ ? उग न बात करने का प्रयत्न किया।

यही है। यह रहा।' कहते हुए महल में से सुन्दर वस्त्र, और धमकते हुए शस्त्रों से सुसज्जित होकर काक अंदर आया। उस समय उसका लंबा शरीर भव्य लग रहा था। उसने तेजस्वी मुख से प्रताप की किरणें फूटी पड़ रही थीं और उसकी तीक्ष्ण और गहरी आंखों से हसी टपक रही थी।

जयदेव पुनः ठाका भारकर हस पड़े 'वाग्मट ! इस व्यक्ति का नाम है काक। पहचान से कहीं फिर भूल न हो जाय। इससे काम बनाना कबिता करने जितना सरल नहीं है। महेता ! यह तुम्हारा पुराना मित्र है। पहचानते हो ?

उदा महेता और मुझे न पहचानें ? काक ने हँसकर कहा क्यों खेमा ! अच्छा हुआ तू बच गया। और कोई हुआ ?'

'नहीं महाराज ! खेमा ने कहा।

खेमा गुजरगत में ही महाराज हैं। परममहाराज जयसिंहदेव महाराज। तेरा सौभाग्य है कि आज तुझे उनके दर्शन हो गये। देव ! आशा हो तो जाय—यह थक गया होगा।

और तू भी तो थक गया होगा।

भाप जानते हैं कि भापकी सेवा से मैं कभी थकता नहीं।

महाराज ! उदा महेता चहुँके मेरा आँख तो प्रसन्न है न ?

हाँ !

'महेता ! जयसिंहदेव ने कहा तुम्हारा आँख लगता है वही सब गठबड़ कर देगा।

उदा ने तीक्ष्णता से काक की ओर देखा पुराने बरी के द्वेष का अनुमान लगाने लगा। काक मुस्करा रहा था।

वाहङ ! राजा ने मुस्कराते हुए तिरस्कार से कहा अब तू भी विश्राम कर। बहुत थक गया होगा। वाहङ दृष्टि ऊँची न कर सका, फिर परशुराम के साथ मेंदरड़े जा। आशा मिठी।

‘जो घागा ! बहुकर बागमट नमस्कार करके म्स्तान मुस से वहाँ स
बता गया । काक के संकेत करने पर खेमा भी वहाँ से बचा गया ।

४२

राजा ने बारी-बारी से उदा और काक दोनों की ओर देखा ।

‘तुम दोनों पुराने पानु हो । किन्तु अब मित्र बनना पड़ेगा । उन्होंने
कहा ।

‘देव ! मैं तो काकमट का मित्र ही हूँ ।

‘और मैं—जो आपका सच्चा सेवक हो उसके साथ बर नहीं रखता
मल्लदाता ।

‘भच्छा तो दोनों बठ जाओ । दसो अब इस जूनागड़ का क्या
करना है ? काक और उदा दोनों बैठ गए ।

महाराज ! उदा ने मिठास से कहा, आप मेरे विचार तो जानते
हैं । यदि मैं निरन्तर दबाव बनाता रहूँगा तो रा क लिए समझौता
स्वाकार करने के प्रतिरिक्त और कोई चारा न होगा ।

काक ! तू सारी बात जानता है ?

‘नहीं ।

‘रा अब हाथ आया ही समझो किन्तु गड इतना दृढ़ है कि उसे
गिरात बपों सगे आवेंगे । मैं यह युद्ध शीघ्र समाप्त करना चाहता हूँ ।’
जयदेव ने कहा ।

‘क्या रा’ वह किसी भी प्रकार का समझौता स्वीकार करेगा ?’

उसके लिए धन्य माग ही नहीं है । उगा ने कहा ।

‘नितने ही व्यक्तियों को समझौता करने से हमशान अधिक अधिकार
मपता है ।

तो रा समझौता स्वीकार नहीं करेगा, ऐसा तू मानता है ?
 हाँ महाराज मुझे विश्वास है ।

‘कैसे ? राजा ने कहा ।

मैं उसे वर्षों से पहचानता हूँ ।

और यदि मैं करवा दूँ तो ? उदा ने मुस्करा कर कहा ।

मैं शस्त्र उठाना छोड़ दूँगा । काव ने मुस्कराकर कहा ।

महाराज ! देखना !

किन्तु वह समझौता स्वीकार न करें तो ? काव ने पूछा ।

राजा की भाँखों में गहन तेज चमक उठा । वह सीधा होकर बैठ गया और दोनों की ओर देखा ।

और कर ले तो ? काव ! मैं स्वयं युद्ध में जाऊँगा । और रा को चुटकी से मसल दूँगा । जो मूलराज ने किया क्या वह मैं नहीं कर सकता ? सोलहियों को गिरा दूँगी नहीं पड़ती ।

महाराज ! यह मैं जानता हूँ काव बोला और इसीलिए मुझे आश्चर्य होता है कि आप समझौते की बात कर रहे हैं । समझौते की बात निबल करते हैं शक्तिवान नहीं गढ़ और रा' दोनों को पराजित करना पड़ेगा ।

अन्नदाता को यह मार्ग अच्छा नहीं लगता । उदा ने धीमे-से अपनी बात यही ।

जयदेव ने उत्तर नहीं दिया । काव समझ गया—राजा देवकी का विचार कर रहे थे ।

तो अन्य कोई मार्ग नहीं है । किन्तु दब ! समझौता करना ही तो सीधा बीजिए जिससे हम जैसे लोग कुछ समझ सकें ।

भरे हैं ! राजा ने कहा उदा महता तीन चार मिनट में उत्तर साने ब' लिए कहना है ।

हाँ ! सुम भी चला तो अच्छा है । प्रयत्न निष्पन्न होने पर काव भी अपमान का कोई भागी हाँ तो अच्छा यही सोचकर उदा महता ने

उदारता दिखाई ।

‘नहीं’ काक गर्दन हिलाकर बोला जो नहीं हो सकता ऐसे काम में मैं भाग दौड़ नहीं किया करता ।

‘देव ! मैंने सब प्रवचन कर लिया है । रा भाषा तो मान गया है । देवड़ी पर से विश्वास हट जाय इसका भी प्रयत्न किया जा रहा है और देवढी के माँ-बाप भी उसे समझाने के लिए तयार हैं । देवलदेव योद्धाओं को भी समझा रहा है । दोन्वार दिन में सब कुछ ढीला हो जायेगा सब में जा मिलूँगा । जितना बन सका उतना मैंने कर रखा है भागे की आधीश्वर भगवान् के हाथ में है ।

छल और प्रपञ्च की इस प्राण खँच देने वाली परिस्थिति में किस प्रकार जूनागढ़ अपनी स्वतन्त्रता छोएगा—यह योजना बताते-बताते खम्भात के बुद्धिमान मन्त्री की आँखें चमकने लगीं जयसिंहदेव की बात में रस आ रहा था । काक स्थिर नयनों से देखता रहा ।

‘आप स्वयं जायेंगे ?’ काक ने पूछा ।

हाँ तो ।

महेता ! वही जाकर जो बात अब तक आप नहीं समझ पाए हैं वह समझ जायेंगे ।

‘कौन सी ?’

‘वीर की अडिगता और सती की श्रद्धा ।

रा’ और—देवड़ी ? जयदेव ने पूछा ।

महायज्ञ ! आप उन्हें नहीं पहचानते । जब से ये दो ज्वालाएँ एक-दूसरे से मिली तभी से मैं दोनों से परिचित हूँ । आप उन पर पाहे जितना पानी डालिए, उनकी ज्वाला कम नहीं हाने को । और भूल दाता ! यह याद रखिएगा कि अब यह दो ज्वालाएँ दो न रहकर एक हो गई हैं । त्रिपुरारी स्वयं आपकी सहायता को आर्षं तो भी आप उन्हें भलग नहीं कर सकेंगे । इन्हें बुझा दीजिएगा तो भी उनके अवतारों की राख भलग होने की नहीं ।

महाराज !' उदा ने तिरस्कार से कहा, 'तुम्हें उनका गुणगान करना क्या बहुत अच्छा लगता है ?'

अकारण ही गुणगान करने की मेरी आदत नहीं है ।'

किन्तु जयदेव का मुख लाल हो उठा । उसकी आँखों से अग्नि निकलने लगी । उनके मधुने फूल उठे । आवावेश से काँपते हुए किन्तु स्पष्ट स्वर में बोले ।

'और काक ! तू जानता है ? मैं—परमभट्टारक—जयसिंह ने सोलहियों की कीर्ति की सौम्य खाई है कि इन दोनों को साथ नहीं रहने दूँगा । यह देवही उसकी नहीं—मेरी है । और देखता हूँ वह उसे कहाँ तक रख सकता है ?'

काक मौन रहा ।

'उदा महेता ! जब तुम सन्देश ले जाओगे तो मैं भी साथ भाऊँगा ।

देव ! आप ? काक बोला ।

मुझे तेरे रा और मेरी देवड़ी को देखना है ।

किन्तु आपकी कुछ हो गया तो ?

काक ! गव से जयसिंहदेव ने कहा 'मुझ त्रिभुवन को कपा देने वाले को—मेरा कोई क्या कर सकता है ? जिसने बावरा पर विजय प्राप्त की वह मनुष्य से कम करेगा ? मैं जाऊँगा ।

किन्तु भग्नदाता ! तनिक मुस्कुराकर उदा बोला एक घत पर । आप न राजवेश धारण करेंगे और न कुछ बोलेंगे ।

मुझे स्वीकार है ।

और देव ! मैं भी एक घत रखूँगा ? काक एकाएक कुछ निश्चय करके बोला ।

कौन सी ?

अनुसर बनाकर मुझे भी से घलितगा ।'

जयसिंहदेव हँसे । 'अच्छा ! काक तू भी देखेगा कि तेरे महाराज

जैसा तू सोचता है वैसे नहीं है ।’

‘देव ! मेने जितना सोचा था उससे बढकर प्रतापी तो भाप है ही, किन्तु मेरा मन धो नहीं मानता ।

मच्छा किन्तु जो राठ महाराज ने स्वीकार की है वह तुम्हे भी स्वीकार करनी पड़ेगी । उग बोले ।

अवश्य ! मुम्हे इस सांघी का दायित्व लेना भा नहीं है ।

देव ! मुरार अर भाया ।

‘क्या ?

‘बड़ी देवी का गण आया है काकभट हों तो वह बुगाती है ।

जयसिंहदेव मुस्करा दिए, ‘काक ! प्रतीत होता है सभी तेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं ।

देव ! यह भी माग्य की बात है ।

‘महेता ! तो तुम भी जाओ । देखना घात्र की बात का एक भस्म भी किसी क कानों में न पहुँचे । मुरार, मेरी कधी तो सा ।

राजा राज्यमाता के विवासपात्र काक की घोर घाँव किन्तु द्वेप भरी छिनी दृष्टि डाल कर उग उठ खड़ा हुभा । वह घोर काक दोना बाहर गये ।

‘भटराज ! हमें बीती बातें सब भूल जानी चाहियँ, ठीक है न ! ठनिक हँसकर उग ने कहा ।

मै भापका स्मरण करता ही नहीं, महेता ! काक ने नमस्कार करक कहा घोर मीनतदेवी क दूत के साम हो भिया ।

लोलादेवी अपने पति के स्वभाव से पूर्णरूप से परिचित थी, जोध में वह क्या कर बैठें यह नहीं कहा जा सकता था। जयसिंहदेव को काक के प्रति कोई विशेष प्रीति तो थी ही नहीं। इतना ही नहीं कुछ भयों में उसके प्रति जोष और अविश्वास दोनों थे। काक को एकाएक क्या बुलाया गया इसका भी कारण वह जान न पाई थी।

भसाधारण शीघ्रता से वह मुजाल महेता के निवास-स्थान की ओर चली।

नाम के महाबामात्य थे मुजाल उनका वास्तविक स्थान तो भीष्मपितामह के समान राज्य के अधिष्ठातृ देवता के समान था। वह बाहर बहुत कम निकलते थे कभी-कभी मंत्रियों के मन्त्रणा करते समय वह भी उपस्थित रहते थे। फिर भी उनकी दृष्टि चारों ओर रहती थी और उनकी दृष्टि चारों ओर है यह भी सभी जानते थे। पहले के समान यह सबको दूर नहीं रखते थे सभी निडर होकर उनके पास जाते थे। बड़े छोटे सबकी कठिनाइयों को दूर करने में वह अपना समय व्यतीत करते थे और प्रवकाश मिलने पर राज्य के सभी भ्रमस चारों को बलाकर उन्हें ससाह और शिक्षा देते थे। कभी-कभी किसी ब्राह्मण या साधु के साथ बैठकर धर्म की चर्चा करते या सुनते। दिन से तीन-चार बार जयदेव उनसे भेंट करने के लिए आते और उनके साथ मुप्त मन्त्रणा करते थे। राज्यकाज भार से परे रहते हुए भी राज्यवृत्त का सहज ही सरक्षण करते थे और उस निष्कटक माग पर चलाते थे। इस महापुरुष के व्यक्तित्व और प्रताप की उपद्रा करने का कोई स्वप्न में भी विचार नहीं कर सकता था और सबको इनकी सहायता लेने की ऐसी आदत पड़ गयी थी कि उनके बिना कोई काम हो भी सकता है यह कोई विचार भी नहीं कर सकता था।

जिस समय मंत्री मंत्री की सूचना देने के लिए गई उस समय पाँचों

पर दुपट्टा डालकर मुजास शोम महेता को आशा-मंत्र चिखने के लिए कह रहे थे। आयु बहुत अधिक होने पर भी मंत्री का शरीर संशय और तेजस्वी था। उनके सिर पर चंदलाई थी, निमूँ मुख के कारण सग्यासी जैसे लगत थे। बुढ़ापे के कारण मुह कुछ क्षीण था। तान की हठी तनिक टेढ़ी हो गई थी और कपाल पर रेखाओं के संयोग ने त्रिपुंड्र रच दिया था। किन्तु सागर के समान गहन आँखों में प्रभाव वसा-का वसा हो था।

महेता जी ! देवी आई हैं।

कौन सीलादेवी ? मुजास ने तनिक मुस्कराकर पूछा। उस मुस्क-राहट में गौरवशाली बुढ़ावस्था की मधुसता थी।

हाँ।

शोम ! तुम जाओ फिर बुला लेंगा।

सोलहियों का पीठियों का नागर मंत्री शोम सुन्दर बूढ़ और चतुर था। उसकी छोटी सी पगड़ी और घमकता हुआ तुर्रि उसके रसिक स्वभाव की साक्षी दे रहे थे। उसकी सोने में मढ़ी सेखनी और कमर में बाँधी हुई रत्न-जटित दावात उसके आशा-मंत्र चिखने का अधिकार और ठाट-बाट की लालसा दोनों के साक्षी थे।

और शोम ! बल प्रेम कुँवर को बड़ी देवी ने डाँटा था ?

शोम ने सकौच से नीचे देखा।

धवरा मत, महात्माभात्य ने हँसकर कहा 'मैं भीतलदेवी की समझा दूँगा। परन्तु तुम दोनों मरे पास आना। मुझे कुछ बातें करनी हैं।

जो आशा ! कहकर शोम महेता विदा हुआ।

रानी ने कुछ अधीर होकर प्रवेग किया महेताजी ! मुझे तनिक काम है।

आमो न बहन ! मुजास ने मुस्कराकर कहा 'मेने तो आपको तीन दिन पश्चात् देखा है। कौन करे बद्ध मनुष्य की चिन्ता ? रानी मुस्कराई। उसे पाटन के आढम्बर मरे दरबारी वातावरण में यह बूढ़,

विचारशील और सव्याही दृष्टिवाला महाधामात्य मला लगता था ।
महेताजी ! आपको मालूम तो होगा ही कि महाराज ने भृगुकच्छ
से काक को बुला भेजा है ।
हाँ क्यों ?' मु जाल के मुख पर रहस्य भरी मुस्कराहट दोड़ गई ।
'वह यहाँ आ गया है ।
अच्छा !'
हाँ परन्तु यह अच्छा नहीं हुआ ।
क्यों ?

महाराज उस पर कुपित है उदा उसका बट्टर राज है महाराज का
सलाहकार है और इस दरबार में उस जसे सत्यवादी का मूल्य न होगा
यह तो स्पष्ट ही है । तिरस्कार भरी छाँति से सीतादेवी ने कहा ।
मु जाल के मुखपर गहन मुस्कराहट थी ।
एक दो बातों से मुझे लगा कि यहाँ उसके प्राण सकट में है ।
मु जाल गभीर हो गया—बहन ! आप व्यर्थ में घबरा रही हैं ।
'नहीं । निश्चयात्मक वाणी में सीतादेवी ने कहा । उनकी सुन्दर
भर्वें हिलर हो गईं उनकी तीव्र दृष्टि निश्चल हो गई । उनके भावहीन
स्वर में आज कुछ अधिक दृढ़ता थी । ऐसे क्षणों में यह कोमल लगती
रमणी मयकर दृढ़ता की मूर्ति बन जाती थी और चारों ओर भय का
प्रसार कर देती थी ।
महेता जी ! वह बोली आप इस राज्य के स्तंभ हैं इसलिए मैं
यहाँ आई हूँ । मैं आपके राज्य के प्रपन्न में नहीं पड़ती किन्तु यदि काक
को वहीं कुछ हो गया तो आपके राज्य का क्या होगा यह भोलाभाष
भी नहीं कह सकते ।
अगाध छाँति और निश्चल दृढ़ता से भरे हुए स्वर में बोले गए
ये सोग भरे शब्द मु जाल स्नेही पिता की सद्भावना से सुनता रहा ।
बहन ! भीठे स्वर में मु जाल बोला मैंने जो पहले कहा वही
फिर कहता हूँ—आप व्यर्थ में घबरा रही हैं ।

‘क्यों ?

‘आप नाक को नहीं पहचानतीं ।

‘महेता जी ! आप अपने शिष्य और उनके जगदेव और बाहरा को नहीं पहचानते ।

‘मैं पहचानता हूँ सभी को मसी मांति पहचानता हूँ ! बहन ! आप अभीर न होइए । बठीए । कहकर मुजास मुस्कराया और रानी गद्दी पर बठी । काक संपूर्ण नगर को छाया में ऐसा है । और एक बात कहें ?’ एक रहस्यमयी दृष्टि सीतादेवी पर डालकर मुजास बोला ।

‘क्या ?

‘आपका नाक मेरे लिए पुत्र के समान है ।

आप लगता है पुत्र की पूरी-पूरी समझ नहीं करते । तनिक हस कर सीतादेवी ने कहा ।

‘यह तो मेरे माय्य में नहीं निखाया । बहन ! मेरी चले तो उसे मैं अपना स्वान हूँ । परन्तु आप निश्चिन्त रहिए । यदि उसने प्राण-संकट में होंगे तो मुजास फिर घात हाथ में लेगा । बस ?

‘महेताजी ! वह इस समय कहीं है इसका पता तो लगवाइए ।

‘मच्छा मैं अभी मीनसेदेवी के पास जाकर पता लगाता हूँ ।

महेताजी ! अब मैं निश्चिन्त हुई । वह हमारे साट का रत्न है ।

आप जैसी महारानी और नाक जसा मोटा—फिर साट को बहन रक आप ही कह सकती हैं । जाने से पहले एक बात और कह दूँ ।

‘क्या ?’

आप राज्य के प्रपञ्चों में हाथ क्या नहीं डालतीं ?

मुझे खता नहीं ।

‘मूठ बात । स्नेह से हसकर मुजास ने कहा, ‘विधि ने राज्यतन चसाने के लिए आपका सृजन किया है और सभी उपयोग अनुकूल

दूसरे ही क्षण उसने बात प्रारम्भ की अटक बघनों से बधी हुई लता ने कठोर बघव्य की पवित्रता स्वीकार की। उनकी त्यागव्रति ने उन्हें जीते-जी मृत्यु का आस्थादन करवाया। मथाल दका।

‘किन्तु महेताजी ! प्रथम बार रानी का स्वर भाव भरा हुआ, इस त्याग से उदभूत सुवास ने सम्पूर्ण सृष्टि को सजीव भी हो किया ?’

कौन कह सकता है ? मुजात आगे बला किन्तु इस सुवास में लिपटी हुई उनकी पवित्रता पर वह जीवित रहीं—मन्त्री ने सीधे होकर चारों ओर देखा। और जसी वह जीवित रही वसी हो मरीं थी—बिल्कुल भवैसी। कुछ देर तक मन्त्री मौन रहा उसकी आँखें सज्ज हो उठीं। बहुत। गला ठीक करके मन्त्री ने कहा बात का सारांग इतना ही है कि बहुत-सी वस्तुयें देखने में स्वाभाविक लगती हैं—किन्तु सचमुच में यदि वे अस्वाभाविक निकल आए तो दुःख की सीमा नहीं रहती। मैं यह नहीं जानता कैसे—किन्तु इन दो के पाद के कारण राज्य जड़मूल से उखड़ जाता। अतः बेटी ! ध्यान रखना। मुजात ने स्नेह-से लीलादेवी के कंधे पर हाथ रखा। समझीं न ?

कुछ देर तक कोई नहीं बोला। मुजात की बाणी पुन जैसी थी वसी ही स्वस्थ हो गई रानी ! सोलंकी की कीर्ति का आधार आप पर है। रानी उठी नीचे दक्षती रही फिर एकाएक कुछ निश्चय किया हो ऐसे अपना सिर ऊँचा किया। उसकी आँखों में तेज चमका उसकी छाती तनिक फूली उसके अघर ओर से बन्द हो गए।

महेताजी ! उसकी बाणी तत्सवार की धार जैसी-वैसी थी ‘आज आपने अनायास ही पिता का स्थान लिया तो आपकी मैं पुत्री के स्नेह-से अपनी बात कहूँ ?’

बेटी निडर होकर कहो। मैं इस अवस्था में अब भी विवेक से विचार भी कर सकता हूँ। मेरी सलाह से अब तक किसी को हानि नहीं हुई।

‘महेताजी ! सप्ताह के लिए तो स्थान ही नहीं है । रानी तिरस्कार से कहने लगी । ‘एक नर था—एक नारी थी । नारी ने याचना करके मुकुट धारण किया । महेताजी ! सप्ताह में कहियों के भाग फूटे होते हैं । वह नर उसका मृत्यु नहीं परख सका—या फिर आपने कही वसी बात से वह डरता होगा । उन्होंने अपने भाग जाना पसन्द किया । दोनों को एक-दूसरे में विश्वास है—इसके सिवा और कुछ नहीं है—और न कुछ होगा । रानी की बातों भावहीन थी । वह हस पड़ी—हास्य गुण्य और तिरस्कार मरा था । ‘महेता जी ! सोलहियों की कीर्ति के कल्पित होने का घनिक भी भय नहीं ।

मुजास उठा, रानी ने निवट गया उसका कंधे पर हाथ रक्ता और स्नेह मीनी बातों में कहा बटी । तू तो सचमुच महारानी होने के लिए बना है ।

रानी पुनः हम पड़ी—पहले क समान नीरस गति से ।

‘नहीं बनी होती तो कोई कष्ट न होता । कहकर उसने मुजास की ओर एक कठोर दृष्टि डाली । किन्तु वह चुकी हुई—सब भाव और क्या चाहते हैं ?

गव से छिर ऊँचा क्रिम सीतादेवी कमरे से बाहर चली गई । मुजास दखता रहा और फिर थोड़ी देर बाद बहबड़ाया भव में निश्चिन्त हुआ ।

४४

इसकी उम्र के व्यक्ति में आन्ध्रप्रदेशक सयनेवानी धानुरता से मुजास घूमा और मदर के द्वार में से होकर एक कोठरी में गया । कोठरी के निकट एक कमरे में एक दासी बठी कुछ सो रही थी । मुजास ने उससे पूछा बड़ी देरी कहाँ है ? दासी एन्म सड़ी हो गई ।

फिर गम्भीर मुह से उसने कहा, देवी ! सभी में हमारी शक्ति और हमारी पवित्रता नहीं है । अब तो हमें सोलहवीं कुरु की कीर्ति की रक्षा करनी है—अतएव किसी प्रकार की जोखिम नहीं उठा सकते ।

हाँ गम्भीर होकर भीमलदेवी ने कहा अब यह काम यदि तुम्हारा सोचा हुआ करे ?'

करेगा ही । भीमादेवी को विश्वासपात्र पटरानी बनाए रखने के लिए तो वह जान सड़ा देगा देवकी वाली बात नहीं बनेगी ।

किंतु जयदेव तो उसके पीछे पागल हो गया है ।

पागलपन तो अपने आप दूर हो जायगा । काक है इसलिए हमें भीलना नहीं पड़ेगा । अब भीमादेवी यदि जयदेव को रिझा सके तो फिर कोई कठिनाई नहीं होगी । आपने प्रेमकुंवर से कहा था ! मैंने भी सोभा से कहा है कि दोनों धाकर भेंट कर जायें ।

यह लड़की ऐसी धार्ढ़ है कि भीमादेवी को प्रसन्न रखने के लिए आकाश पाताल एक कर देगी ।

भीमादेवी के मन की प्रसन्न करना सरल काम नहीं है । मञ्जाल ने कहा, और किसी का पगरव सुनकर पूछा—कौन है ?

बापू में हूँ बस्ता मटराज आ गए हैं ।

मुञ्जाल और भीमलदेवी की दृष्टि मिली । जाने दे, मुञ्जाल ने कहा । काक ने प्रवेश किया, राजमाता और महामंत्री को मन्त्रतापूवक नमस्कार किया और हाथ जोड़कर खड़ा रहा ।

कहो काक ! कैसे हो ? बँटो न ! भीमलदेवी ने कहा मंजरी कैसी है ?

आपकी कृपा से आनन्द में है ।

'और कोई बात-वचने है ?

हाँ देवी एक पुत्र और एक पुत्री है ।

'वह भी आनन्द में हैं न ?

'हाँ, आपके आशीर्वाद से ।'

‘बहुत दिना पश्चात् हमसे मिला । मीनसन्धेवी ने कहा :

‘आपके प्रताप से मैं साह में निश्चिन्त हूँ । काक ने उत्तर दिया ।

‘तू भी ऐसे ही धीनता सीख गया है क्या ?’ मुजाल ने हँसकर काक से पूछा ‘तुम्हें अधिक निश्चिन्तता प्राप्त भी होती है ?’

‘महाराज की सेवा में मैं निश्चिन्त ही हूँ आभारणीय ।

‘साह की स्थिति कैसी है ?’ मुजाल ने पूछा ।

‘सब कुछ ठीक छोड़कर आया हूँ । आँखें बुरी हैं मही बर है ।

‘क्यों ?’

‘मूल करने का उसका स्वभाव-सा मालूम होता है । काक की बात सुनकर मुजाल और मीनसन्धेवी हँस पड़े ।

‘उस महेता मन्त्री को सम्झी बनाना चाहता था यह तू मूलता नहीं मालूम होता ।

‘महेता जी ! मैं उसे नहीं मूलता और वह भी मूलने वाला नहीं है ।

‘क्यों उससे भेंट हुई ?’

‘हाँ । हम दोनों महाराज के पास थे । बाहड़ मुझे पकड़ने के लिए सोमनाथ आया था । मेरे स्थान पर उसने मर सनिह का पकड़कर वहाँ सा लड़ा किया । काक को पकड़ लाने का आनन्द सेते बाप-बेटे के सामने मन्दर के कमरे में से मैं निकला । दोनों के मुख देखने जैसे हो गए थे ।

और महाराज ? मीनसन्धेवी ने हँसते-हँसते पूछा ।

‘महाराज मर पर प्रसन्न हैं ।

‘तेरी प्रकृति तो मैं जानता हूँ मुजाल ने कहा अब यह तो बता महाराज ने तुम्हें क्या बुझाया ?’

‘काक मुस्कुराया महेता जी ! देवी न होती तो कुछ पूछता । धर्मी नहीं पूछता ।

‘पूछ ही ले न । मीनसन्धेवी ने हँसकर कहा मैं तो राज्य के काम में हाथ ही नहीं डालती ।’

‘और मैं भी वानप्रस्थ से लिया है । जो कुछ बहेगा मुन मुँहा ।

मुझे सहनशीलता सीखनी चाहिए न, क्यों ? मुजाल ने भी हस कर कहा ।

‘मन्त्रीवर, तो सुनिए ! कितने ही दिनों से मेरे मन में एक सशय था ।

‘कसा ?

यह कि इस पाटण का क्या होने वाला है ! ‘रा’ को कोई पराजित नहीं कर सकता । उदा महेता राजा के दाहिने हाथ बन बैठ है । छोटी देवी का सम्मान मिटता जा रहा है । विदेशियों और पिशाचों के बस पर पाटण का राजा उछलता और कूदता है । पट्टणी वीरों का अपमान होता जा रहा है । इतना ही नहीं प्रशांत साट में मेरे स्वाम पर आँकड़ महेता को भेजा और मेरे जैसे निर्दोष व्यक्ति को पकड़ने या मारने के लिए पग-पग पर घातमी बिठा दिए । मुझ यह सोचने के लिए विवश होना पड़ा कि मुजाल महेता गए कहाँ ?

मुजाल महेता ठहाका मारकर हँस पड़े सोचा होगा मुजाल महेता स्वयं सिधार गया ?

मुझे ऐसा ही लगने लगा था काक ने हँस कर उत्तर दिया । किन्तु शाशा-यम बैलकर कुछ-कुछ विचार पसंदा ।

क्यों ? भीनमदवी ने पूछा ।

‘पद्म वष पश्चात् एकाएक मेरा भाव बढ़ गया ।

कितना अभिमान ! साट में स्वच्छद होकर राज्य करने वाले, स्वाम को राजा बुलाए नहीं तो क्या करे ?

या फिर होली में नारियल फोड़ने के लिए महाप्रामाण्य को भावश्यकता पड़ गई हो तो वह और क्या करें ?

मुजाल की आँखों में प्रशंसा चमक उठी, महाप्रामाण्य वृद्ध हो गया है ।

‘फिर आपके साथ भल्ल-मुद्ध करने का मुझमें साहस नहीं है । काक ने मुजाल की ओर दृष्टि करके कहा, देवी ! आपको क्या लगता है ?’

‘तू बाला नहीं है तेरा बस घोर बुद्धि बेसी-बी-बेसी बनी हुई है यह स्पष्ट दिखाई देता है तेरे जन्म यहाँ दूसरा नहीं है ।

‘तो अब कब मेरी आहुति देनी है, कहिए ?’ काक बाला ।

‘काक बग ! मुजात ने कहा ‘देवी सब हो कहती है । तेरे जैसा दूसरा कोई नहीं ।

‘अब मुझे करना क्या है ?’ काक ने पूछा ।

‘जो मुझे समझ पड़े । काक ! रात्र के जीवन में कई बार विविध प्रसंग आते हैं । यदि उन प्रसंगों पर विचार पाई तो रात्र की कीर्ति बढ़ती है—नहीं तो बिनाश आरम्भ हो जाता है । तुमने पूछा कि ‘पाटण का क्या होने वाला है ?’ कुछ नहीं होने वाला है हाँ एक विविध प्रसंग आ गया ।

‘तो आप कुछ करते क्यों नहीं ?’ काक ने सीधा प्रश्न किया ।

‘मैंने हस निकाला है । यह सब मेरे डग से हँसकर महाप्रामाण्य होते ।

‘क्या ?’

‘जो व्यक्ति कर सकता है उसे खोब निकाला है । मुजात मुन्करपा ।

काक हाथ जोड़कर झुका महेशा जी ! बिना आनका विरवास है उसनी एकत्र मोलानाच दें बस यही कामना है । उसने नम्रतापूर्वक कहा ।

‘काक ! मीनमदेवी ने कहा ‘तू पक गया होगा अब तनिक आराम कर । परन्तु जो बातें हुई हैं किसी को उनकी भनक न मिले ।

‘देवी ! मुजात बोला आप इसे जल्दी प्रकार नहीं जानतीं । काक ! जा विचार कर !

काक ने प्रणाम कर बिना सो ।

सरोवर के किनारे पारिजात के वृक्ष के नीचे समर्थ खड़ी हुई थी। इस समय उसकी प्रसन्नता का ठौर न था। उसने पाँव धरती पर नहीं पड़ रहे थे, उसकी भाँखों की पुतलियाँ स्थिर नहीं थीं। उसके होंठ क्षण मात्र भी घाँत न रह रहे थे, उसके सिर के केश भी जन से नहीं बढे रहे थे।

रह रहकर उसके पाँव धिरक उठते थे और वह झुक-झुककर ताली बजा रही थी। वह कुछ-कुछ गुनगुना रही थी। अभी उसके मन में से बाहड़ के बारे में धपनो बनाई हुई वह पंक्ति गई न थी।

उसने होंठ पर उँगली रखी माने दे। वह बढबढाई मुझे प्रतीक्षा करवा-करवाकर थका डाला है। अच्छी बात है—मैं भी परम राम की पुत्री नहीं यदि वह थका थकाकर न छका दूँ तो ! अपने मन में समझते क्या हैं ? हम जैसे यो ही हैं। उसने होंठ-पर होंठ चढ़ाया और पुतलियाँ ऊँची की। ऐसा करोगे तो हम नहीं बोलने के—बस नहीं—नहीं—बस नहीं।

समर्थ ! बाग्मट ने पीछे से भाकर कहा। उसके मुख पर असा वारण ग्लानि छाई हुई थी। भाँसे उदास थी। उसके सुन्दर मुख के चेहरे पर निराशा की वासिमा छा रही थी।

समर्थ ने घूमकर बाग्मट को देखा तो क्रोध भूल गई और एक-दो पग हवा में कूँती और ताली देकर वही पंक्ति गाने लगी। उसका रोम रोम-हुँस रहा था। बाग्मट ने एक गहरा निश्वास लिया।

समर्थ ! क्वाँसे से स्वर में बाग्मट बोला।

काँ था गया न ?' समर्थ ने ऊँचा देखकर, कपाल से केशों को उठाते हुए पूछा।

हाँ ! बाग्मट ने कहा 'बिन्दु !

समर्थ मुनने के लिए नहीं रुकी। वह उछलते-कूदते बाहड़ की

परिष्कार करने लगी और एक क स्थान पर दो तालियाँ बजाने लगी ।

समय !' खे से समय का हाथ पकड़कर बाहक बोला 'मुन !
'तुम तो रोया ही करते हो, कहकर समय फिर परिष्कार करने लगी ।

समय !' अधीरता से बाहक बोला तू मुनेगी नो ?

'बापो !' कहकर समय लड़ो हो गई । वह बचाव अधीरता का
का कारण न समझ पाई ।

समय ! बाहक ने दुखी हृन्म से कहा 'मुन से वचन का पालन
नहीं हुआ ।'

'क्या ?' एकलम झल्लि फाड़कर समय न पूछा ।

मैं काक को नहीं पकड़ पाया ।

'कूट देर तक समय खेती रही—फिर एकलम ताली बजाकर
हत्ती 'मूठ, मूठे मूठे !'

नहीं खन्वी बाठ है । बाहक ने हास्यास्पद गम्भीरता से कहा ।

'मूठ ! मेरी दासी कहली थी ।

'समय !' फाँड़े हृदय से बाग्यट ने कहा, जिसे मने पकड़ा वह काक
नहीं कोई झोर था ।

समय की झल्लि धीरे-धीरे बड़ी हुई । वह मय सदासी, उसका मुख
गम्भीर हो गया और स्यामा हो गया ।

'तुम काक को पकड़कर नहीं लाए ?' कहत हुए वह रो पड़ी
और 'ऊँ ऊँ—तुमने क्यों नहीं पकड़ा ?

वह पुरमान वही पहल से ही आ गया था । बाहक ने धीरे-से कहा ।

मय क्या हाथा ? ह—ह—तुमने वचन नहीं रखा—ह—ह
मैंने भरनी माँ के साथ छत की थी हँ ह मैं हार गई । तुमने
मह क्या किया ? हँ ह ह !' कहकर हाथों में मूह रसकर समय
रोने लगी । उसका मुन्म मुख विपत्तियों से ऊँचा-नीचा हो रहा था ।

मय कोई तुम्हारे साथ मेरा विवाह नहीं करण ।

सरोवर के किनारे पारिजात के वृक्ष के नीचे समय खड़ी हुई थी। इस समय उसकी प्रसन्नता का ठौर न था। उसके पाव धरती पर नहीं पड़ रहे थे, उसकी आँखों की पुतलियाँ स्थिर नहीं थी, उसके होंठ क्षण-भ्रम भी क्षांत न रह रहे थे उसके सिर के केश भी धन से नहीं बँध रहे थे।

रह रहकर उसके पाँव घिरक उठते थे और वह झुक झुककर ताली बजा रही थी। वह कुछ-कुछ गुनगुना रही थी। धम्री उसके मन में से बाह्य के द्वारे में धपनी बनाई हुई वह पंक्ति गई न थी।

उसने होंठ पर उँगली रखी माने दे। वह बड़बड़ाई मुझे प्रतीक्षा करवा-करवाकर पका जाता है। धम्री बात है—मैं भी परशु राम की पुत्री नहीं यदि उन्हें थका-थकाकर न छोड़ा दूँ तो। अपने मन में समझते क्या हैं? हम जैसे यो ही हैं। उसने होट-पर-होठ खड़ाया और पुतलियाँ ऊँची की। ऐसा करोगे तो हम नहीं बोलने के—बस नहीं—नहीं—बस नहीं।

समय ! वाग्मट ने पीछ से आकर कहा। उसके मुँह पर सदा भारव्य ग्लानि छाई हुई थी। धालें उदास थी। उसके सुन्दर मुँह के ठेज पर विराघ की कामिमा छा रही थी।

समय ने घूमकर वाग्मट को देखा तो क्रोध भूल गई और एक-दो पग हवा में कदी और ताली देकर वही पंक्ति गाने लगी। उसका रोम रोम हँस रहा था। वाग्मट ने एक गहरा निश्वास लिया।

समय ! क्वासे से स्वर में वाग्मट बोला।

‘काक आ गया न ? समय ने ऊँचा देखकर, कपाल से बेचों को उठाते हुए पूछा।

हाँ ! वाग्मट ने कहा, ‘विन्तु !

समय सुनने के लिए नहीं रुकी। वह सधमते-कूदते बाह्य की

परिष्कार करने लगी और एक के स्थान पर दो छात्रियाँ बजाने लगी ।

समय ! खे से समय का हाथ पकड़कर बाहड़ बोला सुन !

‘तुम तो रोया ही करते हो’ कहकर समय फिर परिष्कार करने लगी ।

समय ! अधीरता से बाहड़ बोला, तू सुनेगी भी ?

बोलो ! कहकर समय सड़ो हो गई । वह बेचारा अधीरता का कारण न समझ पाई ।

समय ! बाहड़ ने दुखी हृदय से कहा ‘मुझ से वचन का पालन नहीं हुआ ।’

‘क्या ? एकजम भीलें फाड़कर समय ने पूछा ।

मैं काक को नहीं पकड़ पाया ।

‘कुछ देर तक समय बैसती रही—फिर एकजम ताली बजाकर हसी ‘झूठे झूठ झूठ !

नहीं सच्ची बात है । बाहड़ ने हास्यास्पद गम्भीरता से कहा ।

झूठ ! मेरी दासी कहती थी ।

समय ! फटते हृदय से बागमट ने कहा जिसे बने पकड़ा वह काक नहीं कोई धीर था ।

समय की भीलें धीरे-धीरे बड़ी हुई । वह घब समझी उसका मुख गम्भीर हो गया धीर दमसा हो गया ।

‘तुम काक को पकड़कर नहीं आए ?’ कहते हुए वह रो पड़ी

‘ऊँ ऊँ ऊँ—तुमने क्यों नहीं पकड़ा ?

‘वह चुनपाप यही पहने से ही आ गया था ।’ बाहड़ ने धीरे-से कहा ।

‘घब क्या हागा ? ह—ह—तुमने वचन नहीं रखा—ह—ह
मैंने अपनी माँ के साथ घत की थी हँ हँ मे हार गई । तुमने
यह क्या किया ? हँ हँ हँ ! कहकर हाथों में मुह रखकर समय
रोने लगी । उसका मुन्दर मुख विसर्पियों से ढँका-नीचा हो रहा था ।

‘घब कोई तुम्हारे साथ मेरा विवाह नहीं करेगा ।’

भाष्य में न थी इसका उसे पूरा विश्वास हो गया था ।

समय को एक सरस विचार आया था और जब तक उसे करके न देखा जाता तब तक उसे चैन पढ़ने की न थी ।

उसे इस न पकड़े गए काक के प्रति द्वेष हो आया । उसने अपने पिता को इस काक की प्रशंसा करते हुए सुना था और यह भी सुना था कि इसको जो भी पकड़ेगा उस पर राजा बहुत प्रसन्न होंगे । इसी से उसने और बाहूड ने यह युक्ति रखी थी और बाहूड ने उदा महेता से काक तो लेने जाने की आज्ञा माँग ली थी । यदि बाहूड काक को पकड़े तो राजा प्रसन्न हों परशुराम की वाग्मट पण्डित के शौर्य के विषय में अच्छी भावना हो जाए तो समय को बाहूड पकड़ने की कुछ बात की जा सके । पहले शम्भु महेता के पौत्र के साथ उसका ब्याह होने वाला था किन्तु गतवर्ष वह युद्ध में मारा गया था । तब परशुराम जसा गविष्ठ योद्धा अपने कुल की महत्ता के योग्य वर की खोज में था किन्तु पाटण बहुत ही कम कुलों में वह योग्यता होने और कुटुम्बों में उचित धन के भविष्यहित युवकों का अभाव होने के कारण यह खोज अब तक सफल नहीं हो पाई थी । समर्थ यह सब जानती थी किन्तु बाहूड उसे अच्छे आदमी को उसके पिता ने अपनी पुत्री को क्यों नहीं दे रहे थे यह उसकी समझ में नहीं आया ।

६

अगदेव परमार दुर्जन या भोज मनुष्य नहीं था । वह वीर योद्धा था और स्वामी भक्ति निभाने के लिए हर क्षण तत्पर रहता था । उसकी बीरता से प्रसन्न होकर जयसिंहदेव उसे मासवे से साथ ले घाये थे और पाटन में उसे धन, मान, संपाधि, और भावझा जैसे ऊँचे कुल की पति

भादि सभी दिये थे । उसे पसंद करने और अपना दाहिना हाथ बनाने में जयसिंहदेव का गहरा स्वाध था इस बात को जगदेव मही जानता था ।

गविष्ठ पट्टणो योद्धाधर्म और मंत्रियों पर सत्ता जमाने के लिए उनसे नितान्त स्वतंत्र होने का सिद्धांत जयसिंहदेव के मस्तिष्क में धर कर गया था । बाबरा की जीत सेने से और मृत समझ जाने वाले बाबरा की सहायता से साधारण लोग उन्हें अपायिव और अजित सत्ता का धनी समझते थे । किंतु योद्धाधर्मा सामर्थ्य और मंत्रियों के प्रभाव को दबाना उतना सहज नहीं था । कई महावनी और महारथी एक दूसरे के सबधी थे और एक-दूसरे से जो भरकर ईर्ष्या करते थे किन्तु राजा के कहने पर वह एक-दूसरे से लड़ने के लिए तत्पर न होते थे । राजा की यह प्रच्छा नहीं लगा और उन्होंने जगदेव परमार की अपना भग रक्षक नियुक्त किया और तीन-मौ सशक्त मालविधियों को उसके अधीन कर दिया । महल में प्रवेश करना हो राजा से भेंट करनी हो कुछ प्रायना करनी हो तो उसके लिए जगदेव से भेंट किए बिना कोई और चारा नहीं था । किसी को सीख देनी होती या किसी को डराना होता तो राजा की आज्ञा यह स्वामि भक्त सिर घांखो चढ़ाता था । उसे राजा की कृपा छोड़कर और किसी की चिन्ता नहीं थी । पाटण या उसके राज क्षेत्र में या उसके ठाट-बाट में राजा की सेवा के अतिरिक्त उसे और किसी में आनन्द नहीं आता था । राजा और परमार के बीच किसी व्यक्ति और उसके विश्वासपात्र निर्जीव दस्त्र के बीच जैसे प्रीति हो जाती है वैसे ही प्रीति थी ।

राजा के और अपने मध्य में यह धारवाली खाद खड़ी देखकर पाटण के महापुरुष पहले तो क्रुडे किन्तु राजा के हठी और महत्वाकांक्षी स्वभाव से सभी परिचित थे । इसलिए सोये सिंह को न छोड़ने के उद्देश्य से सभी ने परमार से भाईचारे का व्यवहार स्थापित कर लिया । यदि कभी कभी राजा की इच्छानुसार जगदेव अपनी सत्ता पसताता था तो वह जयर से घांखे ही भीष सेते थे । इतना ही नहीं कभी-कभी तो वह इम

प्रकार व्यवहार करते थे मानों डरते हों कि कहीं जगदेव बिगड़ न सड़ा हो। फलस्वरूप उसका गव और उसकी प्रतिष्ठा बढ़ी।

राजा ने परमार को जब भटाराज बनाया सब तो कोई नहीं बोला किन्तु जब सेनापति का पद सेने की बात उठी तो सभी में खलबली मच गई। फलस्वरूप मोनलदेवी बीध में पड़ी और यह आशय पूरा न होने दिया। किन्तु राजा जब मंत्रियों के साथ ससाह करता था तब परमार अधिकतर वहीं उपस्थित रहता था। जगदेव के कारण मालवी योद्धाओं ने पाटण में घर करना आरम्भ किया और छोटे-बड़े पदों का उपभोग करने लगे थे और इस प्रकार राजा की पट्टणियाँ का गव कम करने की सालसा बढ़ती गई।

बलवान् महत्वाकांक्षी हठी और प्रतापी राजा के इस मान्य और विश्वासपात्र योद्धा को सभी विदेगी किराए का प्रत्येक प्रकार का काम करने वाला दास समझकर मन ही-मन तिरस्कार के वाक्य कहते थे, किन्तु किसी की ऐसी मजाल नहीं थी जो उसके सामने एक शब्द भी बोल सके एक पग भी बढ़ सके।

राजा ने समझा मेरी सत्ता पूर्ण हो गई, जगदेव ने समझा कि उसका स्थान निर्विघ्न हो गया दरबारियों को लगा कि उनके और राजा के बीच का निर्दोष व्यवहार समाप्त हो गया। यह भुवन कम सदा का है और सदा रहेगा ऐसा सभी ने मान लिया—और बर्बरक पर विजय पाने वाले परमभट्टारक महाराजाधिराज दबी और दुर्घर्ष सत्ता के अधिकारी है यह भी सब मानने लगे।

जगदेव परमार की भी यही भावना थी इसलिए आज उसे चन न पड़ा। वह राजा के कमरे के बाहर अपनी चौकी पर बैठकर भव्य शान रहा था। आज उसे बहुत सी बातें अच्छी न लगीं। महल में कोई आह्वान के शेष में उसके बिना जाने चुप गया उसने उसके सैनिक को बोला वह उसके जाने बिना रानी से मेट कर आया, रानी ने उसे अपमान करके निकाल दिया। उसके बिना जाने दो व्यक्ति महाराज से

भेंटकर धाए। उसके बिना जाने ही काक राजा के कमरे में जा घुसा और राजा का मान्य हो गया और उसे बिना बुसाए ही राजा ने उदा और काक के साथ मंत्रणा कर ली। उसे यह सब असाधारण और अस्वाभाविक बातें अच्छी न लगीं।

इस नवागन्तुक काक के प्रति उसे अचिन्त हो गई। उसने इस व्यक्ति के विषय में बहुत परिचय प्राप्त कर लिया था और लोगों में कमी लोक कथाएँ भी बहुत सुनी थीं। किन्तु एमी कथाओं में उसे अढ़ा न थी। पाटण क बहुत-से दण्डनायकों मंत्रिया और सेनापतियों के विषय में ऐसा ही सुना था किन्तु कोई उसके सामने खरा न उतरा और इस समय इस नए व्यक्ति को उसका स्थान बताने के लिए उसके हाथ झुलता रहे थे।

सामने खड़े हुए एक सैनिक को उसने बुलाया— नेमा !'

'आज्ञा बापू !'

'धम्मू को बुला लो !

जो कहकर नेमा धम्मू को बुला लाया। धम्मू परमार का काम करता था और उसकी ओर से देख रेख करता था।

तो काकमट को उसका निवास-स्थान दिखा धाया ?

हां किन्तु उहाने वह स्थान पसन्द नहीं किया।

क्यों ? अगदेव ने चकित होकर पूछा।

'उनके लिए वस्ता ने कमरा खोल दिया है।

कौन सा ?'

श्रीम महेश जिसमें तिखते हैं उसक निकट वाला कमरा।

किन्तु मने वो कमरे क्षुलवा लिये थे उनका क्या ?'

'वह कहते हैं कि मुझे अकेले को अधिक की क्या आवश्यकता !

कहना चाहिए था न कि महेश का प्रबन्ध मेरे हाथ में है।

। मैंने कहा था हंसकर बोल कि मैं तो ऐसे कमरे में पड़ा हूँ कि किसी को आपत्ति नहीं होगी।

शम्भू ! वस्ता को बुसा सा । शम्भू गया ।

उसे कि भाज का सूप उदय होने के साथ-साथ झूट भी सेता थापा है । राजमहल का संपूर्ण प्रबंध वही करता था और उसमें परिबसन करने का किसी में साहस नहीं था । उस पर मुजाल महेता का नोकर वस्ता इस प्रकार काक के लिए प्रबंध करे यह उसे अपने गौरव और सत्ता पर चोट करने जैसा लगा । उसने काक के लिए अपने निवास स्थान के नीचे क भाग में दो कमरे खोल दिये थे ताकि उसकी दृष्टि उसपर रहे । किन्तु वह कमरा तो ऊपर था जहाँ से महाराज रानियाँ मीनलदवी मुजाल भादि के निवास-स्थानों में सुरन्त जाया जा सकता था । वह अपनी मूर्खों दाँतों के बीच सं रमकर बचाने लगा

शम्भू वस्ता को ले आया । जगदेव राजमहल के कई लोपा को दूर-ही-दूर रखता था । वह अधिकतर बूढ़ थे और ऐसा कहा जाता था कि वह मुजाल महेता के विश्वासपात्र आदमी हैं । हो सके जहाँ तक मुजाल या उसके आदमियों पर खुले रूप से अधिकार जमाने में सार नहीं था ऐसी प्रेरणा जगदेव को बड़ी विचित्र रीति से हुई थी । और उसी प्रेरणा के अनुसार वह भाजकल चलता भी था किन्तु इस समय उसे लगा कि वस्ता उसकी सत्ता के क्षेत्र में अनधिकार चेष्टा की है ।

वस्ता बूढ़ था किन्तु चतुर था । मीन रहकर और हाथ जोड़कर उसने प्रणाम किया ।

वस्ता ! महाराज की आज्ञाओं का तुम्हें मान है ?

मैं समझा नहीं ?

महाराज की आज्ञा है कि महल की व्यवस्था मेरे सिवा कोई न करे । तुम्हें मालूम है ।

तो भाज यह आज्ञा तुने कैसे भंग की ?

मैंने कहा भग की ? कुछ चर्चित होकर वस्ता ने कहा ।

मैंने सुना है तुने काकमट के लिए महल में कमरा खोल दिया है ।

ओहो ! वस्ता हँसा भटराज ! यह तो ऐसा हुआ कि काकमट

जी महाराज के साथ भोजन करके सोटे तो उसके लिए बठने का भी स्थान नहीं था। मेरे पास उस कमरे की कुजी थी तो मैंने खोल दिया। मटराज ! उन थके-मंदि अतिथि के लिए इतना-सा करना अपराध हो गया ? वस्ता ने निर्णय वास्तव कहा।

विस्तर आदि किसने लिया ?

मैंने।

किसकी आज्ञा से ?

अतिथि-सत्कार करने के लिए आज्ञा की आवश्यकता होती है।

सादगी से वस्ता ने कहा।

तुम्हें यह सब अधिकार किसने दिया ? अखिल निवासकर जगन्नेव ने पूछा। उसे लगा मानो वह वस्तु उसकी हँसी उड़ा रहा हो।

ऐसा करने के लिए क्या अधिकार की आवश्यकता होती है ?

वस्ता फिर मुस्कराया।

‘अच्छी बात है। जाकर काक मटराज को कह आ कि उनके लिए मैंने नीचे चौक में दो कमरे खोल लिए हैं वहीं भाकर रहें। खेरा बताया हुआ कमरा उनके जैसे बड़े आतिथियों को घोसा नहीं देता।

बापू ! यह आपके गणों का काम है—मेरा नहीं। महान् बड़ा प्रबन्ध आपके हाथ में है। वस्ता ने उपेक्षा से कहा।

तू घोर मेरे गण सभी महाराज का नमक खाते हैं।

खाते हैं।

तो यह काम तुम्हें करना ही पड़ेगा।

‘नहीं। वस्ता ने दृढ़ता से कहा।

‘क्यों नहीं ? जगदेव गरजा।

मैंने कारण बर्फी का बता दिया है।

‘तू मेरी आज्ञा का अनादर करता है ?’

हाँ।

‘किसी की आज्ञा से या अपनी इच्छा से ?’ जगन्नेव ने पूछा।

स्पष्ट दिखाई दे रहा था। जहाँ तक सम्भव हो वह मुजाज ही भेंट नहीं करता था और वह मुजाज ही कभी उसे धुसाता था। जगदेव का मुजाज से परिचय नहीं था किन्तु राजा को उस अत्यन्त मान देते देख कर वह भी उससे सम्मान के साथ दूर ही रहता था। आज जब उसके गब पर घोटें पड़ रही थीं तो इस प्रकार का मुजाजा उसे अच्छा नहीं लगा।

कहना तनिक काम में लगा हूँ फिर धाकर भेंट कर लूंगा। कुछ अभिमान से जगदेव ने कहा।

उसकी साधारण स्थिरता उसमें होती तो परमार इस प्रकार कहने का स्वप्न में भी विचार नहीं करता। किन्तु उसका मस्तिष्क ठिकाने न था। यह उत्तर सुनकर काक और अनुचर दोनों अकित हो गए।

भापने क्या कहा? अनुचर ने स्पष्ट पूछा।

मैं फिर भेंट करूंगा। हरएक क्षण पर जोर देकर जगदेव ने कहा। काक सीधा होकर कठोर दृष्टि से उसकी ओर देखने लगा। तुम क्या कर रहे हो यह भी मालूम है? उसने धीरे से पूछा।

हाँ क्यों?

'मुजाज महेता बुलाएँ और कोई न जाय इसका अर्थ क्या होता है मालूम है?'

मैं जानता हूँ कि वह महाप्रामाण्य हैं। परन्तु मुझे महाराज के जाना है।

काक स्थिर नयनों से देखने लगा।

जगदेव! पहले भाओ! उसने कठोरता से कहा। इसने क्या यहाँ रहकर भी तुम मुजाज को नहीं पहचानते यह आश्चर्य की बात है। जाओ नहीं तो यह अनुचर फिर आयेगा।

काक के धोतने का डग इसना गंभीर और सत्तापूर्ण था कि जगदेव मौन होकर अनुचर के पीछे हटो लिया। उसका शक्तिशाली हृदय फटा जा रहा था।

मुजाल ने मधुर मुस्कराहट से उसके प्रणाम को स्वीकार किया और जगदेव की ओर बिना देखे ही कहा—तनिक ठहरो । मैं यह भाशा पत्र पढ़ लूँ । कहकर उसने खोम में भाशा पत्र लेकर धीरे धीरे पढ़ना आरम्भ किया । जगन्नेव को पट्टणियों की रीति-नीति के प्रति बहुत तिरस्कार था और विशेषकर मंत्रियों के प्रति तो उसकी घृणा इतनी थी कि वही कठिनता से ही वह उसे दबा पाता था । किंतु इस शान्त आमान्य के सामने वह कुछ बबराया । गर्व से उसने अपना खोम दबा दिया ।

परमार ! मिठास से ऊपर देखकर मुजाल ने कहा मुझ्हरा आदमी वस्ता को बुला से गया था । वस्ता को पहचानते हो न ? मंत्री की मुस्कराहट हृदय को हरने वाली थी ।

हां ! तनिक गव से होंठ बाग करत हुए जगदेव ने कहा ।

मंत्री की मुस्कराहट जारी रही । उसने चाँत बसता स जगन्नेव क मुख की ओर देखा । जगन्नेव ने घमण्ड में खेतना खोकर तिरस्कार से मुस्करा उठा ।

एक घड़ी में वस्ता जहाँ भी हो वहाँ से खोजकर लाया । चाँत से मुजाल ने कहा ।

‘महेता थी !— जगदेव नीलने लगा तो खोम से या अमिमान व थावेन में स्वर मोन और बिनमहीन हो गया । वहाँ बैठे हुए व्यक्तियों को ऐसा लगा मानो यमराज के पदावन से जाता कम्पन होता है वहा ही कम्पन हुआ । मंत्री का विशाल सिर गव ॥ ऊँचा उठा । सम्जनता से शोभायमान उसके मुख पर निश्चय गौरव विराजमान था । उसके कपाल पर चाँत थी किन्तु आँखों में मानो ज्वालामुखी फटे हुए थे । उनकी उवासा दसकर जगदेव की जिह्वा तालू से बिपन्न गई ।

परमार ! जिस स्वर से पाटन का धागुदस काँपता था उसमें वह गरजा । उसमें प्रभाव था गव था, और दुसह पाठ सत्ता थी, एक घड़ी में—एक घड़ी में या तो वस्ता खोजकर लाया भयदा अपने दास

मासवी सैनिक को एक ब्राह्मण ने बाँधा—और ब्राह्मण रानी के आवास में चला गया। राजा को बहुत ही हसी आ रही थी मानो कुछ समझ ही में न आ रहा हो।

किंतु ब्राह्मण हाँ—हा—मुरार यह तो नितांत गप्प है। जगदेव का मुख हसी से सास हो गया। और रानी भीला बुद्धिमान रानी हाँ—हा ब्राह्मण ! गप्प नितांत गप्प।

भन्नदाता ! मानभग और रोप के कारण फूले हुए मुख से जग देव बोला। उसकी आँखें रोते हुए बच्च की सी थीं गप्प नहीं सच्ची बात है।

क्या सच्ची बात है ? राजा ने बड़ी कठिनता से हँसी रोककर कहा एक ब्राह्मण तेरे भनिक को बाँधकर अन्दर चला गया। हाँ—हा परमार ! कृत्रिम गम्भीरता से राजा बोला महसूस की देख भाल करता है तू ? यह ब्राह्मण गया नहीं ?

‘महाराज ! मैं उसी को खोज रहा हूँ किन्तु मिलता ही नहीं।

भररर ! महाराज हँसी न रोक सके।

परमार ! यह क्या हाँ हाँ होने लगा है ?

भन्नदाता ! आप हँसते हैं और मेरे प्राण सूखते हैं।

और यदि मैं न हूँ तो तू जीवित रहेगा ? से जगदेव यह धुप हुआ तेरे प्राण क्यों सूख रहे हैं—कह आस। कहकर राजा पुन हँसा।

देव ! देव ! आप हँसते हैं—उपर आपकी सत्ता का भाज सरपा नाग हो गया।

हाय हाय सब ! सहानुभूति दिखाते हुए राजा ने कहा।

मुनिए भन्नदाता ! एक ब्राह्मण ने हमारे एक मासवी सैनिक को बाँधा—

‘यह भी जानता है।

फिर यह रानी के कमरे में अन्तर्धान हो गया।’

‘यह भी जानता हूँ ।

‘और रानी से अब मैं पूछने गया तो महाराज ! मुझे हुक्म कर निकाल दिया ।

घरे ! मेरे बीर परमार को ? मैं रानी से समझ लूँगा ।

किन्तु देव ! और सुनिष्ठ । वस्ता ने मेरी भाषा बिना काक भट राज के लिए कमरा खोल दिया ।

‘वस्ता है ही ऐसा ।

मेन वस्ता को खड़ी बना लिया ।

मज्जा किया ।

और मेने भटराज के लिए नीचे कमरे ससवा लिए तो उन्होंने वहाँ जाने से इंकार कर दिया ।

मह काक भी बहुत हैकड़ीबाज है । राजा ने फिर हत कर कहा ।

‘और देव ! मुझ से जाल महता ने बुलवाया ।

क्यों ? राजा ने गम्भीर होकर पूछा ।

मेरा सबके सामने अपमान किया है ।

क्यों ?

‘मुझसे कहा है कि खड़ी भर में वस्ता को ले आ नहीं तो अपने शस्त्र और भाषा-पत्र खोल महता को सौंप दे ।

क्या कहता है ?

देव ! इसमें मेरी प्रतिष्ठा नहीं जाती आपकी जाती है । आपकी सत्ता भंग करने की यह युक्ति है ।

‘परमार ! मैं रानी और काक दावा को समझ लूँगा किन्तु वस्ता को छोड़ दे ।

‘किन्तु महाराज ।

राजा ने धीरे-से कहा ‘परमार ! शस्त्र और भाषा-पत्र अच्छे नहीं लगते क्या ?’

जगदेव ने घबराकर राजा के सामने देखा । राजा ने जो कुछ कहा वह स्पष्ट न सुन सका ऐसा कुछ लगा ।

देव ! एक घण्टे में ही मानो याविक चित्कार निहित थी ।

जगदेव ! मेरी मान और वस्ता को छोड़ दे ।

परमार निराग हो गया । उसने रुठे बच्चे-सा मुह बनाकर कहा देव ! भादकी बात भाप जानें । मैं तो यही करूँगा ।

जगदेव ! देख इससे स्थान पर मैं तुम्हें कल याविक सत्ता दूँगा ।

और अब वाक भी भा गया है भूत तुम्हें याविक सत्ता की यावश्यकता पड़ेगी ही नहीं तो उसे वहाँ में रखना दूँगर होगा ।

'सगता तो ऐसा ही है ।

जगदेव ! अपनी अवस्थाता में से छपछ-से छपछे दो थोड़े काक के लिए तयार रखना और अपने भादमियों से कह देना कि उनके जाने में बाधा न दें ।

जो भाजा ।

और बल प्राप्त काल हम चलकर खुपचाप छिबिर की दशा देवने चलेंगे ।

जो भाजा ।

परमार ! बिल्कुल घबराना मत । मेरी सत्ता को कोई भी नहीं सकता ।

जगदेव ने झुङ्कार प्रणाम किया और विदा हुआ ।

'मुरार !' राजा पुन हथ पडा रानी की सूचना दे आ कि भाद में उनक भावास ही में भोजन करूँगा और सोऊँगा ।

जो भाजा ।

प्रेमकुंभर नागर मन्त्री गोम की पत्नी थी। वह लम्बी गोरी और चनिक स्पृष्ट थी। उसकी भाँखें विशाल और भावपूर्ण थीं उमक हाठ कुछ मोट और बिलास की और म्हाव प्रश्रित करत थे। उसक गालों पर यौवन की लाली थी उसके जन्हे कपास पर बही-नी धनरेखा घोमा दे रही थी, और उसक होंठों से पान की सासिमा बनी म्प्ट न होती थी। उसके शरीर की रेखायें भरी हुई थीं—एसा लगता था माना रति का वह मूर्तप हो।

पाटण के प्रथम नागरकुल के रान की पटरानी की घोमा हैं वसे उसक हाव भाव थे। वह विभिन्न प्रकार के वस्त्र धारण करती और शृंगार करती थी। वह धनाय्य आनन्दभय और गर्विष्ट कुल की घोमा देने वाले ठाट-बाट स रहती थी। रानियों म भी उसकी धन भूषा अधिक भावपक लगती थी और उसके धामूपणों की वमक के सामने महाराज का शृंगार भी पीका पड़ जाता था।

यौवन का उत्सास उसे सग्न आकर्षित करता था। वह चलती तो उसका शरीर झूमता उसकी कमर सजकती और उसके पांव धिरक उठते—तब एसा लगता मानो धरती काप रही हो। उसकी धाँखें दो सज के लिए भी एक-ही न रहनी बरन नए-नए भावों से दीप्त होती रहती थीं। कोई भी उस पर दष्टि डालता कि 'नखरापी स्त्रियों का प्रथम लक्षण तुरन्त दिखाई पड़ जाता उसका धूषट कहीं-से-कहीं लिसक जाता था और दृगक को ऐसा लगे मानों सग्न स उसे ठीक करने के लिए रुक गयी हो वह एसा प्रयत्न करती थी।

बाहर के संसार को वह कुछ गिनती ही नहीं थी। उसक अतर में पहले वह स्वयं थी फिर उसने राम रंग थे फिर वस्त्राभूषण थे और फिर उसका महेशा अर्थात् घोम मन्त्री था। धपने की मध्यदिन्दु मान कर अपने से अपने महेशा तक गिनता सींचकर जा बुठाकार बनाती

उसमें स्वर्ग मरु घोर पाताल—यह भय घोर वह भय—सभी समा जाते ।

भाज प्रेमकुंजर शीघ्र में थी । मीनलदेवी ने उस पर लीलादेवी प्रादि रानियों को श्रीहाप्रिय बनाकर बिगाड़ देने का भारोप लगाया था । अब इसमें उसका क्या भ्रंशराय ? रानियाँ उनके जसी रमिक न हों या उसके महेता जसा स्नेही पति उन्हें न मिला हो तो उसमें इन बचारी का क्या दोष ? घोर फिर बिना शीघ्र के उस पर भाषेप । मीनलदेवी में इस उलझ में तो अधिक बढ़िमाना होनी चाहिए । उन्होंने तरुणावस्था में क्या क्या किया होगा ! अब इतने बयों परचात उन्हें भी कहने की सुझी । लोग यौवनावस्था में भान-द न करें तो क्या पति घोर सत्तार की छोड़ने के काम करें ।

वह लीलादेवी का कमरा सजा रही थी । समर्थ उसकी सहायता कर रही थी । समर्थ उसे घबछी नहीं सगती थी । वह उस बहुत बातूनी समझती थी । क्योंकि लल्लु उसे दिन भर उससे सत्तार की बातें पूछती थी । इतनी बड़ी होकर जो बिना घर के इधर उधर भटकती फिरे उसे घोर क्या कहा जाय ।

मीनलदेवी से बाला सेने का एक मार्ग ही उसे सूझ पड़ा । यदि सभी रानियाँ को वह श्रीहाप्रिय बना ले तो मीनलदेवी की लीला का पार न रहेगा और अपने बुढ़ापे में सभी को बद्ध बनाने की इच्छा रखने वाली स बड़मा भी पूरा-पूरा से लिया जायगा । इस युक्ति का प्रयोग उसने लीलादेवी पर ही करने की सोची क्योंकि वह बहुत गर्वानी उदासीन और गम्भीर थी ।

उनको ऐसा बनाऊ कि कोर क्या बहू प्रेमकुंजर बड़बड़ाई और भविष्य उरमाह से उसने कमरा सजाना आरम्भ किया ।

यह समर्थ न जाने किस घड़ी में जामो है । हर राण कटकट कटकट ही किया ही करती है यह बड़बड़ाई ।

किन्तु अब समय को बीसने की इच्छा होती थी तो सुनने वाले भी

चिन्ता न करती थी ।

प्रभा भामी ! आज ऐसा बड़ा भावा ! रानी दबी चकरा गई ।
 सीमे स उसने कहा ऐसी चकराई—ऐसी— बहुर समय हसने
 लगी ।

किस प्रकार ? बिना ध्यान लिए प्रमकुंभर ने पूछा ।

आज उनक कमरे में एक व्यक्ति निवृत्ता ।

हे ! प्रमकुंभर न एकम ध्यान देकर भावय स पूछा ।

‘मर क कमरे में धुस गया था ।

कित ?

‘मैं उसे दूसरे रास्त से जान दिया समय हसने लगी ‘एसा
 मजा— ।

हिंसात पर फून टोंगते हुए प्रमकुंभर ने पूछा— कसा ?

धरे एसा ।’

प्रमकुंभर फून टोंगता छोड़कर समर्थ क निकट गई ।

‘कसा ?’

देवी भाई बिन्तु वह कन मितजा ? ऐसी चकराई कि बधामी
 हा गई ।

तुने कैसे जाना ?

‘मैं सोचकर फिर भाई न ?

हाँ ! प्रमकुंभर ने कहा धीर मन-ही मन बोली अब समझी
 कि देवी ऐसी बगव-बदास क्यों रहता है । फिर जोर स बोली कौन
 था वह ?

‘या कोई पुजारी ब्रह्मण ।

मसरे की । मर यही में । धारणा सय न निवृत्तने से प्रमकुंभर
 ने कहा ।

देखो प्रभा भामी ! ये धारणा मरने के लिए कट्टी तो कसा
 मयेगा ? मुझ तो कह देती हा । होंठ-पर होंठ रखकर समर्थ बोली—

घोर में आपको आपके सभी को ।

इतने में एक अपरिचित व्यक्ति आया । 'महारानीदेवी के पास समय है ?

क्यों ? प्रमकुंभर ने पूछा ।

क्योंकि भट्टराज बैठ करना चाहते हैं ।

हां—क ! समय ही खीटकार कर ली ।

क्या बात है समय ? प्रमकुंभर बठोरता से बोली बोसना आता है या नहीं ? घोर फिर खमा की ओर घूमकर कहा ठहरो भाई मैं पूछ दखती हूँ । यह कहकर प्रमकुंभर अन्दर गई ।

कक्ष में जाकर प्रमकुंभर ने कहा देवी ! भट्टराज जाकर कहते हैं कि आपके पास समय हो तो वह बैठ करने चाहें ।

सुनकर रानी तनिक मुस्कराई । उस मुस्कराहट को प्रमकुंभर ने हृदय में जमा लिया । हाँ, कह दे कि मुझे अवकाश है । प्रम ! तू अभी पून ही टाँग रहा है ? तू न होती तो मेरा क्या होता ? रानी ने कहा ।

देवी ! यह क्या कहती है ? उमड़नी हुई लज्जा को न रोक पा रही है इस प्रकार मुँह नीचा करके मुस्कराते हुए अंग लचकाते हुए प्रमकुंभर ने सोचा : आज इनका मन कुछ आनन्दित है इस प्रकार मन ही मन बहबहकती हुई प्रमकुंभर सीट गई और जाकर खमा की सन्देश दिया ।

अच्छा हुआ यह पापी यहीं आया ।

कैसा पापी ? प्रमकुंभर ने ध्यान किए बिना ही पूछा ।

यही पाक !

उमने मेरा क्या बिगाड़ा है पगली ?

उसने नहीं बिगाड़ा तो फिर किसने बिगाड़ा ? मुँह बनाकर समय ने पूछा ।

प्रमकुंभर ने फिर हिंसाया घोर मन ही मन प्रमाण-पत्र दिया 'बिस्कुल बूढ़ है ।

पहचानते हो ?

ओहो ! आप भी यही हैं ? काक ने हँसकर कहा ।

मुझे आपसे सज्जना है ।

परर नहीं भाई मुझ नहीं सज्जना है । मैं हार मानने के लिए तयार हूँ ।

हसी की बात नहीं है । समर्थ ने क ।

समर्थ ! पीछे से रानी का कठोर स्वर आया तू घोर प्रभू बाहर जाओ ।

पीछ जाती प्रभू मन में बोलती अरी माँ ! आज कौसी खिल रही है ! वह नीचे देखती हुई भागे भाई, काक के सामने गई मुझे तनिक नीचा किए ऊपर देखकर काक पर एक दृष्टि डाली घोर चली गई । समर्थ क्रोध में मुह चढ़ाकर चली गई । काक उस समय रानी को प्रणाम कर रहा था ।

समर्थ ! मगो की भोजना । रानी ने कहा ।

अच्छा देवी ।

५०

जब वह दोनों चली गई तो रानी हिडोले पर बैठ गई और काक सामने भूमि पर बैठ गया ।

काक ! तुझे कुछ दुःखा तो नहीं ?

‘कुछ भी नहीं । महाराज की मरु पर अत्यन्त कृपा है ।

अब समझ में आया ।

क्या ?’

‘मुँजाल महेता कहते हैं कि मैं तुम्हें अच्छी तरह नहीं पहचानती ।

तुम्हें कुछ नहीं हो सकता ।

‘मिट्टा जो जो मुझ पर विचित्र कृपा है । भाप क्या मेरे लिए गई थी ?

हां तुम्हें उस कमरे में न देखकर पवरा गई था ।

‘देवी ! भाप मेरे लिए बहुत चिन्ता मत किया कीजिए ।

‘रानी शांति से देखने लगी । विषय पत्रिका काक ! रवापाल क्या है ?

‘जसा या बँसा हो है । अब भी भाट को स्वतंत्र करने की आकांक्षा करने त्यागी नहीं है और इन दोनों पर से उसका क्रोध भी विद्यमान है । अब जा रहा तो ठीक ।

‘क्यों ?

‘मुझे उस बड़ा क मड़के पर तनिक भी विश्वास नहीं है ।

‘तुम्हें तो किसी पर विश्वास नहीं होता ।

‘जैसे मजदूर

‘जैसे भाप ।

‘रानी मुम्कुराई—‘बान फिर यहाँ का क्या ?

‘यहाँ ? पीरे-पीरे सब ठीक हो जायगा । प्रथम बार सफल हुआ है । महाराज भाग पर भागए हैं ।

‘देख मूल मत करना । उनकी समझने में जय-मर-जय व्यतीत हो जायेंगे । शांति विरहकार से रानी ने कहा ।

‘देवी ! यदि भाप सहायता करेगा तो वह बहुत शीघ्र रास्ते का लगेगा ।

‘मे किम लिए सहायता करें ? कुछकर रानी ने पूछा ।

‘किसलिए ? काक ने सीधे दृष्टि से रानी की ओर देखा देखिए स्पष्टवक्ता मुला मवेत’ यह मुख मुसने जैसा नहीं है । मैंने जानकी यहां व्याहा और पत्थनी-पत्नी की भाषा दिसवाई । इस समय भापका वह पत्थ सफट में है । भापकी भी ऐसा ही सगा तभी तो मुझे बुलाया । अब

हमें स्पष्ट बातें कर ही सेनी चाहिए।

तो करो न ! मैंने कब ना कहा ? ऊबकर रानी ने हिंदोले को धक्का दिया।

बुरा तो नहीं मानिएगा ?'

तेरा कहा बुरा लगने पर भी धुन छू नी

'देवी ! बाप भाई या माँ जो समझो इस समय में ही हूँ इसलिए जो कहता हूँ वह कहने देना।

इस सब चर्चा की ये आवश्यकता नहीं समझती।

मैं समझता हूँ। इस समय मेरी स्थिति बड़ी कठिन है। मेरे जैसे पर-पुरुष को इस प्रकार बात नहीं करनी चाहिए, किंतु अगर मैं न बरू तो कौन करे ?

जो कहना है कह।

आपको पटरानी-मद ग हटना नहीं चाहिए। काक ने तीक्ष्ण दृष्टि रानी पर डालकर कहा।

यह मेरे हाथ में नहीं है। रानी तनिक तिरस्कार से हस दी।

मुझसे जो बनेगा बरूणा ही परन्तु अंत में सब कुछ आप ही के हाथ में है।

किस प्रकार ?

अर्थात्सिंहदेव को रिझाना ही होगा। काक ने धीमे-से कहा और रानी के मुँह के भाव देखने लगा।

'कराना क्या चाहता है तू ? तनिक तिरस्कार से सीतादेवी ने कहा।

जिसमें काम बन जाय वह सब।

अर्थात् ?

देवी ! पुरुष की रिझाने की अद्भुत शक्ति प्रत्येक स्त्री में होती है। उसका उपयोग आपको भी करना होगा नहीं तो यह काम नहीं होने का।

कुर शांति से रानी बाक की ओर देखने लगी । बाक मौन रहा ।

कुछ देर पश्चात् रानी ने एक निम्नवास लिया 'शुभे पुन्य का रिम्हाना नहीं थाता । वह कुछ दर तक मौन रहो फिर तिरस्कारपूर्वक मुस्कराई ऐसा जानती तो बोझा-बहुत मजरी स सीख सेतो ।

बाक न उत्तर नहीं लिया किन्तु कहा—दवी ! इस समय हम दो सेनापतियों के समान यन्त्रणा कर रहे हैं । हमें यह जीतना है । धन धर्मों का प्रयोग कौत्रिण मे अपने धर्मों का प्रयोग करता हूँ । कहिए, इस प्रकार बात करु तो धर्मदा लगा ?

‘बनेगा !

‘तो भाप ऐसा कुछ करिए कि जयसिंहदेव महाराज भाप पर भावक हो जायें सभी यह गिरेगा ।

‘राणकदेवी क समान लुप्त क्या रख कर सिन्दूर लगाकर टिक ?

‘सबसे पहले पर यह भी करना पड़ सकता है ।

‘और क्या-क्या करना पड़ सकता है ? तिरस्कार स रानी ने कहा ।

‘पहली बात तो यह है कि वह महत्वाकांक्षी है ।

इसका क्या ?

‘उनका ऐसी पटपानी चाहिए जिस सभा पूजें । ऐसा माग पकड़िए कि सभी आपको पूजने लगें ।

‘रानी एकाग्र होकर देखने लगा । ऐसा नग रहा था मानो बाक सत्माह स विनय स स्नेह करता हो । पल भर क लिए उन्नत बाक क सजसवी मुख की ओर दसा ।

‘किस प्रकार ?

‘शुद्ध ने आपकी दास्य विद्या सिखाई थी प्रभु ने आपका बगुराई दी है कुछ ऐसा करिए कि आपकी कीर्ति महाराज की मुख कर दे ।

‘तो क्या युद्ध में जाऊँ ?

ऐसा भी समय आ सकता । दूसरी बात—महाराज भावुक है । काक ने कहा ।

अच्छा ? तिरस्कारपूर्वक रानी बोली ।

आप क्या नहीं जानती ? और फिर भी आप उनके प्रति स्नेह नहीं प्रकट करती । आप बहुत ही तटस्थ घात और भावहीन हो गई हैं ।

‘तू स्त्री होता तो ननद धन्यो बनता ।

अपनी रानी के लिए यह बनना भी मझे स्वीकार है । काक ने मुस्कराकर कहा । देवी ! चाहे जैसा आदमी हो स्त्री के प्यार से संतोष प्राप्त नहीं कर सकता । यका-माँदा व्यक्ति जिस प्रकार रैला की तरंगों में कूदकर नवजीवन प्राप्त करता है उसी प्रकार पुरुष को स्त्री प्यार स्नेह और छोटे-बड़े विनाशों में स्नान करके सजीव होने की आवश्यकता पड़ती है । और महाराज का हृदय इतना उत्साही है कि महाराज को प्यार स्नेह और विलास की विधात तरंगों की आवश्यकता होती है ।’

‘मालूम होता है तू पुरुषों का हृदय बहुत पहचानता है ।

हाँ ! बचपन से उसे परखने का धम्या ही जो से बठा हूँ । देवी ! प्रत्येक बात के प्रति तिरस्कार रखने से क्या लाभ ? यदि पाटण की पटरानी बनना है तो पाटण के स्वामी का अन्तर परखकर उसे ब दी बनाना ही होगा । आप भी तो मनुष्य हृदय को परखती हैं । आप चाहें तो उन्हें नचा सकती हैं । नहीं तो आज देखो नहीं तो कल कोई दूसरी आ जायेगी ।

तू चाहता है जाट की कुँवरी दासी बनकर रहे ?

‘देवी ! सर्वांगपूर्ण स्त्री को प्यार प्रकट करने में तो कोई लज्जा नहीं होनी चाहिए । पावती भी स्वयं क्या प्यार करती थी ?

‘अच्छा माना । एक—अपनी नीति से उन्हें मुग्ध करूँ—अपने अन्तर के भावों से उन्हें भिगोए रखूँ—और कल है या बस इतना ही ?

नहीं अभी और है ।

क्या ?

‘महाराज का स्वभाव बहुत पवित्र है । उन्हें देवता की भावना है । अपनी निष्कलता पर उनकी रचना होने दीजिए ।

‘यह किस प्रकार ?’ रानी को भी रस आने लगा ।

‘वह जो चाहे करें किन्तु उनकी कीर्ति और उनकी सत्ता आप ही के कारण है ऐसी श्रद्धा उनमें होनी चाहिए ।

उनकी कीर्ति और सत्ता की रक्षा बनकर ।

‘यह किस प्रकार ?’

‘जलो यह तीसरी बात भी सही । और कोई पाठ है ?’

‘प्रभो इतने ही पर्याप्त है मुस्करा कर काक ने कहा ।

‘कह कर क्या ?’ रानी ने बात पनटी ।

‘प्रभु आपकी कीर्ति । आप राज्य तयार रखिए । कुछ शिनों में ऐसा घटाका करूँगा कि सम्पूर्ण गुजरात गुँज उठेगा । कभी-कभी घुसबाप चाड़े पर बन्दर सेना में बना हुआ रहा है यह भी देख भावा करिए । साठ में थीं सब तो न जाने कितने कोस की दौड़ घुस करती थी ।

काक ! वह दिन गए । रानी ने निश्वास लिया ।

दूसरा प्रयाग तो अब आप ही के हाथ में है । काक ने मुस्कराकर कहा स्त्री चरित्र का मुझे अधिक अनुभव नहीं है ।

ऐसा ? रानी ने हँसकर पूछा तब तो सत्ता ऐसी बिल्कुल नहीं लगता ।

और तीसरी बात के लिए तो यही कि महाराज अपने आपकी देवता समझना चाहते हैं । इसी कारण जगन्नेश जैसे विदेशी की यहाँ रस छोटा है । आप उनकी निष्ठा दीजिए कि वह अब आपके पास आठ है तो बिना प्रयत्न के ही देवता बन जात है ।

मेरे पास देवता बनाने का मंत्र नहीं है ।

है । आप ठाठ-बाट इतना बड़ा दाखिए अनुचरों की सख्या इतनी बड़ा दीजिए और व्यवहार करने सविए कि आपके निकट आने वाले लोगों की देवमन्दिर का मान हो जाए । इस मन्दिर के देवता बनने के

लिए राजाधिराज स्वयं दौड़ते धावेंगे कुछ जिन ध्यान न भी दें तो घबराना मत एक दिन अपने आप खिंचे चले धावेंगे। अब तक मुझे ऐसा मनुष्य न मिला जो देवता माने जाने पर प्रसन्न न हो।

मुझे एक मिला है।

आपको कुछ भ्रम हो गया है। उसका भी एक छोटा-सा मन्दिर है जहाँ वह देवता सम्माना जाता है। चाक मुस्कराया। पक्ष भर के लिए उसका मन भृशकृच्छ के साम्बा बृहस्पति के बाड़े में जा सगा।

‘पुरुष स्त्री का घर और बाहर सुखी करता है उसको जीवन और प्यार देता है पूजन प्रचन करता है क्यों? मात्र देवता बनने के लिए। इस दुखी ससार में उसे केवल इतने ही में सुक्ति की राह दिखाई पड़ती है।

चाक! बहुत हो चुकी तेरी निडरता। रानी ने कहा और दांत से सूंसे हुए होठों का गीला किया। तुझे पूजू या धिक्काऊँ यह मुझे नहीं सूझता।

मुझे तो आपकी सेवा ही करनी है। चाक ने उत्तर दिया।

ऐसे बोलेगा तो जीभ नीच लूगी। बोले अब महाराज को देवता बनाकर उनका स्थापना कैसे करें?

जब वह यहाँ धावें तो अपनी सेवा में प्रस्तुत रहने के लिए कुछ सनिव मांग लेना।

किर?’

‘और ऐसा कुछ करिए कि बड़े बड़े मोट्टा यहाँ धावें।

क्या रस्सी बांध कर खींच साऊँ?

आप प्रयत्न तो कीजिए। बिना रस्सी सभी सिध चले धावेंगे। पर गुराम को बुझाइए। आप वीरागना हैं। आपकी वीरता से वह प्रसन्न होगा। वह धाया कि सब धाये।

मुझ पर इतना विश्वास करते हो?

‘देवी! देवी! महाराज पधार रहे हैं। मंगी हाँपती-हाँपती धाई।

उसके पीछे प्रेमकुंवर और समय के धराए हुए मुख दिखाई दे रहे थे ।
गुरन्त ही इनके पीछे जयसिंहदेव महाराज आए ।

रानी चमककर हिड़ोने पर से उतर पड़ी । काक उठा और झूक
कर खड़ा हो गया ।

५१

राजा अपनी आयु से छाटे लगते थे । उनका सुन्दर मुख इस समय
आक्यक दिखाई पड़ रहा था और उस पर सदा छाई रहने वाली मत्ता
की छाप ने इस समय मोहक गौरव का स्वरूप ले लिया था । उनका
मुख ऐसा लग रहा था मानो अभी हँसो फूट पड़ेगी । रानी को काक से
इस प्रकार बैठकर बातें करते देखकर उन्हें हसी आई किन्तु उन्होंने उसे
रोककर अपने कपाल को आशु चित किया ।

‘रानी ! कहो क्या कर रही हो ?’ कुछ हसते हुए स्वर की कठोर
बनावट उठोने पूछा ‘क्यों काक, तू यहाँ कैसे ?’

देवी स झेंड करने आया था ।’ काक ने तीक्ष्ण दृष्टि से राजा की
मुखमुद्रा की परीक्षा करत हुए कहा ।

रानी ! आज एक विशिष्ट बात मेरे कानों में आई है कहकर
राजा हिड़ोने पर बैठा और हाथ खींचकर रानी को भी बिठा लिया ।
उसने धारा और देखा और रानी के कमरे की खजाना देसकर कहा,
तुम बहुत रसिक लगती हो ।

प्रश्ना ! छाँटि और प्रत्यष्ट स तिरस्कार से रानी ने कहा ।
किन्तु कहते समय उसकी दृष्टि काक पर जा पड़ी । काक की धाल में
धुड़क थी । इतना कहने पर भी रानी कुछ नहीं करती ? जीनालेखो के
हृदय में काक की प्रेरणा का प्रभाव हुआ, मैं तो प्रतिदिन शृंगार

करती हूँ किन्तु महाराज को देखने का अवकाश कहाँ ?

राजा हँस पड़े । काक ने भाँसों-ही-भाँसों उपकार माना ।

प्राज तो मैं एक बात की खोज करने आया हूँ । राजा ने फिर गोभीर्य का स्वाग रचा ।

कौन सी ?

प्रातःकाल एक ब्राह्मण महल में घुसकर सुम्हारे कमरे में आया और अब तक नहीं मिला ।

रानी सनिक चमकी । काक बिना कुछ कहे हँस पड़ा ।

उस जगदेव ने कहा होगा ? उसने पूछा ।

कैसे जाना ?' राजा ने कुछ भवें तानकर पूछा ।

क्याकि वह ब्राह्मण तो मैं ही था । रानी यह घृष्टता देखकर फीकी पड़ गई । काक घाने बड़ा मुझे आपसे भेंट करनी थी इसीलिए ब्राह्मण का वेश बनाकर प्रहरी को बाँधकर मैं घुसा था । मेरे मन में यही था कि ऐसे वेश में आप से न मिलूँ इसलिये मैंने मंगी से वस्त्र मगवाए । इतने में दबी को मालूम हो गया और उन्होंने मुझे बुला लिया इतने में परमार भी दौड़ते दौड़ते आ ही गए । मंगी ने मुझे उस कमरे में छिपाया वहाँ सीमाश्रय से दंडनायक की पुत्री भी आ गयी । उसने मुझे दूसरे माग से निकाल दिया और मैंने आपसे आकर भेंट की ।

ऐसा हुआ ? राजा ने कहा परन्तु असली बात क्या है ? सुने और रानी ने दोनों के मिलकर मेरे विरुद्ध पडयंत्र रचना प्रारम्भ किया है क्या ?

हाँ ! देवी अभी अभी मेरे साथ पडयंत्र रच रही थीं काक ने कहा । देवी आज्ञा ऐं सो कहूँ ?

क्या ?

हे आज्ञा ? काक ने हँसकर पूछा ।

रानी समझी नहीं किन्तु उसने सनिक मुस्कराकर स्वीकृती दे दी ।

देवी रा' खँगार के विरुद्ध पडयंत्र रच रही थीं और सब सेना के

विषय में पूछ रही थीं ।

रानी ने काक के सामने एक क्रोध भरी दृष्टि डाली । वह उसे अपनी मुक्ति का प्रयोग करने का साधन बना रहा था । किन्तु वह विरोध भी नहीं कर सकी ।

‘महाराज ! मैं सब जानिए इस धरे से थक गई हूँ । ज़से भी हो मैं इसका अंत करना चाहती हूँ ।

तो हम सब क्या कर गए हैं ?

‘नहीं । किन्तु कितने ही वर्षों तक मैंने युद्ध में भाग लिया है और कितने ही रण-क्षेत्रों को पार किया है । कितनी ही बार तो इस काक को भी छत्राया है । मेरे प्राण सब इस आतंक के जीवन से उकठा गए हैं ।

क्या करोगी ?

जो आपकी पटरानी की छोभा दे बड़ी । तनिक अस्पष्ट सिग्नल से काक उससे क्या कहसकाना चाहता था उसकी कल्पना करने वह कहने लगी । राजा सगन का यह अप्रत्याशित प्रदर्शन दमने लगा ।

‘यह कोई लाट का छोटा मोटा युद्ध नहीं है ।

देव ! लाट के युद्ध में जो हुंसा उसकी गाथा गाने वाला कोई नहीं भव वह सब विस्मय हो गया है । काक ने कहा ।

काक जहाँ जाता है वहाँ महामारत हो जाता है । राजा न मूर्ख राकर कहा ।

‘नहीं महाराज ! जहाँ बीर से बीर भिड़ते हैं वहाँ महाभारत होता है । रानी ने कहा ।

रानी ! आज मैं भोजन नहीं करूँगा ।

जो भ्रष्टा । मगी !’ रानी ने कहा महाराज आज भोजन नहीं करेंगे ।

देव ! मुझे आज्ञा हो । सभी दण्डनायक से भेंट करनी है ।

देखती हो एक स्थान पर टिककर यह कमी बैठता ही नहीं ।

काक मुस्कराया जूनागढ पराजित हो और भाप भृगुकच्छ के सोमनाथ का कलश चढ़ाने पधारें सब ।

‘घोता बेने की रीति देखी ? घञ्छा माई जा प्रात काल मिलना । राजा ने कहा । काव बिदा हुआ ।

काक बाहर गया और घोडा ही घाने गया होगा कि एक द्वार में से किसी ने सम्बोधित किया— मटराज !

काक ने घूमकर देखा अरे ‘कौन, प्रात-काम वाली बहू ?

हां । समय ने भांखें निकाल कर कहा तू सम्पूर्ण सत्कार में बरा से-बुरा घादमी है ।

काक मुस्कराया क्यों क्या इतनी जल्दी परख लिया ?

‘तूने मेरा बना बनाया सब बिगाड़ दिया । उगमी से काक को घमकाते हुए समय ने कहा ।

मैंने क्या बिगाड़ा ।

तुम पकड़े क्यों नहीं गए ?

मैं क्यों नहीं पकड़ा गया ? काक को लगा कि यह सड़की पागल है ।

हां तुम पकड़े जाते हो बाहड़ महेता की मुह भांगा प्राप्त हाता और वह मुझसे ब्याह कर लेते ।

और मैं नहीं पकड़ा गया तो । कुछ-कुछ समझते हुए काक बोला ।

सब मेरे पिताजी उसके साथ मेरा ब्याह नहीं करेंगे ।

क्यों ?

‘उसका दादा मारवाड़ी था इसलिये ।’ होंठ-पर-होंठ रखकर समय ने कहा ।

मैं क्या कर सकता हूँ ?

तुम अब भी पकड़े जाओ ।

अरे बाहू रे चतुर ! तुम भी भारी हो गई ।

तू बहुत बुरा है समय ने रुठकर कहा तेरा कभी मत्ता नहीं होगा ।

काक हँसकर चला गया ।

५२

दिन निकलने से पहले राजा और जगदेव गढ़ के नीचे उतरे । गढ़ में सभी कुछ शांत था । जगदेव ने जहाँ घोड़े तैयार सड़े करवाए थे वहाँ गए । परन्तु घोड़े पर बैठे उससे पहले ही साईस ने जगदेव के कान में कुछ कहा । रात में पर रख देने पर भी जगदेव चमक-कर खड़ा हो गया ।

हैं ! सब ?

हाँ ।

क्या है जगदेव ? राजा ने पूछा ।

‘कुछ नहीं देव ! आप सनिक रुकें तो मैं उधर हो आऊँ ।

बात क्या है ? सनिक कठोर होकर महाराज ने पूछा ।

अनलगाता ! अभी आया ।

परमार ! मैं सुनना चाहता हूँ क्या है ?

देव ! गढ़ के दो प्रहरी घायल होकर मरणाशन्न पड़े हैं । मैं उन्हें देख आऊँ ।

क्या कहता है ? कसे घायल हुए ? मैं भी जानता हूँ । साईस ! यह घोड़ा तो पकड़ ।

ओ आज्ञा ! साईस ने जहाँ और महाराज घोड़े से उतरकर जगदेव के साथ गये ।

थोड़ी ही दूर पर गढ़ के एक द्वार के सामने जगदेव ने चकमक से

‘यह क्या है ?

दण्डनायक ने कोई नई भाषा तो भगती है । जगदेव ने कहा ।

बलो देखें तो क्या है । कहवर राजा ने घोड़ा बढाया । घोड़ी दूर जाने पर दो घोड़ों की टाप सुनाई पड़ी । प्रकाश फातने लगा था अतएव शीघ्र ही दो घश्वारोही दृष्टिगावर हुए ।

कौन परमुराम निकले हैं क्या ?

नहीं देव ! दण्डनायक इतने दुबले और लम्बे नहीं हैं ।

बस उसे पकड़ें ।

परन्तु उन्हें यह करने की आवश्यकता नहीं पड़ी । आग जाते हुए घश्वारोहियों के आने जाने वाले ने इस दोनों को देख लिया । वह सुरन्त घाड़ा फरकर राजा और जगदेव की ओर आने लगे । सूर्योदय होने ही वाला था । चारों घश्वारोही एक-दूसरे के निकट आ गए ।

जयसिंहदेव महाराज की ओर । मवागन्तुक ने कहा ।

वा क बटकटाते दंतों में स महाराज का यह ध्वज निकला । ‘जगदेव ! उसे बुला ला । कहकर उन्होंने घोड़ा रोका । जगदेव आते गया किन्तु उससे पहले तो वाक ही वहाँ आ पहुँचा ।

देव ! भणी घण्टीलम्भा काक न मुस्कराकर कहा और फिर परमार की ओर मुड़ा । परमार ! महाराज इस प्रकार घूमें उस समय क्या वह घोड़ा लाना चाहिए ? पूरा समार जानता है कि पाटण के स्वामी के सिवा मुनहरी नाक वाले घोड़े पर दूसरा कोई नहीं बैठा । शत्रु देख लें तो ? कहकर काक ने उदय होते हुए सूर्य की किरणों में चमक रही राजा के घोड़े की नासों की ओर संकेत किया ।

तेरा सलाह लेने के लिए नहीं आया हूँ । शीघ्र से वापते हुए राजा बोला, ‘तू सब का निकला है ?

— मध्यरात्रि के पश्चात् अतिथि मुहूर्त में ।

क्या कर रहा है ?

‘शोकियों का प्रयास कर रहा हूँ ।

किसने कहने से ?

'मेरे दण्डनायक स बात चीत कर ली थी ।

प्रत्येक बात में हाथ बढाने का तुम्ह अधिकार नहीं है । काक !
 मात्र तूने मेरे सामने सिर उठाने का साहस किया है । दांत पीसकर
 राजा न कहा ।

सेवक ऐसा स्वप्न में भी नहीं कर सकता महाराज किस आधार
 पर कह रहे हैं ? शांति से काक बोला ।

'मेरे प्रहरियों को तूने मारा ?

हाँ वह मुझ बनी समझने की धृष्टता कर रहे थे । आप तो जानते
 हैं कि भट्टराज का अपमान करने पर सनिक की क्या दसा होती है ?

उन्होंने क्या किया था ?

'मुझे महसूस बाहर जाने से रोका था ।

'तूने अपना नाम नहीं बताया होगा ।

बताया था किन्तु उन्होंने कहा कि मैं होऊँ या भी रोकने की
 आज्ञा है ।

राजा ने जगन्ध की ओर देखा । वह चिंताग्रस्त मुख से यह बातें-
 साप सुन रहा था ।

परन्तु मरे गड़ में मरे सनिकों पर हुविहार क्यों बताया ? मुझसे
 कहना था ।

'देव ! मध्यरात्रि को रतनाम में माता धारसे पूजने ?

परमार को कहना था ।

समा करें उसे कुछ ही व्यक्ति है जिनसे ये आज्ञा सेता हैं ।

परमार उन व्यक्तियों में नहीं है ।

राजा छट पड़े । अर्थानि ? वे मोट स्वर में बोले ।

काक ने साहस से ऊपर देखा किसी ने मुझे रोकने का साहस अब
 तक नहीं किया और न सब कर सका ।'

धन्य ? परमार ! इसके हाथ बाँध । राजा ने आज्ञा दी ।

बोले । उनके होंठ फटके, उनकी छाँसों से जैसे चिनगारियाँ निकलने लगीं । उनका हाथ घनापास ही तलवार की भूठ पर गया ।

देव ! काक ने नम्रता से कहा यह समय सम्झी बातें करने का नहीं है । आप एक दूसरी भूल भी करते आप हैं—देखिए ! काक न सोरठी सनिका को धोर सकेत किया ।

वह सब हथियार ऊंचे किये हर्षनाद करते हुए आगे बढ़ रहे थे ।

देखिए महाराज ! आपको उन लोगों ने पहचान लिया है । अपने घोड़े की नाँसें तो देखिए—जघेरी रात में भी पहचानी जा सकें ऐसी हैं । पाटण का सत्यानाश होने आया है । कहकर काक ने राजा के घोड़े की सुनहरी गालों की ओर संकेत किया ।

परन्तु हरामखोर ! मुझे जाने से क्यों रोकता है ?

यह लोग आपको अभी पकड़ लेंगे । यह पथ एमल नायक की चौकी पर जाता है ।

‘एमल नायक !’ जयदेव ने घबराकर कहा ।

हाँ महाराज ! अब समय ? आप मृत्यु के मुख में जा रहे थे ।

‘तो क्या करें ?’ जयदेव ने कहा ।

सुनिए जसा मैं कहूँ वसा करिए । काक ने कहा ।

उसकी छाँसों में स्थिर तेज या उसकी भबो पर भर्पकर छाँति थी उसके मुख पर घटल सत्ता थी । जगदेव मौन रहा । महाराज भी मौन रहकर उसकी शक्ति देखने लगे ।

‘वह चौकी देखिए ? आप उसमें घुस जाइए और चौकीदारों को ठिकाने लगाइए । आपकी बसगो पहनकर मैं आपके घोड़े पर बैठता हूँ । भ्रम में डालकर इन्हें मे दूर से जाता हूँ । सी सनिक भी भा जायेंगे तो भी उस चौकी में रहकर आप लड़ सकेंगे और अवसर दस कर भाग भी सकेंगे ।

‘परन्तु तुम्हें वह मार डालेंगे ।

‘महाराज ! बाँवें करने का समय अब नहीं है । सता-भरी मापी में काक ने कहा ‘पाटप स अधिक काक का मूल्य नहीं ।’ वसिए । वह महाराज का धोड़ा पकड़कर चौका की ओर जाने लगा ।

काक ! राजा ठीक प्रकार न समझने के कारण चिड़कर बोन इस तरह जबरदस्ती क्यों करता है ? जयदेव अपना धोड़ा तनिक भागे लाए ।

‘दखिए !’ काक बोला, ‘उन घाते वालों को दखिए ?’ एक घण्टा भी अधिक बाल हा एक ही प्रहार में अपेक्ष करके उठा लें जाऊँगा । वसिए ! कहकर काक न महाराज के घोड़े की ओर स बाबुक मारा । वह काक के घोड़े के साथ एकाग्र टेकरी के नीचे उतर गया । राजा की दृष्टि काक की मुग मुद्रा पर पड़ी । उसका गंभीर उनकी तजस्विता उसकी भयंकर स्थिरता उसकी दूरगतिता इन सबने राजा के हृदय में विविध अंश को अकृरित किया ।

घोड़ी दर में वह पथर की चौकी के सामने पहुँचा । घोड़े पर बैठे ही-बड़े काक ने द्वार खटखटाया । एक चौकीगर न जैसे ही द्वार खोला वैसे ही काक झट से द्वार भङ्ग कर अन्दर घुस गया । राजा जयदेव और खमा तीनों उसका पीछ-पीछे गए । किन्तु इसका पहल हा काक ने उस चौकीगर के मुह पर हाथ रखकर उसका भूमि पर पटक दिया था । उसकी पगड़ी से वह उसका हाथ-बाँव बाँध रहा था । यह गड़बड़ सुनकर अन्दर स दा आत्मी दौड़े आए । महाराज खमा और जयदेव दोनों उन पर दूट पड़े । घाटी ही देर में तीनों चौकीगर बाँध लिए गए ।

‘महाराज ! घाटीकी पगड़ी धीरे कसपी ।

जयदेव ने बिना एक अक्षर बोले ही पगड़ी धीरे कसपी उतार कर काक की दे दी ।

‘खमा !’ जिसने बल सक उठने घोड़े अन्दर से ल । देव ! मैं जाता हूँ । खमा ! ध्यान रहे महाराज की कुछ भी हो उसका पहले ठेरा फिर

थड़ से झलक हो जाना चाहिए ।

‘जो आशा !

धीर परमार ! यह महसूस की व्यवस्था करने जितना सरल नहीं है । महाराज को कुछ भी हो गया धीर मैं बचा रहा तो वधली से बच कर निकलना कठिन हो जायगा याद रखना ।

काक ! प्रशंसा से स्तब्ध बने राजा ने कहा तू रह जा जगदेव को जाने दे ।

महाराज ! यहाँ रहकर बच जाना सरल है । कठिन काम दूसरों को सौंपने की मेरी भावना नहीं । जगदेव ! द्वार बन्द करो । कहकर काक ने बाहर जाकर द्वार बन्द किया और राजा के घोड़े पर चढ़कर वहाँ से निवृत्ता ।

५४

काक चौकी से उठिक आगे भागा और पीछ भाते हुए सनिकों पर दृष्टि डालकर उन्हें ध्यान से देखने लगा । वह निकट की टेकरी पर आ पहुँचे थे और चारों ओर देख रहे थे । वह इन चारों की गतिविधि समझ पाए हो ऐसा न लगा । काक ने थोड़ा रोका राजा के ओत में बंधा हुआ छोटा किन्तु दुढ़ घनुष हाथ में लिया और एक अचूक तीर फेंका । तीर का निशाना सासकय था । तीर जाकर उस टोली के नायक को जो इधर-उधर देख रहा था लगा और वह घायल होकर मोढ़े पर से गिर पड़ा ।

सम्पूर्ण टोली का ध्यान काक की ओर आकर्षित हो गया । उसके सिर की कलंगी और उसके लाल घोड़े की नालें प्रातः के प्रकाश में चमक रही थीं । विकरास पशु की गजना के समान वह एक ही स्वर में भोस उठे ‘जसग सोलकी ! और उसके पीछे भागे । काक को यही

चाहिए था। उसने धीरे से एड़ मारकर जयसिंहदेव के घोड़े का सरपट भगाया। चौकी के ऊपर के भाग की जाती में से राजा न काक को भागते हुए धीरे उस टोली के भविष्यतर घुड़सवारों को उत्तरक पीछे भागते हुए देखा। इस राजसेवक की भक्ति देखकर उनका हृदय उमड़ आया। कैसे-कैसे धीरे एव मोढ़ा उसकी कीर्ति की वृद्धि के लिए अपने प्राण न्योझाकर कर रहे हैं।

'अन्न-गता ! जयन्व ने पीछे से आकर राजा का ध्यान खींचा। वह कुछ व्यक्ति हुआते धीरे भा रहे हैं।

'हां ! काक ने जिसे भागन दिया था उसे लेकर।

और वह देखिए ! एक व्यक्ति का सबसे अनग हाकर दूसरा दिशा में जात चलकर परमार ने कहा। मूढ मयरा है वह वन के नीचे बैठे हुए व्यक्तियों को बुलाने जा रहा है। राजा ने कहा।

'सब भा जायेंगे।

हां हैंकर राजा न गिनते हुए कहा 'बढ़-एक तो वह हैं और एक-तीन चार-पाँच और बेचार—नौ-दोके भा रहे हैं।

तो कुल पच्चीस हुए।

राजा को बिनो मूढ 'हां ! हममें से प्रत्येक के भाग में भाठ भाठ पड़ेंगे।

परमार ने गन्त हिमार्ह।

'परमार ! नब्बे भावें तब तक तो चिन्ता नहीं। कहकर राजा हँस दिए।

मे समझा नहीं।

काक के पीछे तीस घाम्मो गए हैं म। राजा ने शान्ति से कहा समा नहीं है ?

'यह रहा देव ! कहाँ हुआ समा कुछ रोमियाँ और मिरचें लेकर ऊपर आया। 'महाराज ! इतना-सा भोजन हाथ सपा है। खा सीधिए ! कौन जाने फिर कब भोजन मिल सके।

जगदेव सोलंकी के रसिक पुत्र को बड़ी धीरे मोटी रोटियाँ देकर कपकपी सी हो जाई। किन्तु उन्हें खमा की सलाह ठीक सगी भूत रोटियाँ एक-एक टुकड़ा करके बड़ी बठिनाई से गले उतारिं।

खमा ! तूने उन चौकीदारों का क्या किया ?

महाराज ! उन्हें नीचे कोठरी में बन्द कर धाया हूँ।

परमार ! महाराज बोले वह लोग यहाँ आएँ उसे पहले भाग निकलें तो कैसा ?

बल्लिए कहकर परमार ने कमरबन्ध कसा। परमार की परिस्थिति ऐसी गम्भीर होती दिखाई देने लगी कि उसकी बोलती ही बन्द हो गई थी। ऐसे समय में बोलने से अधिक मुद्द करना उसे स्वाभाविक लगता। तीनों-के-तीनों नीचे उतरकर घोड़ों के निकट गये। इतने में उन्हें दूर से पाते हुए लोगों का स्वर सुनाई पड़ा। जगदेव ने चौककर चारों ओर दसा राजा के होंठ कड़े हो गए।

लगता है अधिक सनिक धा मिले हैं। जगदेव ने कहा।

खमा भी सामधान हो गया था। वेग से ऊपर जाकर देख आया।

वह इसी ओर आ रहे हैं।

कितने हैं ?

बीस-पच्चीस।

राजा की भाँखों में भावेश की चमक थी।

हम अभी बाहर नहीं निकल सकेंगे।

बाहर से आगन्तुकों ने द्वार खटखटाया।

वह दांत खड़े रहे। थोड़ी देर पश्चात् बाहर वालों ने अधीरता से द्वार खटखटाया और धिल्लाकर कहा चौकीदार ! द्वार खोल ! खोल !

किसी ने उत्तर नहीं दिया। कुछ ही देर पश्चात् द्वार पर पदामात होने लगे और गालियों की भीछार होना आरम्भ हो गया।

अन्नदाता ! जगदेव ने कहा, मुझे एक ही माग दिखाई

देता है।'

'क्या ?

'ये बाहर आकर बन सकें उतनों की ठिकाने लगाता हूँ। दस-पन्द्रह को तो सगा ही दूँगा। तब तक आप यहाँ से भाग निकलें।

राजा मुस्कराए, खूब सडना तुम ही सबको घाता है क्यों ? नाक ने संकट से रक्षा की दूँ भोरों की रक्षा कर और जयसिंहदेव सोलही कायर क समान भाग निवस। दसठा जा सभी ठिकाने लग जायेंगे।

किम प्रकार ? हम अन्दर रहकर लड़ न सकेंगे। ऊपर की जाली से सीर भी तो नहीं जा सकते।

बाहर से भाग अभीर हाकर द्वार पर निरंतर आघात कर रहे थे। दूसरी टीनी जो बल - नीचे बठी थी अब वह भी धा मिली थी। वह सब आपस में घुसताछ कर रहे थे। एका-एक एक आदमी ने हेल्ला लहर जाता की आर फेंका। कुछ धूल उड़कर राजा की आँखा में जा बठी।

वह सांसका क आँमी है। एक तो भाग गया। इन्हें पकड़कर बाहर निकालो।

राजा मुस्कराया परमार ! जयसिंहदेव सोलही कसा फस गया ? मीनतदेवी जानेंगी तो बिठनी क्रुद्ध होंगी मैं ?

आज वह मरने वाला है और कल खेंगार यह सुनकर बड़ा प्रसन्न होगा। उस बिपट नाक बाँसे को दया ? मेरी बल तो उसकी नाक चींच लूँ।

अन्नदाता ! वह सोय चककर बठन सगे है।

'मह जानी तनिव बठी हातो तो एक एक को एक-एक तीर में बीधता।

'जाली मकड़ों की है। कहो तो बठी कर दूँ ? खेया ने पूछा।

हाँ ' राजा ने अत्साहित होकर कहा।

परन्तु वह जोय मुन लेंगे । परमार ने कहा ।

कुछ देर में पवित्र व्यक्ति आ पहुँचेंगे तो मर ही जायेंगे न ?
खेमा कोई हथियार है ?

नीचे एक कुल्हाड़ी मिली है । खेमा ने कहा ।

‘जगदेव ! उस पीछे वाली जानी पर पहुँचे जा ।’

जगदेव शीघ्र ही उस जानी की ओर गया और बाड़ी हो देर में बीच का टुकड़ा तोड़कर दो छिन्ना को एक कर डाला । खेमा ने महा राज को धनुष बाण दिये । जगदेव उन्हें लेकर जानी के सामने गए और निगाना लिया और नई टोनी में से एक को घायल कर दिया ।

घायल सैनिक चोखता भूमि पर गिर पड़ा । उसकी चील मुनकर भाग जात हुए अधिकतर सैनिक दौड़कर पीछे लौटे । उन्होंने तीर से घायल सैनिक को देखा । तीर किधर से आया वह भी देखा । वह भागे से बाहर हो गए । मलकारों गालियों और पत्थरों की बौछार होने लगी । जयसिंहदेव दौत पीसकर देखने लगे । उनके मुख पर से विलास के बिह्व मद्धुष्ट हो गए और रक्तिक स्वभाव की कोमल रेशाएँ कठोर हो गई । फिर भी साँत थे । यय से वे डर जायें—ऐसे नहीं थे क्योंकि उनके हृन्म में यह विश्वास जम गया था कि वे सबसे निराले और देवी हैं । ऐसा भी नहीं था कि कोई उन्हें हटा सके या मार सके । उन्होंने नीचे झुककर दूसरा तीर लिया और चला दिया । एक और सैनिक गिर पड़ा । बाहर लोगों में हाहाकार मच गई । वह पीछ हट कर दूर हो गए । उनमें फौली खसबसी देखकर राजा अपनी मुछों में हँसे ।

बोड़ी देर तक दोनों पक्ष घात रहे ।

परमार ! यह सब निश्चिन्त होकर बठ किसी की प्रतीक्षा कर रहे हैं । राजा ने कहा ।

भन्तडाता ! मुझे तो पल-पल सक्कट बढ़ता लगता है ।’

कोई माय दिखाई नहीं देता तुम्हें ?’

‘मुझे तो महाराज ! एक ही भाग दिखाई पड़ता है ।

‘कौन-सा ?

‘मे घोड़ा लेकर बाहर जाऊँ और इन सब से मठ’ इस लड़ाई का सामं सँगा कर आप और खेमा निकल आऊँ । परमार ने कहा ।

‘इन सबके पास सौर-रुमान हूँ कोई धायल कर दे तो ? राजा ने कहा से कहा ।

‘किन्तु यहाँ बठे रहें और अधिक व्यक्ति आ जायें तो ?

‘तब तक क्या कोई हमारी सहायता को नहीं आयेगा ?

‘कोई नहीं आया तो ? परमार ने शका प्रकट की ।

‘कसी बात करता है ? राजा ने साहस से हसकर कहा दो-तीन दिन तक तो बड़ी सरलता से यहाँ बठे रहेंगे ।

‘महाराज ! खेमा सिद्धकी क सामने खड़ा हुआ था वहीं से बोला दो दिन कौन रहेगा ? वह तो चौकी जमा देने की युक्ति कर रहूँ । सब इस प्रकार स्तब्ध हो गए मानो बिजली कड़की हो । फिर सबकी समझ में वास्तविक स्थिति आ गई और हाथों के तोंठ सड़ गए ।

५५

महाराज सँगांग मारकर सिद्धकी तक गए और बाहर देखने लग । दो-तीन साग हाथ नम्वे करके जाते कर रहूँ थे एक व्यक्ति पक्रमक से आग बना रहा था दूसरे दो एक भाग सूखी लकड़ियाँ इकट्ठी कर रहे थे । पाँचों देर तक राजा एनापता से देखते रहे एक व्यक्ति लकड़ी जलाकर द्वार में आग लगाने के लिए कह रहा था यह स्पष्ट दिखाई पड़ा । स्थिति बड़ी बर्षकर लगी । राजा ने एक गहरी साँस ली और भवे तानकर कुछ देर तक विचार किया । थोड़ी देर परचाए उन्होंने

गदन ऊंची की ।

परमार ! तेरी बात सच है । अब हमें मरना और मारना ही पड़ेगा ।

उत्तर में परमार ने दाढ़ी में बल दिया ।

मुन ! एक द्वार खोल दे । यदि बाहर निकलेंगे तो निश्चय ही यह सनिक बाँध देंगे । तू द्वार के बीच खड़ा हो जा । तेरे पीछे मैं खड़ा होता हूँ और सबसे पीछे खेमा बठा-बठा सीर खसावेगा । इस प्रकार एक के पश्चात् दूसरे का ठिकाने लगा देंगे और समय देखकर घोड़ों पर बैठकर भाग निकलेंगे । राजा ने अपनी योजना बताई ।

जो आज्ञा !' कहकर परमार सोढ़ियों उत्तरा और अपना प्रचंड खड्ग नगा करके हाथ में ले लिया । राजा ने एक हाथ में मात्ता और दूसरे में तमवार ली और द्वार से कुछ दूर पर बह खड़े हो गये । घोड़ों को तयार कर पीछे घुटनों के बल बैठकर खेमा ने निशाना साधा । परमार और खेमा ने महाराज की ओर इस प्रकार देखा मानों यह उनका अंतिम समय हो । फिर भी सीना जानते थे कि इसके सिवा रक्षा करने का और कोई माग नहीं है । जब तक चालीस घोड़ा घेरा बालकर पड़े हों तब तक बचने का कोई अन्य माग नहीं था ।

अन्तर्गत ! सावधान में द्वार खोलता हूँ ।

खोल ! शांति में खोलनी ने आज्ञा दी ।

परमार ने महाकालेश्वर का स्मरण करके भयला हटाई और एकदम एक द्वार खोल दिया ।

द्वार खुलने की आवाज सुनकर बाहर व बठे हुए लोग चमके और और निश्चिन्त होकर द्वार की ओर बढ़े । दूसरे ही क्षण उन्होंने अचानक पण्य की, कितने ही तो खिसमिसा कर हँसने लग । धीमे सदे हुए सनिक दास्त निकालकर चौकी में से बाहर निकलने वाले को भूमिसानु करने के लिए तत्पर हो गये किन्तु दूसरे ही क्षण वे सनिक चरित होकर खड़े हो गये चौकी के अग्रखुले द्वार में से कोई नहीं निकला । सोरठी

सैनिक घोड़ी देरतक देखते रहे फिर भाग बढ़। एक पक्ष के लिए उन्होंने परमार के उग्र मुख को मयानक भद्रहास करने देखा और अधीर होकर घघसुसे द्वार की ओर बिना सोचे-समझे दौड़ पड़े। जसाहोमत सोरठो जैसे ही द्वार में घुसे कि एक प्रचंड ममराज द्वार के पीछे स भाग भागा— एक भटके में दो सैनिकों के सिर घट से धनय होकर घूस घूसरित हो गए पीछे के एक को तीर लगा और वह घरतो पर लुढ़क गया। किसी को भान न रहा कि क्या हो गया। पीछे धाने वाले पीछे हटे और घघसुला द्वार जैसा था वसा ही निजन हो गया। एक ही पल में यह खेल समाप्त हुआ। भागमग करने वाले चौंक पड़े और दूर हटकर एक-दूसरे से मंत्रणा करने लगे। थोड़ी देर में एक व्यक्ति ने दो तीक्ष्ण बाण छोड़े। व घघसुले द्वार में होकर भागपार हो गए। उत्तर में मान परमार का भद्रहास सुनाई पड़ा। जैसा के तीर से धायन हुए व्यक्ति की जेबना मरी चौत्वार के सिवाय सब कुछ घांत था। चौकी में तीन व्यक्ति प्रतीक्षा करते हुये खड़े थे। घरती अपनी निश्चित गति से दौड़ रही थी।

मध्याह्न हो गया। सोरठ का प्रखर सूर्य भी मानी रग में भागया था।

थोड़ी देर में महाराज और उनके साधिया ने नया और अपरिचित स्वर सुना। वह किसी बच्चे का विनोद भरा स्वर था।

छोक्तो! क्या कर रहे हो?

मरे। परमार बड़बड़ाया और बन् द्वार के छिद्र में से दखकर बोला महाराज! मरे पीछे छिपकर रहियेगा। एक बूझ घाठ-स घदवा रोही लेकर भागा है। एमल नायक क विषय में सुना था कहीं वही तो नहीं है?

‘वही श्वेत मूछे है? मोटा और नाटे बदन का है? राजा ने पूछा और फिर जिज्ञासा न रोक सकने के कारण भागे धाकर कहा, ‘परमार! हट तनिक देखने दे।

यम के घर, कुछ भाग गए। महाराज आप दोनों ने मिलकर ही सभी को समाप्त किया है।

और एमल को छून मारा ?

हाँ महाराज ! आप बाहर निकले और मैं लेटा-लेटा धनुष तीर लेकर निक्का और पेट के बल सरकते-सरकते मैंने उसका काम समाप्त किया है।

‘जीता रह !

महाराज ! समय गवाने में लाभ नहीं है। वह काली घोड़ी वहीं चर रही है। वह परशुराम ही की लगती है। यकी हुई भी नहीं लगती। मैं भव कर लूंगा आप तुरन्त बचती जाइए। अब और कोई आ जायगा तो लड़ने की भी शक्ति नहीं है।

यह क्या कहता है ? जयदेव से कोई जीता भी है ?

‘जब तक सोमा ।। गवान् की कृपा है सब तक क्या हो सकता है ? कह कर सोमा चाक्ष से आया और सहारा देकर जयदेव को दस पर चढ़ाया।

दोहा पानी की सीझिण और लड़े रहिए यह तलवार साफ करके देता हूँ और यह धनुष-बाण भी लेते जाइए। हाँ ठहरिए, इन एक दो बड़े घोड़ों की भी बाँध देता हूँ। कह कर सोमा राजा की सेवा में लग गया।

तू भी तो बल !

देखूँ तो सहो कि परमार जीवित है या नहीं।

सोमा ! आज तो हमने हार ही कर दी। राजा गर्भ दिखाए बिना मर रहे सके।

महाराज ! काकमट जी का पता तुरन्त लगवाइएगा। सोमा ने सूचित किया।

भवदय ! राजा ने कहा और घोड़ी को एक मारी। परशुराम की सुविख्यात घोड़ी हिरज के समान उछलकर दोब पड़ी।

साथ दुसह था किन्तु राजा के मस्तिष्क में विजय का प्रमाद भी तो था। प्रकट ही दुजय एमन और सोरठी सनिका को ठिकान लगाया था और परगुराम की घोड़ी लौटा लाए थे। उनकी रगों में रक्त उद्वन रहा था उनकी घावों के सामन रग बिरमे बिज निखाई दे रहे थे। मर कुछ सुहाना दिखाई पड़ रहा था। घोड़ी पवनवग से जा रही थी। चारा और की वस्तुएँ भागती-भी सग रही थीं।

नयुने पून रह थे घावों में न खून निकल रहा था। परन्तु कानों में विजय घोषणा हो रही थी। एकाएक एक के अनेक ही घुडसवार। चारों ओर ने निकल आए। ये सब कहाँ स आ गए यह समझ में न आया। आगे आने वाला परगुराम-सा लग रहा था।

साथ में कोई अपरिचित पुरुष भी था। नहीं अपरिचित नहा— उसका मुख उसकी रानी के समान था। उन्होंने घोष किया— जय सिंहदेव महाराज की। जय।

जय सोमनाथ ! राजा ने कहा।

नमी उन्हें घेरकर खड़े हो गए। उनका गला सूखने लगा। कीन देवी ? तुम कहाँ स ? परगुराम तुम्हारी घोड़ी। राजा ने बोलने का प्रयत्न किया किन्तु बठ रूच गया। परमार ! काक सेमा एमल किन्तु कुछ भी स्पष्ट न कह सके। लोगों ने उन्हें सहारा लिया। मधेरा हो चला था।

अपरिचित महाराज को मगा कि उनके अग-जग में पोहा हो
 है और उसके हाथ-पाँव पर पट्टियाँ बंधी हुई हैं। क्या वह बनी
 है परम नायक और सोरठियों पर विजय

पकड़ा हुआ माग भी खोज ढाला था। परन्तु वहाँ से लगा कि राजा से विदा होकर वह एकाध योजना आगे गया पीछे सोरठियों की टोली भी बढ़ी चली आ रहा थी और सामने से कुछ दूसरे व्यक्तियों के आगमन के चिह्न भी थे। वहाँ मिश्रित के चिह्न भी थे। कुछ व्यक्ति मरे ऐसा भी लगा। वहाँ से उसने अनुमान लगाया सभी एमल नायक की चौकी की ओर गए।

आगे बढ़ना खेया को बुद्धिमत्ता पूरा नहीं दिखाई दिया। किन्तु दो बातें स्पष्ट हो गई—एक तो यह कि काक बन्दी बना लिया गया और दूसरी यह कि उसे एमल की चौकी पर भी ले जाया गया। किन्तु काक जीता पकड़ा गया था मरा एमल ने उसे बन्दी किया था मार डाला वह चौकी में था या नहीं इन प्रश्नों का निराकरण नहीं हो सका। मुजाल और परशुराम ने मन्त्रणा करके निश्चय किया कि इस समय एमल की चौकी पर हमला करने से कुछ हाथ नहीं लगगा क्योंकि यदि कुछ सोरठी आवेंगे में आ जाते हैं तो काक को मार भी सकते। एमल इस समय अचेत था भूत उससे भी कुछ मालूम न हो सकता था।

स्थिति सचमुच गम्भीर हो गई। अच्छ होकर महाराज में काक को खोजने की अधीरता इतनी बढ़ गई थी कि उन्हें फिर ज्वर चढ़ आया। जगदेव परमार जीवन और मृत्यु के बीच झूल रहा था। एमल नायक मृत्यु के द्वार पर खड़ा हुआ था। मुजाल ने सम्पूर्ण अधिकार अपने हाथ में ले लिये। राजगढ़ के द्वार बन्द करके राजा के अच्छ हो जाने का समाचार चारों ओर फला दिया गया। सम्भव है एमल का बन्सा लेने ने लिए सोरठी काक को मार डालें इस भय से एमल भी अच्छा है यह समाचार जूनागढ़ तक पहुँचाने की युक्ति की गई। सम्भव है इस समाचार का लाभ उठाकर खेंगार आक्रमण पर बैठ इसलिए ऐसा प्रबंध किया गया कि वह विजयी न हो सके। चारा और की चौकियां दुड़ कर दी गई। परशुराम के स्थान पर मुजाल बैठे और चारों दिशाओं का अधिकार महाप्रामाण्य ने अपने हाथ में ले लिया।

मीनलक्ष्मी और बछराज ने राजा की दशा सुधारने का प्रयत्न किया। लीलादेवी मर्यादा के कारण राजा के निकट नहीं बठ सकती। लीन न्नि हो गए, काफ का पता नहीं लगा। यदि वह जीवित होता अथवा बन्दी न बना होता तो अवश्य लौट आता। यदि उसे एमन नायक न पकड़ा होता तो वह एमन नायक के साथ क्यों नहीं था ? सभी के मस्तिष्क में यह भारी शका उत्पन्न हो गई कि काफ एमन के साथ लड़त हुए मारा गया। यह शका जस-जस दब होती गई वैसे-वैसे प्रत्येक व्यक्ति के आचरण में परिवर्तन होने लगा। मुजाल का मुख गम्भीर हो गया और उनकी बाणों में मधुरता का स्थान कटुता ने ले लिया। मीनलक्ष्मी को लगा कि काफ का मर्यु बहुत बड़ा अनुभव चिह्न है और उसका अमंगल प्रभाव उनके पुत्र और पुत्रवधू पर अवश्य होगा। परगुराम उग्र हो गया और उसकी धारें ऐसे रहने लगीं मानो धपक रही हों और उनमें क्रोध का आवरण होते हुए भी वह अपनी बेचनी न छिपा सकती। लीलादेवी तो सिंहनों के समान अकल हा इधर से उधर चक्कर काटती रहीं।

राजगड पर चिता के काले मघ छा गए थे प्रत्येक के हृदय किसी नई किसी अपराध-भरी बात की अग्रका हो रही थी।

